सरहदी गांधी

खान अब्दुल गफ्फार खां

त्याग, बलिदान तथा नीतिनिष्ठ जीवन की
सचित्र, रोमाचकारी कहानी

•

प्यारेलाल

१९७०
सस्ता साहित्य मंडल
प्रकाशन

प्रकाशकीय

'मण्डल' ने वहुत-सी जीवनिया प्रकाशित की है। इन जीवनियो को पाठको ने वडा प्रेरणादायक पाया है। उनके नये सस्करणो की माग वरावर वनी रहती है।

हमे हर्ष है कि हमारे जीवनी-साहित्य मे एक नई कडी जुड रही है। खान अब्दुल गफ्फार खा से, जिन्हे 'सरहदी गाधी' के नाम से पुकारा जाता है, सारा देश परिचित है। भारत की आजादी की लडाई मे, इनका हिस्सा गाधीजी को छोड, हमारे देश के किसी भी महान नेता से कम नही है। इस संग्राम मे जितनी जेल-यातनाए इन्होने झेली है, उतनी और किसीको भी नही झेलनी पडी। यह गाधीजी के परम अनुयायी है और गाधीजी के आदर्शो मे इनकी गहरी निष्ठा है। इनका समूचा जीवन इन आदर्शो की अखण्ड साधना की एक गाथा है। त्याग और तपस्या इनका जीवन-मत्र है। अस्सी साल की अवस्था मे, तीस साल तक जेल-जीवन के कष्ट-सहन से जर्जरित हुए अपने शरीर पर तनिक भी दया किये विना जिस तरह चार मास इन्होने गाधीजी का सदेश जनता तक पहुचाने के लिए सारे भारत का भ्रमण किया है, वह अचम्भे मे डालनेवाली चीज है और गाधीजी के प्रति इनके असीम प्रेम का प्रमाण है।

यह जीवनी उन व्यक्ति के द्वारा लिखी गई है, जो दीर्घ काल से इनके निकटतम सम्पर्क मे रहे है। अत पुस्तक जहा प्रामाणिक है, वहा अत्यन्त रोचक और सजीव भी है। इसे पढकर पाठक अनुभव करता है कि मनुष्य के जीवन का ध्येय अपने और अपने परिवार के लिए ही जीना नही है, वल्कि खुदा की खलकत की सेवा द्वारा खुदा की खिदमत

मे तल्लीन हो जाना है।

पुस्तक के प्रथम चार भाग, अर्थात १ से लेकर ३२ तक के प्रकरण लेखक की अग्रेजी पुस्तक 'थ्रोन टू दि वुल्व्ज' (भेडियो के आगे डाल दिया) से अनूदित हैं। पाचवे भाग के अंतर्गत छ प्रकरण लेखक ने इस पुस्तक के लिए मूल हिन्दी मे लिखे हैं।

पुस्तक के अत मे बादशाह खान की कुछ अत्यत महत्वपूर्ण नई तक-रीरे उन्हींकी भाषा मे जोड दी गई है।

इस तरह से हिन्दी पाठको के लिए यह एक नई पुस्तक ही बन गई है। बहुत-से चित्र भी, जो लेखक ने स्वयं काबुल और जलालाबाद मे जाकर लिये थे, अब पहली बार इसमे दिये गए हैं।

हमारा पाठको से अनुरोध है कि वे इस जीवनी को केवल इतिहास की पुस्तक के रूप मे नहीं, बल्कि एक सहृदय-साधक की तप.साधना की कथा के रूप मे पढे।

—मंत्री

निवेदन

खानसाहब अब्दुल गफ्फार खा से मैं पिछली बार मिला था, उसके १९ साल बाद, जिनमे से उन्होने १५ साल जेल मे बिताये थे, जुलाई १९६५ मे मुझे उनसे मिलने का सौभाग्य ऐसी अनोखी परिस्थिति मे प्राप्त हुआ कि जिसकी कल्पना हममे से कोई भी नही कर सकता था। मैंने उस भेट और उनके साथ दस दिन के सहवास की कहानी दो जुदा-जुदा लेखमालाओ के रूप मे लिखी थी—एक लेखमाला कलकत्ता और दिल्ली के दैनिक' स्टेट्समैन' मे और दूसरी 'इलस्ट्रेटेड वीकली आफ इडिया' मे। हमारे देश की आम जनता के दिल मे बादशाह खान ने कितना घर कर लिया है, इसका अदाजा इसपर से होगा कि प्रकाशन के दो-तीन सप्ताह के भीतर ही मेरी इन दो लेखमालाओ का अनुवाद हमारी आठ प्रादेशिक भाषाओ, अर्थात् हिन्दी, उर्दू, गुजराती, मराठी, कन्नड, बगला, तेलुगु और मलयालम मे छप गया।

बादशाह खान ऐसी मिट्टी से बने है, जिनसे वीर पुरुष और शहीद बनते है। उनका नाम एक मोहिनी मत्र का असर रखता है। हमारे आजादी के अहिंसक सग्राम के इस निर्भीक योद्धा के प्रति, जिसके आत्मा को घोर-से-घोर दमन और कष्ट-सहन जरा-सा भी प्रभावित नही कर सका, हमारा विशेष धर्म है। हम उस वचन से बधे हुए है, जो हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने हम सबकी ओर से उन्हे दिया था। उस वचन की करुण कहानी पाठको को इन पन्नो मे मिलेगी।

राष्ट्रो के उत्थान और पतन का इतिहास अगर हमें कुछ भी सिखाता है, तो वह यह है कि जो लोग धर्म-युद्ध मे अडिग रहकर साथ देनेवाले अपने साथियो से विश्वास-घात करके किसी भी कारण उन्हे पटक देते है,

सकट आने पर उनका ससार भर मे कोई भी मित्र नही रहता। इतिहास मे उनका निशान तक मिट जाता है और उनके जाने पर न तो कोई एक भी आसू गिरानेवाला होता है और न कोई एक भी प्रशसा या सहानुभूति का शब्द बोलनेवाला। ईश्वर हमे इस दुर्गति से बचावे। नीति-धर्म का कानून अटल है। हम अतर्मुख हो और हमारी कर्त्तव्य-भावना जाग्रत हो, यही इस पुस्तक का ध्येय है। कही ऐसा न हो कि समय चला जाय और हम व्यर्थ हाथ मलते रह जाय।

लगभग ३५ वर्ष के निकट सपर्क और बादशाह खान से हाल ही की मेरी मुलाकात के आधार पर मै दावे से गाधीजी के शब्दो मे कह सकता हू कि दुनिया भले इधर-की-उधर हो जाय, पर ईश्वर-निष्ठ खुदा का यह बदा, जिसने खुदा की बदगी को अपना जीवन-सूत्र और श्रद्धा को उसका शिलाधार बनाया है, कभी अपने उन सिद्धातो या आदर्शो को नही बेचेगा, जिनके लिए उसने अपना जीवन अर्पण कर दिया है,। आखरी दम तक उनका ही अनुसरण करता रहेगा। वह भले ही टूट जाय मगर झुकेगा हरगिज नही। उसे अपने लिए कुछ भी नही चाहिए। वह न पद-अधिकार चाहता है और न पद-अधिकार की प्रतीक धन-दौलत या शान-शौकत। उसे चाहिए सिर्फ एक चीज—कि अपने पख्तून भाइयो की बिना किसी बधन के सेवा कर सके, जिससे वे लोग अपने जीवन का पूर्ण विकास कर सके। इतना कुछ सहन करने के बाद भी उन्होने अपने मन मे किसी के प्रति द्वेष-भाव को जगह नही दी। आज भी सब गई-गुजरी को छोडकर एक नया प्रकरण आरभ करने के लिए वह सब पक्षो को आमन्त्रित कर रहे है।

आम लोग अकसर पुरानी बाते बहुत जल्दी भूल जाया करते है। इन लोगो की खातिर और उस नई पीढी की खातिर, जिसने अपनी आखो से हमारे इतिहास के इस रोमाचक चित्र को नही देखा, सरहदी गाधी के पूर्ण जीवन की कहानी, उनकी अग्नि-परीक्षा, उनके पारसमणि

भूमिका

एक कौम की पहचान इसपर से होती है कि वह किस तरह अपने वीर पुरुषो का पूजन करती है। खान अब्दुल गफ्फार खा हमारी आजादी की जद्दोजहद मे हिस्सा लेनेवाले उन योद्धाओ मे से है कि जिनके हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनो अत्यन्त ऋणी हे। लेकिन वह केवल आजादी के सेनानी ही नही, इससे बढकर वह महात्मा गाधी के अहिंसा-मत्र के व्याख्याता है। जिस तरह उन्होने उसे अपनाया और विशाल क्षेत्र मे अमली जामा पहनाया है, उसकी बराबरी सारे जगत मे आज शायद कोई नही कर सकता। पठानो को अहिंसा का सिपाही बनाकर जो करिश्मा उन्होने दिखाया, उसने हमे अचम्भे मे डाल दिया। आज भी वह एक दत-कथा-सी लगती है। छियत्तर साल की उम्र मे वह उनके खुदाई खिदमतगारो के अस्त-व्यस्त कर दिये गए अहिंसक सगठन को नये सिरे से खडा करने मे फिर कमर कसके जुट गये है।

कलह ने आज दुनिया को बेहाल कर दिया है। घृणा और असहिष्णुता के बादल हमारे आसमान पर छाये हुए है। एटमी प्रलय का जो खतरा हमारे सामने आ खडा हुआ हे, उससे बचने का एक ही रास्ता है और वह यह है कि अहिंसा की ताकत को हम अपनाए। इस चीज को हम समझ ले तो खान अब्दुल गफ्फार खा का जो चित्र इन पन्नो मे पेश किया गया हे, वह मानव जाति के लिए अधेरी रात मे रोशनी के मीनार की तरह दिखाई देगा। वह एक खुदा के बन्दे हे—खुदा के लिए उनकी मोहब्बत मानवजाति, खासतौर पर खुदा की दीन, हीन, दरिद्र प्रजा की खिदमत की सूरत इख्तियार करती है। वह एक पक्के और परहेजगार मुसलमान है, जिनकी सर्व-धर्म-समानत्व की भावना, उनकी उदारता और सहिष्णुता

की गवाही देती है—वह इन पन्नो मे सादगी और सयम, आत्म-त्याग और चरित्र-शीलता के पुतले के रूप मे हमारे सामने आते है। उसके आगे अपने आप आदर-भाव से हमारा सिर झुकता है। धर्म-निरपेक्ष लोकतत्र, बराबरी और भाई-चारे के आदर्शों और आजाद जीवन-पद्धति मे उनकी निर्विकल्प आस्था के लिए सबकुछ कुरबान करने की उनकी तैयारी है। उनकी उदारता और असीम क्षमावृत्ति हमारे सामने एक ऐसी मिसाल पेश करती है कि जो हमारे और हमारे देश के लिए हर तरह से अनुकरणीय है।

नई दिल्ली,
१२ दिसम्बर, १९६६

जाकिर हुसैन

विषय-सूची

भाग १

अहिसा के अनन्य पुजारी

भाग २

महात्मा की छाया मे

भाग ३
गाधीजी के बाद

भाग ४
उन्नीस साल बाद

भाग ५
कालचक्र की घट-माल

परिशिष्ट

●

चित्र-सूची

७ अफगानिस्तान के प्रधानमत्री द्वारा स्वागत
"शाही मेहमानखाने मे उपसचिव को सपर्क अधिकारी का काम सौपा गया।" (पृष्ठ १०८-१०९)

८ काबुल के सरकारी अस्पताल मे
"रिहा तव किया, जव लगा कि अव तो मरने ही वाले हे।" (पृष्ठ ४०)
"विजली की किरण के इलाज से पाव जल गये।" (पृष्ठ १९१)

९ पठान-वच्चो के साथ
"मैं चाहता हू कि उनके कपडे अपने हाथो से धो डालू।" (११७-११८)

१० पख्तून महिलाओ के बीच
"हम आपके पख्तूनिस्तान के स्वप्न को सफल करेगी।" (पृष्ठ १९८)

११ अपने परिवार के साथ
(वीच की पक्ति के मध्य) वादशाह खान और (दाई ओर अत मे) उनकी लडकी तथा पुत्र-वधू। ऊपर खडे हुए (दाई ओर से) वादशाह खान के पुत्र—लाली गनी, और वली तथा दोनो ओर उनकी पुत्रिया (नीचे बैठे हुए) वादशाह खान के पोते-पोतिया

१२ दारुल अमान मे
"मुसा हुआ लम्वा कुरता, पाजामा। वही रूप, वही रीत।" (पृष्ठ १०७)

१३ दारुल-अमान मे मुलाकातियो के वीच
(नीचे वाई ओर से) पक्तियानी, वादशाह खान, अन्वार-उल-हक्क गरान (पीछे की पक्ति मे वाई ओर से) यूसफजई नग, (दाई ओर सवसे अन्तिम) शफीकसाहव (पृष्ठ १२७)

१४ कावुल-स्थित भारतीय दूतावास मे
(ऊपर, दाई ओर से अत मे) पी० एन० थापर (नीचे, वाई

ऐतिहासिक भाषण देने के लिए जाते हुए ।
(दाईं ओर राज्य सभा के अध्यक्ष—श्री गोपालस्वरूप पाठक (बाईं ओर) प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गाधी ।
"आपको जब मेरी जरूरत होगी, आप मुझे अपने बाजू मे पायेगे ।"
—बादशाह खान (पृष्ठ २८८)

२४ गाधी-जयती के दिन, राजघाट से लौटते हुए
(सबसे नीचे बाईं ओर से एक छोडकर) बाकर अली मिर्जा, बादशाह खान उनकी पौत्री जरीना, लेखक और ब्रजकृष्ण चादीवाला

२५ भारत से विदाई
"जो कहना-सुनना था, कह-सुन लिया । अब और भाषण देने की इच्छा नही ।"
—बादशाह खान

●

सरहदी गांधी

●

भाग एक

अहिंसा के अनन्य पुजारी

१

सरहदी गांधी कौन हैं ?

सरहदी गाधी कौन है ? उन्हे इस नाम से कैसे प्रसिद्धि मिली ? वह किन उसूलो के लिए जीते है ? उन्होने ऐसा क्या किया है कि उन्हे न सिर्फ हिन्दुस्तान की जनता, बल्कि सारी दुनिया के विचारक और ऊचे ख्यालवाले लोग भी श्रद्धा की दृष्टि से देखते है ? उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रात के लोगो ने अपने प्यारे नेता खान अब्दुल गफ्फार खान को 'सरहदी गाधी' नाम दिया है। उन्हे आमतौर से 'बादशाह खान' भी कहते है। उन्हे यह नाम इसलिए दिया गया है कि अपने पठान भाइयो को उन्होने अहिसा का सिद्धान्त सिखाया। पठानो को, जो दुनिया मे सबसे बढकर लडाकू माने जाते थे, उन्होने अहिसा का लासानी सिपाही बना दिया। गाधीजी की ही तरह वह शान-शौकत और प्रभुता से दूर रहते है और एक फकीर का-सा जीवन बिताते है। वह सच्चे मुसलमान है और सभी धर्मो का समान आदर करते है। मानवता के लिए उनका दिल छटपटाता रहता है। भगवान के सभी प्राणियो की सेवा ही उनका धर्म है।

सरहदी गाधी से पहले-पहल मेरा परिचय जून १९३१

मे हुआ। गाधीजी का तार पाकर वह बारडोली आये थे। स्टेशन पर रेलगाडी से उतरे तो हाथ मे सिर्फ एक झोला था, जिसमे बदलने के लिए एक जोडी कपडे और कुछ जरूरी कागज थे। उनके साथ न बिस्तर था, न सफर का किसी तरह का कोई और समान। यह भी नही कि वह शीघ्र लौट जाने के लिए आये हो, बल्कि जितने दिन गाधीजी चाहे, उतने दिन वहा रुकने के लिए आये थे। महात्माजी के हाथो मे अपने-आपको बिल्कुल सौप दिया था।

मुझे याद नही कि बात कैसे चली, पर कुछ मिनट की मुलाकात के बाद बादशाह खान उन लोगो की भर्त्सना करने लगे, जिन्होने इस्लाम को हूरो और गिलमो के रूप मे सीमित कर दिया था। उन्होने जोर देकर कहा कि इस्लाम के मानी है खुदा के आगे पूरा समर्पण और बिना जाति, धर्म या वर्ण का भेद किये खुदा के बदो की सेवा के द्वारा उसकी सेवा करना और सत्य तथा न्याय के लिए निरतर सघर्ष करना।

इसके बाद गाधीजी के परिवार के एक सदस्य की हैसियत से रहने के लिए १९३४ मे वह फिर आये। पहले वर्धा मे और बाद मे सेवाग्राम मे रहे। जब उन्हे काग्रेस की सदारत देने की बात उठी तो उन्होने कहा, "मै सारी जिन्दगी एक सिपाही रहा हू और सिपाही रहकर ही मरूगा।" और पद लेने से उन्होने इकार कर दिया।

वह हमारे साथ एक आश्रमवासी की तरह रहे। हमारे साथ बैठकर ही रोटी खाते और वहा के रसोडे मे जो भी सादा-सूखा खाना बनता, उसमे हिस्सा बटाते। शाम की

प्रार्थना-सभा मे वह गाधीजी के अनुरोध पर पाक कुरान से अक्सर कुछ आयते पढते और उनपर अपना भाष्य भी करते। कभी प्रार्थना-स्थान मे वह अपना चश्मा लाना भूल जाते तो गाधीजी से उनका चश्मा मागते। गाधीजी अपना चश्मा उतारकर उन्हे दे देते। इस तरह १६३७ के मध्य वह तक गाधीजी और श्री जमनालालजी बजाज के अतिथि रहे।

१६३६ मे करीब एक महीने से ऊपर हमे उनके सहवास का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उस साल गाधीजी खुदाई खिदमतगारो को अहिसा का सन्देश पूरी तरह समझाने उत्तर-पश्चिमी सीमान्तर प्रात गये थे। उस अपूर्व प्रवास का और गाधीजी का अपूर्व ढग से उन लोगो को अहिसा का सदेश सुनाने का विवरण मेरी किताब 'शाति-यात्रा' (ए पिलग्रिमेज फार पीस) मे दिया गया है। मैने इस यात्रा को अपूर्व इसलिए कहा कि अहिसा का सन्देश गाधीजी ने उन लोगो को सुनाया, जिनकी पूरी परम्परा उससे विपरीत थी। चार सप्ताह के इस निकटतम भावनात्मक सह-जीवन के बाद जब वह वापस गये, तब गाधीजी ने लिखा था कि "उन्हे विदा करते हुए हमारी आखे गीली हो आई थी।"

कम ही लोग शायद यह जानते होगे कि हमारे स्वर्गीय प्रधानमत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के कार्यक्रम मे ताशकद से लौटते हुए काबुल रुककर सरहदी गाधी से मिलने की बात थी। जब भारत पर पाकिस्तान के साथ युद्ध के बादल छा रहे थे, तब हमारी केन्द्रीय सरकार ने सरहदी गांधी को भारत मे आकर एक सम्माननीय अतिथि के रूप मे ठहरने का

निमत्रण दिया था।

यह कैसे हुआ कि जो एशिया का सबसे बडा जीवित पुरुष है, जिसे महात्माजी इतना प्यार करते थे, जिसे हमारे स्वर्गीय प्रधानमत्री इतनी इज्जत देते थे और जिसे उनके मजहब के लोगो ने अपने दिलो का राजा बनाकर बादशाह खान की उपाधि दी, वही आज जलावतन होकर बैठा है ? यह एक बडी रोमाचक कथा है, जिसकी परिणति अभी होनी बाकी है।

इस गाथा को पूरी तरह समझने के लिए भारत के इतिहास के साथ उस प्रदेश के लम्बे सपर्क को जानना जरूरी है, जहा अब भी पठान रहते है। इतिहास के उप काल से उस सूबे का सास्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक सबध हमारे साथ रहा है। जिस भौगोलिक स्थिति के कारण वह एक ऐसा द्वार बना, जिसमे एक के बाद एक प्रवासियो और आक्रमणकारियो की लहरे उत्तर-पश्चिम से आई और जिसके परिणामस्वरूप यह विदेशी आगन्तुको की छावनी बना और सदियो से पठानो की नसो मे अराजकता भर गई, इन भौगोलिक विशेषताओ ने पठानो के स्वभाव पर अपनी गहरी छाप छोडी है, जिसका परिचय अकड, मस्ती, व्यक्तिवादिता और आजादी के प्यार के रूप मे मिलता है। उनकी अधीरता करीब-करीब अराजकता की सीमा तक जा पहुची, मगर सिपाही के नाते उनकी अनुपम बहादुरी और एक बार विश्वास पा लेने पर उनकी दृढ निष्ठा और वफादारी की जड भी इसीमे से हमे मिलेगी।

हाल ही मे उनकी इस गाथा पर गहरा रग चढा ब्रिटिश

राज्य में अपनाई गई उत्तर-पश्चिम सीमा-प्रांत की नीति से। पहले तो अंग्रेजों ने इसे अपनी साम्राज्यवादी कूटनीति का एक पासा बनाया और बाद में भारतीय राष्ट्रीयता के जिसे वे हिन्दू कहते थे खिलाफ एक बाट। आधी सदी तक वे इसी कल्पित सरहदी खतरे का जमकर प्रचार करते रहे भारत के उदार राजनीतिज्ञों को डराने के लिए। आखिर दादाभाई नौरोजी ने अंग्रेजों के खड़े किये हौवे का पर्दाफाश किया और महात्माजी ने अन्तिम रूप से उनका भण्डाफोड़ किया।

जैसे उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रांत में राष्ट्रीय भावना जोर पकड़ती गई वैसे पठान भारत की आजादी की जंग में और भी ज्यादा दिलचस्पी लेने लगे। इसके साथ वे इस तरह गुथ गये कि सीमा-प्रांत उस जंग का हरावल ही बन गया। इन सबको पूरी तरह समझने के लिए, पठानों की जो अपमान का बदला अपमान से और जान लेने का बदला जान से लेने को ही सबसे बड़ा पुण्य धर्म और एक अनिवार्य कर्तव्य समझते थे, भौगोलिक सांस्कृतिक, ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि तथा उनके सामाजिक संगठन और कबायली रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं का पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए, तभी हम उनकी इस कहानी को भली भांति समझ सकेंगे।

पठानिस्तान और वहां के निवासी

पाकिस्तान वनने से पहले यह सूबा उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रात कहलाता था। इसके उत्तर मे हिन्दूकुश पर्वत-माला, दक्षिण मे बलोचिस्तान और पजाब का डेरा गाजीखान जिला, पूरब मे काश्मीर और पजाव तथा पच्छिम मे अफगानिस्तान है। इसमे हजारा, पेशावर, कोहाट, बन्नू, मर्दान और डेरा इस्माइल खान के छ जिले थे। इसके अलावा वे हिस्से भी शामिल थे, जिनमे कवायली लोग या आजाद इलाके के पठान रहते थे, जिन्होने ब्रिटिश हुकूमत का एक सदी तक मुकाबला किया। शासन की सुविधा के लिए वह आजाद हिस्सा पाच राजनैतिक एजेसियो मे बटा हुआ था—मालाकद, कुर्रम, खैबर, उत्तरी वजीरिस्तान और दक्षिणी वजीरिस्तान।

इस सरहदी सूबे को विरोधाभासो का प्रदेश कहा जाता रहा। यहा की आबहवा का यह हाल है कि एक ओर डेराजात की तेज धूप और बेहद गर्मी, तो दूसरी ओर हजारा की चीड के पेडो और बर्फानी चोटियोवाली पहाडिया। यही फर्क यहा के प्राकृतिक दृश्यो मे नजर आता है। सुन्दर दृश्यो वाली पहाडियो के उत्तर मे घने जगल है, जहा ऊपर सीढी की तरह चढती हुई जमीन की सुहावनी पट्टियो पर खेती होती है। चारो तरफ गन्ने और मक्का के हरे-भरे लहलहाते खेत है और वीच-बीच मे सबसे उत्तम किस्म के रसीले फलो से लदे

वगीचे। इनमे आडू, आलूबुखारे, सेव, अखरोट, खुमानी, नाशपाती, अगूर, माल्टे और अनार है। दक्षिण मे नमक के पहाडो के साथ-साथ रेगिस्तान है और लक्की तथा मरवात का सूखा वियावान मैदान है, जहा न कोई वृक्ष और न घास का एक पत्ता दिखाई देता है। उसके दोनो ओर वजीरिस्तान की उदास पहाडिया है। यही भेद यहा के लोगो मे भी देखने को मिलता है। एक ओर प्रकृति की अपार उदारता और दूसरी ओर जनता की वेहद गरीवी।

इस उत्तर-पश्चिमी प्रदेश के मूल निवासी पठान है। इनकी भाषा पश्तो या पुख्तो है। यह सस्कृत से ही निकली है। इसका अपना एक शानदार विकसित साहित्य है, जिसमे रहस्यवादी और राष्ट्रीय कविता भी अच्छी-खासी लिखी गई है। इसके दो कवि वीर रस के खुशाल खट्टक (१६३० से १६६० ई०) और रहस्यवादी अब्दुल रहमान वावा विशेष प्रसिद्ध है। पठान अपनी भाषा के बडे प्रेमी होते है। कोई उनकी भाषा मे उनसे वात करे तो वे वहुत खुश होते है।

पठान शब्द की कोई जातीय विशिष्टता नही है। पठान देश के रहनेवाले किसी भी कबीले को, जो पश्तो-पुख्तो बोलता है, पठान कहा जाता है। इस तरह सरहदी सूबे के पश्तो बोलनेवाले हिन्दू और सिक्ख भी पठान कहलाते है। सरहदी सूबे के सीमावासी पठान उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तीय बन्नो के जिलो मे रहनेवाले कबायलियो से कही अधिक मजबूत और तगडे होते है। कबायली हिस्सा सरहदी सूबा और डयूरेंड लाइन के बीच का पहाडी इलाका है। यहा रहने-

वाले कबीलो मे अफरीदी, मोहमद, वजीरी और महसूद ये चार मुख्य है।

ब्रिटिश शासन-काल मे कबीलो का आन्तरिक शासन मलिको (कबायली मुखियो) के द्वारा जिरगा-पद्धति से होता था। 'जिरगा' का मतलब है बुजुर्गो की पचायत। कबीला जितना अधिक जनतान्त्रिक हो, उतना ही बडा उसका जिरगा होता है। पूरे जिरगे का मतलब है ऐसी पचायती सभा, जिसमे एक बालिग पुरुप शामिल हो। कबायली जिरगा एजेसी इलाके मे नये अग्रेज अफसरो को कूटनीति की शिक्षा देने का सर्वोत्तम स्कूल माना जाता था।

अग्रेजो ने सरहद की सुरक्षा के लिए जहातक हो सका, समूचे सरहद के पहरे और कम महत्व की घाटियो की गश्त का काम खस्सादारो (स्थानीय कबीलो) की निगरानी मे दे दिया और इस क्षेत्र मे शाति वनाये रखने के लिए कबायलियो और मलिको को खासा भत्ता भी दिया। पर यथार्थ मे इस तरह के भत्ते घूस या प्रलोभन ही थे, जैसाकि डेवीस, ब्रूस और सर माइकेल ओड्वायर जैसे ब्रिटिश साम्राज्यवादियो ने स्वीकार भी किया है।

अफगानिस्तान बलोचिस्तान और सरहदी सूबा किसी जमाने मे मुस्लिम आबादी के बीच मे हिन्दू सिखो के उपनिवेश थे। इन बस्तियो की २४-२५ लाख की आबादी मे ये लोग करीब दो लाख थे। लेकिन भारत के सीमा-प्रदेश का सारा व्यापार करीब-करीब इन्हीके हाथो मे था। सच बात यह थी कि इनकी मौजूदगी वहा के आर्थिक जीवन को चलाने

के लिए अनिवार्य थी। ये ही साहूकार, सूदखोर, दलाल और सुनार थे। हर देहात मे ये दुकानदार, गल्ले के व्यापारी और बजाज के रूप मे पाये जाते थे। स्वतन्त्र प्रदेशो मे इनका कबायलियो से सबध सर्वाश मे शातिपूर्ण था। पाकिस्तान बनने के बाद सहरदी सूबे मे इनका एक तरह से खातमा हो गया, मगर अफगानिस्तान मे इनकी बस्तिया अब भी है।

यह सरहदी सूबा ब्रिटिश साम्राज्यवादी कूटनीटि मे अपना विशेष महत्व रखता था। अग्रेज शासको के लिए यह स्वतन्त्र किन्तु निर्जन इलाका अपनी सेनाओ को चुस्त-दुरुस्त रखने के लिए ट्रेनिग के काम आता था। इसके लिए सीमा-सघर्ष और कबायली प्रदेशो में हमले मानो जरूरी अभ्यास थे। तरुण और महत्वाकाक्षी सेनाधिकारी इसे अपने लिए आदर्श निजी शिकारगाह समझते थे, जहा कोई भी ऐरा-गैरा फौजी अनुभव प्राप्त करने के लिए बिना किसी अन्त-र्राष्ट्रीय नियन-कानून की परवा किये अभ्यास कर सकता था। ब्रिटिश सेनाधिकारी की ट्रेनिग तबतक अपूर्ण मानी जाती थी, जबतक कि वह इस प्रदेश मे सक्रिय सेवा का कुछ समय न बिताये। दूसरे शब्दो मे, सीमा-प्रदेश राजनैतिक विभाग की एक ऐसी सोने की लका थी, जिसमे औरो के लिए बन्द, किन्तु अपने लिए खुला जंगल था और हर बाहरी आदमी अनधिकार प्रवेश का अपराधी माना जाता था। यही नही, बल्कि जब युद्ध नही होता था तो शाति-काल मे ब्रिटिश अफसरो के लिए यह पराक्रम दिखाने का मैदान [illegible] जाता था।

*

ब्रिटिश राज मे राजनैतिक और सैनिक अफसरो का यह सुरक्षित स्थान परदे मे रखा जाता था, जिससे बाहर की दुनिया को इस सूबे के बारे मे कुछ भी पता न चले। औसत पश्चिम वालो की कल्पना मे तो यह प्रदेश दुनिया मे सबसे अधिक कत्लो की भयानक जगह थी—डाइनो की एक ऐसी उबलती कढाई, जहा कोई-न-कोई अनिष्ट हमेशा आता ही रहता था और यहा का लूट-पाट करनेवाला पठान एक ऐसा व्यक्ति या लुटेरा था, जिसका शुगल था खूनी इतकाम और हमले तावान के लिए लोगो को उठाकर ले जाना, और डाके डालना जिसका पेशा था। उसक्त गर्वीले व्यक्तित्व और सधी हुई चाल, उसकी सैनिक प्रवृत्ति और आजाद तबीयत, उसकी साफगोई और आमोद-प्रियता, नियत्रण के प्रति नफरत, हुब्बेवतनी और कमाल की सहनशक्ति आदि गुणो की जान-बूझ कर उपेक्षा की जाती थी। १६२० के अहिसक भारतीय स्वतत्रता-सग्राम ने दुनिया को दिखा दिया कि बहादुर पठान, लासानी गुरिल्ला सैनिक, पहाडी लडाई मे सबसे अच्छे अभ्यासी, अपनी सैनिक बहादुरी, शारीरिक सहनशक्ति, अचूक निशानेबाजी और शस्त्रो के प्रयोग की निपुणता के साथ-साथ अहिसक ढग की वीरता मे पहला दर्जा रखता है।

. ३

बुद्ध से ब्रिटिश राज तक

भारत के लम्बे इतिहास मे उत्तर-पश्चिम सरहदी सूबे का बडा महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। यहा जगह-जगह अशोक के शिलालेख और स्मारक बिखरे हुए है, जो बौद्ध काल की गौरव गाथा के साक्षी है। उसके मध्यान्ह मे वे अपने पूर्ण समृद्ध रूप मे वहा थे। कनिष्क के जमाने मे बौद्ध साम्राज्य की राजधानी पेशावर ही थी। यह साम्राज्य विघ्य से मध्य एशिया तक फैला था। तक्षशिला अपने जमाने मे पूर्व का सबसे बडा विश्वविद्यालय था, जो सुदूर पूर्व और पश्चिम से धर्म और ज्ञान की खोज करनेवाले तीर्थ-यात्रियो और विद्यार्थियो का आकर्षण-केन्द्र था। बाद मे जब ईसा की चौथी शताब्दी मे बिहार मे नालदा विश्वविद्यालय स्थापित हुआ, तो वहा इसी बौद्ध प्रदेश के अधिकाश छात्र आते थे। इस तरह वह तीन बडी सस्कृतियो—भारतीय, चीनी, और यूनानी रोमन—का सगम-स्थल बना। इसी सीमा प्रदेश मे भारत ने कला और धर्म का अपना सन्देश सुदूर पूर्व मे भेजा।

जिसे उत्तर-पश्चिम सीमा-प्रात कहा जाता था उसकी सबसे पहली झाकी हमे हिममडित हिन्दूकुश के पार से आर्यो के आगमन के रूप मे मिलती है। ईसा-पूर्व ३००० मे लिखे गये महाभारत मे कौरवो की माता गाधारी का नाम मिलता है, जो कि गाधार (पेशावर जिले) की रहनेवाली थी।

कौरव हस्तिनापुर (आधुनिक दिल्ली से ५० मील पूर्व) के राजा थे। सस्कृत के प्रसिद्ध वैयाकरण पाणिनी, जो शायद दुनिया के सबसे बडे वैयाकरण थे, इसी प्रदेश मे जनमे और बडे हुए थे। कहा जाता है कि पेशावर को परशुराम ने स्थापित किया था, जिनका उल्लेख रामायण मे है।

ईसा-पूर्व ३२६ मे यूनानियो ने सिकन्दर के नेतृत्व मे भारत मे प्रवेश किया और पेशावर घाटी को जीता, जो उस समय एक राजा के अधिकार मे थी। उसकी राजधानी पुष्करावती थी। यह स्थान काबुल नदी के किनारे बसा आधुनिक चारसद्दा है। चन्द्रगुप्त के राज्य ईसा पूर्व ३०० मे बौद्ध धर्म गाधार और पाखली (हजारा जिला) का प्रमुख धर्म बना। मौर्य साम्राज्य अशोक के सुद्धर्म प्रचारक राज्य मे परिणत हुआ। मनसेहरा के पास शाहबाजगढी मे पाये गए अशोक के शिलालेख मे यह उल्लेख है कि तक्षशिला उसके अधीन एक प्रदेश था।

अरब भारत मे करीव ७१० ईस्वी मे आये और उन्होने पेशावर तथा सिन्धु नदी के पश्चिम के मैदान पर कब्जा किया। बाद मे महमूद गजनी के हमले हुए। इसके बाद गुलाम, खिलजी और तुगलक राजवशो के जमाने से लेकर अकबर द्वारा प्रतिष्ठित राज्य तक इस सूबे मे निरतर अराजकता, कुशासन और अव्यवस्था का दौर आया और उसने जड ही पकड ली।

अकबर के सुव्यवस्थित और सहिष्णु राज्य-काल मे, पूर्वी बलोचिस्तान और कन्दहार के किले उत्तर के हिस्से मे जोड

लिये गए और औरंगजेब के राज के बाद तक मुगल साम्राज्य का हिस्सा बने रहे। बाद मे महाराजा रणजीतसिह ने अफगानो को उत्तर-पश्चिमी सरहद से बाहर ठेल दिया। १८२० तक उन्होने पेशावर, बन्नू, कोहाट और डेराजात के हिस्सो पर भी कब्जा कर लिया। पर महाराजा रणजीतसिह की मृत्यु के बाद उनके राज मे अराजकता मची। १६ दिसम्बर, १८४६ की सधि के अनुसार महाराजा रणजीतसिह के राज्य का शासन एक रीजेन्सी कौसिल को सौपा गया और उसमे यह उपनियम जोडा गया कि गवर्नर जनरल द्वारा कुशल सहायको के साथ एक ब्रिटिश अफसर लाहौर मे नियुक्त किया जायगा, जो राज्य के हर विभाग के सब मामलो को निर्देशित और नियन्त्रित करेगा। १८४७ के बडे दिनो मे मेजर एडवर्ड्स को हुक्म दिया गया कि वह बन्नू जगली घाटी को खालसा दीवाना के अधीन कर ले, क्योकि बन्नू जिले के बाशिन्दो ने लगान नही दिया है। बाद मे जो कुछ हुआ, उसका वर्णन इस प्रकार है

"उस घाटी को गोले-गोली मे नही, बल्कि दो जमानो और दो धर्मो को एक-दूसरे के खिलाफ खडा करके काबू मे किया गया। सिख सेना के डर मे दो बहादुर और स्वतन्त्र मुस्लिम कबीलो ने मेरे हुक्म पर उस सूबे के शक्ति-केन्द्र चारसौ किलो को जमीदोज कर दिया और उन्ही मुस्लिम कबीलो के डर से सिख सेना ने मेरे हुक्म पर ब्रिटिश राज के लिए एक किला तैयार किया।"

यो इस घाटी पर पूरा अधिकार प्राप्त कर लिया गया।

इस तरह से ये जगली लोग शातिपूर्वक सभ्यता के दायरे मे लाये गए। एक नेकनीयत अग्रेज ने बिना किसी झगडे-टटे के तीन महीनो के भीतर यह विजय कर दिखाई, जो कि कट्टर सिख तलवार और वन्दूको से पच्चीस वर्ष मे भी प्राप्त नही कर सके थे।

आगे चलकर भारत मे 'फूट डालो और राज करो' की ब्रिटिश नीति का वही स्वरूप वन गया।

४

साम्राज्यवादी हथकंडे का एक दांव

लार्ड डलहौजी के पजाव पर कानूनी कब्जे से, ब्रिटिश भारत को कई स्वतत्र और लडाकू पठान कबीलो के सीधे सम्पर्क मे लाकर १८४६ मे उत्तर-पश्चिमी सूबे के प्रातो को हथियाने से और इस तरह तथाकथित कबायली प्रदेश पर अधिकार कर लेने से, सरहदी-नीति का एक नया दौर शुरू हुआ। उसके अलग-अलग कालखडो मे शासक-वशो की स्वतत्रता कायम रखने की नीति भी रही, जबतक कि वे इग्लैड से दोस्ताना सबध रखे और दूसरी बराबरी की ताकतो के, खास तौर से रूस के, प्रभाव से मुक्त रहे।

१८६४ मे रूसियो ने खीवा की ओर मोर्चा वढाया। १८६५ मे यारकन्द को जीत लिया तथा १८६७ मे बुखारा एक मातहत प्रान्त की स्थिति मे कर लिया। फिर १८७३

मे खीवा को भी इसी रूप मे ले आये। ये बाते ब्रिटिश सरकार को उसके सुदूरपूर्वी कब्जे पर एक निश्चित खतरा जान पडी। नतीजा यह हुआ कि सरहद से चिपके रहने की और हिदुस्तान को उस वक्त की सीमारेखा पर किसी विदेशी हमले से बचाने की नीति बदलकर १८७८ मे अफगानिस्तान और अग्रेजो की हुकूमत जिन हिस्सो मे थी, उन सबको हमेशा के लिए कब्जे मे रखने की 'अगले मोर्चे' की नीति अपनाई गई। इसी नीति के अनुसार गिलगित में एक ब्रिटिश एजेंसी स्थापित हुई। उसके बाद काबुल पर युद्ध की घोषणा और हमला किया गया (दूसरा अफगान-युद्ध)। १८८० मे गडामाक की सधि के अनुसार काबुल के अमीर ने काबुल मे ब्रिटिश रेजीडेट को रखना कबूल किया, अग्रेजो को कन्दहार के पुराने उपप्रदेश का पूर्वी हिस्सा दे दिया और उसीके साथ दर्रो पर भी कब्जा करने दिया। नई सीमा-रेखा, जिसे ड्यूरैन्ड लाइन कहा जाता है, १८९४ मे निश्चित की गई। सुलेमान पहाडियो के शिखरो के सहारे, इस तरह, खैबर, मोहमद, तीरा, कुर्रम और वजीरिस्तान की कवायली जमातो को ब्रिटिश प्रभाव-क्षेत्र मे लाया गया।

१९०१ मे हजारा, पेशावर, कोहाट, बन्नू और डेरा इस्माइलखान ये पाच जिले और पाच एजेंसिया पजाब से अलग की गई और लार्ड कर्जन ने एक अलग उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्त बनाया। १९१९-२० के माट-फोर्ड सुधारो की योजना से यह सरहदी सूबा यह कहकर अलग रखा गया कि सैनिक नीति और राजनैतिक कारणो से ऐसा किया जा रहा है।

नतीजा यह हुआ कि बाकी हिन्दुस्तान से, जिसमे पजाब का वह मूल प्रात भी शामिल था, जिसमे से यह सरहदी सूबा तोड-कर अलग किया गया था, अलग-थलग-सा हो गया। अन्य सब प्रदेश तो सुधारो के अनुसार कौसिल बनाकर स्वशासन की एक व्यवस्था मे लाये गए, परन्तु सरहदी सूबे को मिला एक चीफ कमिश्नर का एकतत्र राज। उसपर भी तुर्रा यह कि १९०२ के तीन जरायमी कानून इसपर लादे गये, जिनसे यहा के नागरिको को कानूनी रक्षा के मामूली अधिकार से भी वचित कर दिया गया। इससे पैदा हुए असतोष के कारण, १९३१ मे हुई दूसरी गोलमेज परिषद् के बाद इस सूबे को गवर्नर के प्रान्त के दर्जे तक उठाया गया और इसपर भारत के अन्य प्रान्तो मे प्रचलित सविधान लागू किया गया।

अफगानिस्तान से मडामाक की सधि के अन्तर्गत और सरहदी कबायलियो के साथ राजनैतिक समझौते (बल-प्रयोग का दूसरा नाम) के नाम पर ब्रिटिश सरकार ने अपने लिए दर्रों पर मिल्कियत हासिल कर ली थी। इसमे एक तो खैबर और दूसरा कुर्रम से रास्ता था। इसका नतीजा यह हुआ कि कबायली क्षेत्र मे धीरे-धीरे घुसने का मौका मिला। उससे कबायलियो को पक्की सडके और सैनिक महत्व की रेल के वरदान मिले, जोकि उनके आर्थिक और राजनैतिक पिछडे-पन से मेल नही खाते थे। ये रास्ते पश्चिम के किसी भी सुसस्कृत प्रदेश की ईर्ष्या के पात्र बन सकते थे। सैनिक महत्व के रेलपथ, विशेषत बस्ती के सूबो से परे के रेलपथ जो

पहाडिया खोदकर और पर्वतो के किनारे बनाये गए अग्रेजो के इजीनियरिग कौशल की गवाही देते है। परतु उन आजाद तबीयत कबालियो पर उनका कोई असर नही पडा। वे अज्ञानी हो सकते थे, पर निर्बुद्धि नही। उन्हे इन रास्तो और मकानो के बनने में अपनी पराधीनता के प्रतीक और साधन दिखाई दिये। इसीलिए ब्रिटिश सरकार द्वारा सैनिक नीति के नाम पर हर इच जमीन पर होनेवाले कब्जे का उन्होने विरोध किया और कहा कि यह बिना बहाने का हमला है। उसका वही परिणाम हुआ, जो हमेशा होता है। सीमा पर कबायलियो ने हमले शुरू किये और अग्रेजो ने बदला लेने के लिए फौजी कार्रवाई शुरू की। पठानो ने इन हमलो को देशभक्ति का रूप दिया। कबीले का हर आदमी—मर्द, औरत और बच्चा—पेशावर या कोहाट मे खून और डकैती करनेवाले हर आदमी को अपना वीर पुरुष समझने लगा। वे सब कौमी आजादी के मुजाहिद माने जाने लगे। मेजर रूस कैपेल ने लिखा है कि वे सबकी सद्भावनाओ और प्रार्थनाओ के साथ विदा होते थे और "सफल हमले से लौटने पर सार्वजनिक हर्षोल्लास से उनका स्वागत किया जाता था।"

एक मिसाल ले। सन् १८९३ तक वजीरिस्तान भी बाकी आजाद हिस्से की तरह ब्रिटिश प्रभाव-क्षेत्र से परे था और अफगानिस्तान का भाग माना जाता था। ड्यूरैड-सधि के अनुसार अमीर अब्दुल रहमान खा ने उसपर अपना अधिकार छोड दिया। उन्नीसवी शती के आठवे दशक मे वहा हमले और अपराध बहुत कम थे। परतु ड्यूरैड रेखा

सीमाकन के समय वाना की आरक्षक सेना पर हमला हुआ। उसका नतीजा हुआ १८९४-९८ का अभियान। १९१२ तक एक भी रास्ता वजीरिस्तान प्रदेश मे पूरा नही बना था। थल से ईडक तक तोची क्षेत्र मे एक रास्ता नक्शे पर पहली बार १९१३-१४ मे बना। जब वजीरिस्तान में सैनिक महत्व की सडको की योजना हाथ मे ली गई, तब महसूद उठ खडे हुए और उनके खिलाफ सैनिक कार्रवाई की गई। १९१७ से १९२४ तक का समय महसूद-अभियान का, कब्जे और जो से सैनिक महत्व की सडके बनाने के कार्यक्रम का, रहा।

इसका नतीजा हुआ सीमावर्ती क्षेत्र मे हमलो की बढती हुई सख्या। नीचे की तालिका से सडक-निर्माण और हमलो के परस्पर सबधो का पता लगेगा

वर्ष	हमलो की सख्या	वर्ष	हमलो की सख्या
१९११-१२	७१	१९१८-१९	१८९
१९१२-१३	७७	१९१९-२०	६११
१९१३-१४	९३	१९२०-२१	३९१
१९१४-१५	१६५	१९२१-२२	१९४
१९१५-१६	३४५	१९२२-२३	१३१
१९१६-१७	३९२	१९२३-२४	६९
१९१७-१८	२२३		

रिश्वतो और हर दस मील की रेल या रास्ते के निर्माण के लिए फौजी चढाइयो पर जितना पैसा खर्च होता था, वह स्कूल, डाकघर, अस्पताल, डिस्पेसरी या रेलो के लिए उपयोगी

कामो से कही अधिक था। ये सुविधाएं सीमावर्त्ती लोगो के पास नही थी और सामान्यत एक दोस्ताना इमदाद की तरह सरहदी लोग उन्हे खुशी से अपनाते। मगर हुआ इससे उलटा। भारत की सेट्रल असेबली मे दिये गए एक वक्तव्य के अनुसार पजाब मे सिखो से राज लेने के बाद के कोई नव्वे वर्षो मे (१८४९-१९३८) अग्रेजो ने इन हिस्सो मे करीब ४०० करोड रुपये फौजी चढाइयो पर खर्च किये।

सत्तर साल तक यह क्रम चलता रहा। पर इन अनगिनत हमलो मे शामिल होने का—सर माइकेल ओडवायर के शब्दो में "आग लगाओ, मारो-काटो के मामले" का—नतीजा कुछ भी नही हुआ। सर माइकेल के ही शब्दो मे "इक्के-दुक्के कबीले या कबायलियो को थोडे समय चाहे दबाया गया, पर फिर उनकी मार-धाड को नही रोका जा सका।"

ब्रिटिश भारत की सरकार के सेना-विभाग के लिए तो यह मनमानी बात थी। भारत मे एकदम सब ओर से शोर हुआ कि देश के राजस्व की पूरी रकम का ६० फीसदी सिर्फ सैनिक खर्च मे व्यर्थ खर्च होता है। इस सैनिक खर्च मे छुटपुट सीमा-सघर्ष और कबायली प्रदेशो मे चलनेवाला अभियान तो एक सुविधाजनक बहाना था। लेकिन सरहदी सूबे की ब्रिटिश भारतीय प्रजा को इसकी कीमत चुकानी पड़ती थी। ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश भारतीय प्रजा के बीच कबायली कोई फर्क नही करते थे। कबायली हिसाब से यह प्रजा ही उनकी जमीन पर आक्रमण करने और उनके भाइयो का गला काटने के लिए सैनिक और पैसा देती थी और इस वजह

से मार-काट, लूट-पाट या लोगो को पकडकर ले जाना और रकम वसूल करना यह सव जायज लडाई का खेल था, जैसे पूर्वी देशो की एक कहावत है—"जव फौजे लडती है, तो पैरो के नीचे घास रौंदी जाती है।"

५

एक नया अध्याय

१६१६-२० मे भारत के इतिहास मे एक नया अध्याय शुरू हुआ। अग्रेजो के प्रथम युद्ध-प्रयत्न मे भारत ने खुलकर सहयोग दिया था। मगर विश्वयुद्ध की समाप्ति पर इनाम के रूप मे उसे मिला रौलट ऐक्ट। इस ऐक्ट से नागरिक अधिकारो पर ऐसा निरकुश प्रहार हुआ जैसा भारत मे पहले कभी नही देखा गया था। इसके परिणामस्वरूप जो महात्मा गाधी अब-तक ब्रिटिश साम्राज्य के सवसे वफादार नागरिक होने मे गर्व अनुभव करते थे, उन्होने अपनेको खुले तौर पर विद्रोही घोषित कर दिया। रौलट ऐक्ट के विरुद्ध उन्होने देशव्यापी सत्याग्रह शुरू किया, जो वाद मे अहिसक असहयोग आदोलन के रूप मे और व्यापक वना। यह अहिसक असहयोग-आदोलन तीन अन्यायो के खिलाफ था पजाव के मार्शल लॉ के भयानक अत्याचार, खिलाफत-सवधी वचन-भग और भारत को स्वराज्य के उसके जन्मसिद्ध अधिकार से वचित रखना। आदोलन के फलस्वरूप हिन्दू-मुसलमान, जो अग्रेजो की 'फूट

डालकर शासन करने' की साम्राज्यवादी नीति से एक-दूसरे से अलग हो रहे थे, एकदम एक हो गये। यह एक चमत्कार ही था। इससे ब्रिटिश शासक चिढ गये और हिल उठे। इसके बाद उनकी एक ही चिंता थी कि हिन्दू-मुसलमानो के कान उमेठकर उन्हे ऐसा पाठ पढाओ कि सदा के लिए भारत ब्रिटिश साम्राज्य के लिए सुरक्षित हो जाय। अबतक उनकी नीति सरहदी सूबे को रूसी आतक के खिलाफ एक गढ की तरह इस्तेमाल करने की थी। अब उनकी नीति बन गई उस सूबे को हिन्दू बहुसख्यक प्रदेशो के समान एक स्वायत्त मुस्लिम बहुसख्यक प्रात बनाना और साथ ही भारतीय राष्ट्रवाद की उमडती हुई बाढ के खिलाफ बाध की तरह इस्तेमाल करना। इसी उद्देश्य से चीफ कमिश्नर और राजनैतिक सेवा के सब जिम्मेदार अफसर सीधे शासित प्रदेशो के निवासियो के अधिकारो को कबायलियो को खुश रखने के लिए दबाये रखते थे।

असहयोग-आन्दोलन शेष भारत की तरह उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त मे १९१९-२२ मे फैला। उसके बाद देश के बडे हिस्से मे व्यापक साम्प्रदायिक तनाव बढा और दगे हुए। कही-कही यह साबित किया जा सकता है कि ये स्वत शुरू नही हुए, बल्कि जान-बूझकर उकसाये और बढाये गए। लेकिन इस तरह ब्रिटिश सरकार की नीति द्वारा देश के राजनैतिक शरीर मे साम्प्रदायिकता का जहर भर देने के बावजूद, उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त में राष्ट्रीय आन्दोलन १९३० मे पुन व्यापक रूप मे सामने आया।

तब भारतीय क्षितिज पर एक नया उपक्रम हुआ, और वह था पठानो का अहिसक रूप। १९३० के नमक-सत्याग्रह मे हजारो पठानो ने अदालतो, विदेशी कपडे की दूकानो और शराब की दूकानो के सामने शान्तिपूर्ण पिकेटिग मे भाग लिया। यह बिल्कुल नई बात थी, अत सीमाप्रान्त के इस अहिसक आन्दोलन को दबाने के लिए अधिकारियो ने भयानक यत्रणाओ के कदम उठाये। २३ अप्रैल को नेताओ के पकडे जाने पर पेशावर मे पठानो की शान्त भीड पर गोली भी चलाई गई। उस भीड मे हिन्दू और सिख भी थे। इस सम्बन्ध मे 'यग इडिया' मे छपे विवरण के कुछ अग यो है

"अग्रेज सिपाहियो की एक टुकडी उस जगह पहुची और भीड को, जिसमे कई स्त्रिया और बच्चे भी थे, कोई चेतावनी दिये बिना उसपर दनादन गोलिया चलाना शुरू कर दिया। जब आगे के लोग धराशायी हुए तो पीछे के आगे आये। उन्होने अपने सीने तानकर गोलियो का बहादुरी से सामना किया। कुछ लोगो पर गोलियो से इक्कीस-इक्कीस तक जख्म हुए, फिर भी सभी वहा कदम जमाये मजबूती से खडे रहे। जरा भी घबराये या डरे नही। एक सिख युवक तो एक सिपाही के आगे आकर खडा हो गया और कहा—'मारो गोली!' और सिपाही ने बेझिझक गोली मारकर उसे मौत के घाट उतार दिया। एक बूढी स्त्री अपने रिश्तेदारो और मित्रो को घायल देखकर आगे आई। उसे भी गोली मार दी गई और वह जख्मी होकर गिर पडी। एक बूढा, जिसकी गोद मे चार बरस का बच्चा था, इस वहशी कत्ले-आम को

बर्दाश्त नही कर सका। वह सिपाही के आगे आया। उसने कहा—'मुझे मारो।' उसकी भी बात मान ली गई और वह भी घायल होकर गिर पडा। भीड फिर भी सिपाहियो का सामना करती हुई वही खडी रही और बार-बार उसपर गोली चली, जबतक कि वहा चारो ओर घायलो और मुर्दो के ढेर नही लग गये। लाहौर के एक एग्लो-इडियन (अधगोरे) अखबार ने सरकारी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते हुए लिखा कि लोग एक के बाद एक गोली खाने के लिए आगे आये और जब जख्मी होकर गिर पडे, तो उन्हे घसीटकर पीछे ले जाया गया और दूसरे लोग गोली खाने के लिए आगे बढे। यह हालत ११ बजे से शाम के ५ बजे तक चलती रही। जब मुर्दो की सख्या बहुत ज्यादा हो गई, तो सरकारी एम्बूलेस गाडिया उन्हे उठा ले गई।"

एक काफी सीनियर मिलिटरी अफसर ने ब्रिटिश सपादित 'इडियन डेली मेल' के स्तभो मे इसका वर्णन यो किया

"आप मेरी बात पर यकीन करे कि अखबारो मे छपा है, उसमे कही ज्यादा देर तक गोलीकाण्ड हुआ। उन्हे ऐसा सबक पढाया कि वे कभी नही भूलेगे। हमारे साथी वहा उन बलवाइयो और नेताओ को गोली मे भूनते खडे रहे, जिन्हे पुलिस इशारे से बताती थी। यह मामला थोडी-सी बन्दूके दागने का नही था, यह तो गोलियो की अटूट बौछार थी।"

रायल गढवाल राइफल्स के युद्धक्षेत्र मे काम किये हुए गढवालियो के दो दस्ते उस निहत्थी भीड पर गोली चलाने का हुक्म मिलने पर इतने हिल गये कि उन्होने हुक्म मानने

से इन्कार कर दिया। उनका कोर्ट मार्शल किया गया और १० से १४ वर्ष की सजाए दी गई। गाधी-अर्विन-समझौते मे राजवन्दियो की जब रिहाई हुई, तो उनमे उन्हे शामिल नही किया गया, वल्कि उन्हे पूरी सजा भुगतनी पडी। उनमे से एक चन्द्रसिह अपनी सजा पूरी करके १९४२ मे गाधीजी के पास आया था और सेवाग्राम-आश्रम का सदस्य बनकर कुछ समय वहा रहा था।

६

'आदमियों में बादशाह'

पठानो मे ऐसा आश्चर्यजनक परिवर्तन लाने का श्रेय खान अब्दुल गफ्फार खान को था, जिनके बारे मे श्री सी०एफ० एड्र्यूज ने लिखा था, "ऊचाई और व्यक्तित्व की दृष्टि से आदमियो मे वह बादशाह है।" उन्होने महात्मा गाधी से स्वत सीखी अहिसा का पालन किया और अपने साथियो मे उस सिद्धान्त का प्रचार किया। उनके जीवन की कहानी उपन्यास की तरह दिलचस्प है। वह अपने मा-बाप की पाचवी सन्तान थे। १८९० मे मोहमदजई कबीले के खानो के रईस घराने मे उनका जन्म हुआ। उनके पिता खान बेहराम खान पेशावर जिले मे चारसद्दा तहसील (हस्त नगर) के उत्तमानजई गाव के प्रमुख खान थे। एडवर्ड मिशन हाई-स्कूल मे उनकी पढाई हुई, पर मैट्रिक नही कर सके और घर

पर ही रहे। उनके बडे भाई डा० खानसाहब जरूर उच्च चिकित्सा के अध्ययन के लिए इगलैड गये और पहले विश्वयुद्ध मे फ्रास में सेवा के बाद भारतीय मैडिकल सर्विस के सदस्य के रूप मे घर लौटे।

अब्दुल गफ्फार खा के दिल मे कुछ समय तक फौज मे जाकर सेवा करने की और सिपाही बनकर जीविकोपार्जन करने की इच्छा रही। पर यह विचार उन्होने उस समय छोड दिया जब उन्होने अपनी ही आखो के सामने फौज मे काम करनेवाले अपने एक दोस्त को निचले दर्जे के ब्रिटिश अफसर के हाथो बुरी तरह अपमानित होते देखा। बाद में वह अलीगढ मुस्लिम यूनीवर्सिटी मे पढने गये, पर एक साल बाद उनके पिता ने उन्हे वापस बुला लिया। पिता चाहते थे कि इजीनियरी सीखने के लिए वह इग्लैड जाय। इसके लिए सब तैयारिया भी हो गई थी। पी० एड ओ० जहाज से सफर भी पक्का कर दिया गया था। पर माता के प्रति भक्ति इजीनियर बनने की महत्वाकाक्षा से अधिक बलवती साबित हुई। मा बोली—'मेरा एक बेटा तो पहले चला ही गया है। अगर तुम भी चले जाओगे, तो क्या होगा?' जब वह उनसे विदा लेने के लिए गये, तो मां यह कह सिसककर रोने लगी। बेटे का दिल पिघल गया और विदेश मे पढाई की योजना खत्म हो गई।

१९११ में तुरगजई के हाजीसाहब के साथ, जिन्हे देश-भक्ति के कारण जीवन के अन्तिम दिनो मे कबायली प्रदेश मे स्वेच्छा से निर्वासित होना पड़ा था, खान अब्दुल गफ्फार खा

ने इस सूबे मे कई राष्ट्रीय शालाए चलाई। उन दिनो कट्टर मुल्ला लोग सरकारी शालाओ के खिलाफ आन्दोलन चला रहे थे। मगर उनके पास कोई विकल्प नही था। बादशाह खान ने उस आन्दोलन को बेकार होने से बचाया और उसे रचनात्मक दिशा मे मोडा। रेवरेड विग्रेम उस एडवर्ड मिशन स्कूल के प्रिसिपल थे, जहा खान साहब पढे थे और रेवरेड विग्रेम के भाई डा० विग्रेम एडवर्ड मिशन अस्पताल मे थे। इन दोनो के आदर्श ने उन्हे अपने लोगो की सेवा करने के लिए प्रेरित किया।

अपनी मा मे उन्होने गहरी धार्मिक भावना और भक्ति पाई थी और अपने पिता से उनकी सहज अहिसक वृत्ति। दोनो निरक्षर थे, परन्तु इस भौतिक दुनिया से अधिक दोनो को आध्यात्मिक दुनिया उन्हे प्यारी थी। खानसाहब ने बताया कि "नमाज के बाद मेरी मा अक्सर बिल्कुल शान्त और स्तब्ध प्रार्थना मे निमग्न बैठी रहती। पिता ने जिन्दगीभर मित्र तो बहुतेरे बनाये, पर शत्रु कोई नही। बदला लेने की बात वह कभी नही सोचते थे और उनका कुछ ऐसा विश्वास था कि ठगे जाने मे कोई अपमान नही है, ठगने मे जरूर है।" वह अपनी बात के पक्के और इतने सच्चे थे कि उनके दुश्मन भी उनपर अविश्वास नही करते थे। सरहद के लोग उनके शब्द को हुण्डी मानते थे। लोगो के हजूम आते और अपने बचे-खुचे पैसे उनके पास रहन रख जाते, पर रसीद नही मागते थे। अधिकारियो की खुशामद करने वह कभी नही गये। फिर भी बडे-से-बडा ब्रिटिश अफसर उन्हे 'चाचा' कहकर पुकारता

था और उन्हे नाखुश करने की हिम्मत नही करता था।

हाजीसाहब के भाग जाने के बाद, खान अब्दुल गफ्फार खा ने मोहमद और बाजौर प्रदेश की खूब यात्रा की। इस यात्रा का उद्देश्य यह पता लगाना था कि कबायलियो के बीच बसकर वह अपना सेवा-कार्य चला सकते है या नही। उपवास, ध्यान और प्रार्थना द्वारा उन्होने मार्ग-दर्शन चाहा, पर कोई प्रकाश नही मिला। अन्त मे शिक्षण और लोक-कल्याण के अपने पुराने क्षेत्र मे ही लौट आये। बाद मे जब रौलट ऐक्ट के विरुद्ध आन्दोलन चला, तो उन्होने अपने-आपको उसमे झौक दिया।

६ अप्रैल, १९१९ को उत्तमानजई में एक लाख से अधिक आदमियो की एक सभा हुई, जिसमे अब्दुल गफ्फार खा भी थे। उनके बेटे गनी के शब्दो मे "हस्तनगर के सीधेसादे खान एक बडी मस्जिद मे जमा हुए और कहा कि वह उनके बादशाह है। असिस्टेट कमिश्नर सिपाही और तोपखाना ले आये और सारे गाव को घेर लिया। उन्होने गाववालो के हथियार छीन लिये और उनपर ६४,००० रुपये जुर्माना किया। जुर्माने की वसूली तक तावान मे छ प्रतिष्ठित बूढे खानो को भी वे पकड ले गये।" इसके बाद खानसाहब के ७५ वरस के बूढे बाप खान बेहरामखा को डराया-धमकाया, जो उस समय तक अंग्रेजो के एक वफादार दोस्त थे। उनसे उन्होने कहा कि "तुम्हारे बादशाह को हम गोली से उडा देगे।" मगर वह डरे नही। इसपर उन्हे भी पकड लिया गया।

जिरगे के पास ले जाकर खानसाहब से पूछा गया, "क्या

तुम पठानो के बादशाह हो ?" जवाब मिला—"मै नही जानता, लेकिन इतना जानता हू कि मै कौम का खिदमतगार हू, और ये बिल (रौलट बिल) इस तरह चुपचाप बर्दाश्त नही कर सकता।" कोई मुकद्दमा नही चला, पर जिरगे ने हर तरह की धमकिया दी और तरह-तरह से जिरह की। मगर बादशाह खान अपनी बात पर अडे रहे।

इस तरह से बाप-बेटे दोनो की अग्नि-परीक्षा हुई। खान-साहब ने बताया, "मुझे हथकडी पहनाकर जेल ले गये और जबतक सजा काटता रहा, हथकडिया बराबर हाथो मे रही। मै आजकल हू, उससे दुगुना वजन तब मेरा था—२२० पौड। मेरे पैरो मे आ सके, ऐसी कोई बेडी नही थी। उन्हे खोजने पर बडी मुश्किल से एक बडी बेडी मिली, पर जब उन्होने वह पहनाई तो मेरे टखनो के ऊपर का हिस्सा लहू-लुहान हो गया। पर इससे अधिकारियो पर कोई असर नही हुआ। वे बोले कि मुझे इन बेडियो की बहुत जल्द आदत हो जायगी।"

खान बेहराम खा तीन महीने बाद छोड दिये गए। बादशाह खान को भी छ महीने से ज्यादा जेल मे नही रहना पडा, क्योकि उस समय के चीफ कमिश्नर जार्ज रूस केम्पल की नीति पठानो को राजी रखने की थी।

इसी बीच बडे भाई डा० खानसाहब लन्दन मे सेंट टामस होस्पिटल से एम० आर० सी० एस० डिग्री लेकर फ्रास के मोर्चे पर गये थे। उन्हे अपने बाप और बडे भाई के साथ क्या हो रहा था, इसका कुछ भी पता न था। उनके पास हिन्दुस्तान से

एक भी चिट्ठी नही पहुंच पाती थी। १९२० मे हिन्दुस्तान लौटने पर ही उन्हे सबकुछ मालूम हुआ, जिसे जानने के बाद उन्होने कमीशन से इस्तीफा दे दिया।

बादशाह खान नागपुर मे हुई १९२० की काग्रेस म शामिल हुए और खिलाफत-आन्दोलन मे भी उन्होने प्रमुख भाग लिया। वह एक बडी तादाद मे मुहाजरीनो (तीर्थयात्री निर्वासितो) का दल काबुल ले गये। उन्होने खिलाफत के अन्याय के विरोध मे यह यात्रा की और बडी मुसीबते उठाई। काबुल जाने और लौटने मे उन्हे अनगिनत कठिनाइयो का सामना करना पडा। बेहराम खा करीब नव्वे बरस के थे। उन्हे बडी मुश्किल से इस दल मे जाने से रोका गया। १९२१ मे बादशाह खान को ब्रिटिश अधिकारियो ने फिर पकडकर जेल मे डाला। उनका अपराध केवल यह था कि उन्होने राष्ट्रीय शालाए स्थापित की थी। मालकद, बाजौर और स्वात के आसपास के भागो से कबायली अपने बच्चे इन आजाद (राष्ट्रीय) स्कूलो मे भेजते थे।

"जब और किसीको कोई दिलचस्पी नही है, तो तुम्हारा लडका ही क्यो इन स्कूलो की स्थापना मे दिलचस्पी लेता है ?' चीफ कमिश्नर सर जॉन मर्फी के यह कहने पर पिता ने बेटे से पूछा।

बेटे ने जवाब दिया "अब्बाजान, अगर बाकी सब लोग नमाज पढना छोड दे, उनमे दिलचस्पी न ले, तो क्या आप मुझसे भी वही करने के लिए कहेगे ? क्या मै अपना मजहबी फर्ज छोड़ दू ? या आप कहेगे कि मुझे अपनी इबादत बन्-

बर करते रहना चाहिए और इस बात की चिन्ता नही करनी चाहिए कि उसके नतीजे क्या होते है ?"

पिता ने कहा, "बिल्कुल नही। मै तो यही कहूंगा कि तुम्हे अपना मजहबी फर्ज अदा करना चाहिए, बाकी लोग चाहे जो करे।"

"तो अब्बाजान कौमी तालीम का यह काम इसी तरह का काम है कि इसे छोडना मेरे लिए नमाज छोडने-जैसा है।"

पिता ने कहा, "मै समझ गया, तुम्हारी बात सही है।"

इस बार तीन साल की सख्त कैद की सजा उन्हे दी गई और जेल की जिन्दगी की सब मुसीबते उन्हे झेलनी पडी—काल-कोठरी, महीनो तक डडा-बेडी, चक्की पीसना वगैरा। उनका वजन ५५ पौड कम हो गया और उस मशक्कत की वजह से उन्हे मसूडो की बीमारी, कमर और घुटनो मे दर्द, और न जाने क्या-क्या बीमारियो ने उन्हे घेर लिया। फिर भी उन्होने एक आदर्श कैदी की तरह काम किया और जेल के अनुशासन का हँसते हुए पालन किया। जेल की सब तकलीफो को खुशी-खुशी झेला और कभी भी कोई रियायत नही मागी, न सिद्धान्तो पर समझौता ही किया। कुछ जेल-अधिकारी भी इस ऊचे सिद्धातवादी आदर्श बन्दी के दु ख देखकर दुखी हो जाते और उनपर जो कठिनाइया मशक्कती सजा की डाली जाती उन्हे कम करने की कोशिश करते, पर बादशाह खान यही कहते कि "कोई बात नही, मै उन्हे बर्दाश्त करूगा।"

जेल मे उन्होने भ्रष्टाचार के खिलाफ जिहाद शुरू

किया। एक कांस्टेबल ने, जो रिश्वतखोरी के बिना अपना गुजारा नही कर सकता था, अपनी नौकरी से इस्तीफा दे दिया। जेल के अधिकारी डर गये और उन्होने बादशाह खान को पजाब मे गुजरात की जेल मे भेज दिया। वहा अपनी दृढ प्रामाणिकता और जेल के अनुशासन को पूरी तरह मानने के कारण वह जेल के अपने आरामतलब साथियो के लिए एक मुसीबत बन गये। मगर वह चट्टान की तरह अडिग रहे, क्योकि उन्होने आयरिश देशभक्त टॉम क्लार्क की तरह अपने मन मे दृढ निश्चय कर लिया था कि "एक बार सिद्धान्त से गिर जाने से आदमी न केवल सत्य से गिर जाता है, बल्कि अपना स्वाभिमान भी खो बैठता है," जबकि जेल मे वही सत्याग्रही का सबसे मूल्यवान गुण है।

७

खुदाई खिदमतगार

गुजरात-जेल मे बदली होने पर बादशाह खान एक ज्यादा बडे समाज के सम्पर्क में आये। दूसरे धर्मो के ग्रन्थो को पढने का भी उन्हे मौका मिला। भगवद्गीता और सिखो के धर्मग्रथ का उन्होने विशेष अध्ययन किया। एक-दूसरे को अच्छी तरह समझने के लिए अपने हिन्दू सत्याग्रही कैदियो की सहायता से उन्होने गीता और कुरान की क्लासे भी शुरू कराई, पर कुछ समय बाद उन्हे बन्द करना पडा, क्योंकि

"मेरे सिवा गीता पढनेवाला और कोई नही था और कुरान पढनेवाला भी सिर्फ एक ही था।"

अपने बडे भाई डा० खानसाहब के विपरीत, जो अक्सर मजाक मे कहा करते थे कि 'मेरा भाई ही हम दोनो के लिए नमाज पढ लेता है,' बादशाह खान एक भी नमाज या रोजा नही छोडते थे। इसके साथ-साथ उनमे दृष्टिकोण की एक विरल उदारता थी। "मै अपने मजहब की ताकत सिर गिन-कर नही नापता," उन्होने एक बार महादेव देसाई से कहा था, "क्योकि अकीदत के क्या मानी, जबतक कि वह जिन्दगी मे नही झलके ? मेरा तो यह आन्तरिक विश्वास है कि इस्लाम के मानी है अमल, यकीन और मुहब्बत, जिनके बिना मुसलमान नाम बिलकुल झूठा शखनाद है। कुरान शरीफ मे बिलकुल साफ तौरपर लिखा है कि सिर्फ एक खुदा मे विश्वास रखकर और अच्छे काम करके ही आदमी निजात पा सकता है।"

एक अन्य अवसर पर उन्होने कहा, "मेरे खयाल मे हमारे सब झगडो की जड इस बात को न समझने मे है कि सभी धर्मो मे अपने अनुयायियो के लिए प्रेरणा की काफी गुजाइश है। कुरान शरीफ के अनुसार खुदा अपने रसूल और नबी सभी देशो और सभी लोगो के बीच भेजता है। वही उनके मसीहा बन जाते है और वे सब अहल-ए-किताब है। मै तो यहातक कहता हू कि सब मजहबो के मूल सिद्धात एक ही है। सिर्फ तफसील मे फर्क होता है, क्योकि हर मजहब जिस जमीन से पैदा होता है, उसकी रगोबू लेता है।"

१६२४ और १६२६ के बीच का समय आजादी की लडाई मे एक कडी कसौटी का वक्त था। साम्प्रदायिक भावनाए खूब उभरी और बहुतो ने अपना सतुलन खो दिया। मगर खान-बधुओ ने अपने पाव न उखडने दिये और जरा भी नही डगमगाये। गाधीजी का बताया सत्य और अहिसा का सदेश कबायलियो तक पहुचाने के लिए बादशाह खान ने उनके गावो और दुर्गम पहाडी बस्तियो की लगातार परिश्रम-पूर्वक लम्बी-लम्बी यात्राए की और उसके लिए जब १६३० का सघर्ष आया, तो वह और उनके भाई फिर उसमे कूद पडे।

यह अचरज की बात है कि इस सारे समय मे वह गाधी-जी से कभी नही मिले थे। १६३१ मे काग्रेस के कराची-अधिवेशन मे वह और उनके खुदाई खिदमतगार, जिनकी शोहरत उनसे पहले पहुच चुकी थी, पहली बार गाधीजी और देश के विभिन्न भागो मे फैले हुए अन्य कार्यकर्ताओ के सपर्क मे आये।

खुदाई खिदमतगार आदोलन शुरू-शुरू मे सामाजिक सुधार और आर्थिक विकास के लिए था। पठानो मे खुदा का डर पैदा कर अन्य सभी भयो से उन्हे मुक्त करके और उनके स्वाभिमान को जगाकर उन्हे परिश्रमी, मितव्ययी तथा स्वाव-लम्बी बनाना उनका उद्देश्य था। स्वयसेवको के इस छोटे-से सगठन को काग्रेस का कार्यक्रम कार्यान्वित करने के लिए पूरे राजनैतिक सगठन का रूप देने का निश्चय तो बादशाह खान ने १६२६ मे जाकर किया। खुदाई खिदमतगारो का

आदर्श तो जैसा कि उनके नाम से जाहिर है, ईश्वर के सच्चे सेवक बनना या दूसरे शब्दो मे कहे तो मनुष्यो की सेवा द्वारा ईश्वर की सेवा करना ही था। उन्हे नियमित रूप से कवायद कराई जाती थी और सेना की तरह लम्बे कूच भी कराये जाते थे। पर वे अपने साथ कोई हथियार नही रखते थे, लाठी तक नही। मनसा, वाचा, कर्मणा वे अहिसा के प्रतिज्ञाबद्ध थे। बिना किसी मुआवजे या इनाम के लालच के अपने साथियो की सेवा करना उनका कर्तव्य था। वे अपना व्यक्तिगत जीवन शुद्ध रखने और साम्प्रदायिकता से मुक्त रहने के लिए भी प्रतिज्ञाबद्ध थे। लाल कुर्ते को उन्होने अपनी वर्दी बनाया था, क्योंकि सफेद खद्दर के कुर्ते जल्दी मैले हो जाते थे और ईट जैसा लाल रग पेशावर जिले मे और उसके आसपास बहुत आसानी से मिल जाता था। खुदाई खिदमतगारोकी सख्या अप्रैल १९३० तक ५०० से ज्यादा नही थी, पर १९३८ मे यह एक लाख से अधिक हो गई थी।

८

परिवर्तन का चमत्कार

जनवरी १९३१ मे हुए गाधी-अर्विन-समझौते के बाद बादशाह खान जेल से रिहा कर दिये गए, पर ज्यादा दिन तक उन्हे आजादी का लाभ नही उठाने दिया गया।

खुदाई खिदमतगारो की यह खूबी थी कि गाधी-अर्विन-

समझौते पर उन्होने कभी अपनी विजय का दावा नही किया। बादशाह खान के भाई डा० खानसाहव इस सधि-काल मे एक वार पेशावर आये, तो उन्हे यह देखकर वडा अचरज हुआ कि क्वेटाकाण्ड के प्रसिद्धि-प्राप्त कर्नल सर रावर्ट सैण्डमैन के पुत्र कर्नल सैण्डमैन इस सधि से बहुत दुखी थे। अपनी अप्रसन्नता उन्होने छिपाई भी नही। डा० खानसाहव जन्मजात खिलाडी थे। कालेज मे जिस क्रिकेट-टीम के वह कप्तान थे, उसकी परपरा वह भूले नही थे। अत उन्होने उस सैनिक को दिलासा देते हुए कहा—"नही कर्नल सैण्डमैन, ऐसी बात नही है। हार जाने का खयाल आप अपने दिमाग से विल्कुल निकाल दे। सियासी जिन्दगी तो एक खेल है, जिसमे जीतने और हारनेवाले को क्रिकेट या फुटवाल की तरह हाथ मिलाने ही पडते है और इस मामले मे जीत का तो कोई सवाल ही नही है यह तो एक तरह का 'ड्रा' है, जिसमे न कोई जीतनेवाला है और न कोई हारनेवाला।" उन्हे विदा करते हुए कर्नल ने कहा, "खैर, हम एक-दूसरे को इतनी अच्छी तरह जानते है कि मै आशा करता हू, हमे कोई कार्रवाई करनी पडे, तो हमपर वदनीयती का आरोप नही किया जायगा।"

मगर अधिकाश अग्रेज अफसर गाधी-अर्विन-समझौते को अपनी हार ही मानते रहे थे और वे उसकी कसर निकालना चाहते थे। फलत उस समझौते के खिलाफ कई घटनाए हुई थी और खुदाई खिदमतगारो को भी चैन से नही वैठने दिया गया। २३ दिसम्वर को खान-वन्धुओ को चीफ कमिश्नर ने एक दरवार के लिए वुलाया। खुदाई खिदमतगारो के साथ

जिस तरह लगातार दमन से काम लिया जा रहा था, उसके विरोध मे उन्होने उस निमत्रण को अस्वीकार किया । फलत २४ दिसम्वर की रात को गाधीजी के दूसरी गोलमेज कान्फ्रेस से लौटने के ठीक पहले, परिवार के सभी प्रमुख सदस्यो के साथ उन्हे एक ग्रार्डिनेस के मातहत पकडकर ग्रनिश्चित काल तक जेल मे रहने के लिए सरहदी सूवे से वाहर भेज दिया गया ।

डेढ दशक तक वादशाह खान अग्रेजो से लडते रहे, पर इससे उनके दिल मे कोई द्वेप या कड्वाहट नही आई। १९३१ के गाधी-अर्विन-समझौते के समय रावर्ट वर्नेस की भेट मे उन्होने कहा था—'अग्रेजो ने मुझे जेल मे डाला है, लेकिन मै उनसे नफरत नही करता । मेरा ग्रान्दोलन सामाजिक ग्रौर राजनैतिक दोनो तरह का है । मै लाल कुर्तीवालो को अपने पडोसियो से प्रेम करना ग्रौर सच बोलना सिखाता हू । पठान योद्धा-जाति है, अहिसा के सन्देश को अपनाना उनके लिए आसान नही । मै उनको वही सिखाने की भरसक कोशिश कर रहा हू ।"

'दि नेकेड फकीर' नगा फकीर के लेखक राबर्ट ने अब्दुल गफ्फार खान के बारे मे अपनी डायरी मे उसी रात को यह लिखा—"ईसा मसीह की परपरागत तस्वीर के मूर्त्त रूप जैसे दीखनेवाले अब्दुल गफ्फार खान दयालु, सौम्य और प्यारे आदमी है । उन्हे और कुछ समझना वैसा ही होगा, जैसे वृद्ध जार्ज लैसबरी को खतरनाक क्रान्तिकारी समझना ।"

सन १९३० और १९३२ के दो सत्याग्रह-सघर्षो मे सरहदी

सूबे मे आतक और दमन का बोलबाला रहा। सत्याग्रहियो की खडी फसले जला दी गई। अनाज के जखीरो मे मिट्टी का तेल डालकर उन्हे नष्ट कर दिया गया और मकान जलाये गए। मार्शल लॉ, गोलीकाण्ड, लाठीचार्ज, अपमान और पाशविकता की ऐसी घटनाए हुई, जो कही भी नही जा सकती। जैसा कि एक अमरीकी प्रवासी ने कहा, "लाल कुर्तीवालो को बन्दूको से दागना वहा अग्रेज सैनिको का एक प्रिय खेल और मनोरजन ही बन गया था।" सत्याग्रहियो को नगा किया जाता और उन्हे ब्रिटिश सिपाहियो के घेरो मे दौडने के लिए कहा जाता। सिपाही उन्हे ठोकरे मारते और राइफल के कुदो और सगीनो से दौडते हुए सत्याग्रहियो को पीटते और कोचते थे। मकानो की छतो से उन्हे नीचे गिराया जाता, गन्दे पानी के गड्ढो मे डुबोया जाता और ऐसी बीभत्स हरकते उनके साथ की जाती कि कुछ लोग तो जन्मभर के लिए पगु हो जाते।

पठानो की एक गर्वीली और सवेदनशील कौम है, जो अपमान से मौत पसन्द करती है। खान-बधुओ के एक चचेरे भाई हाजीसाहब नवाज खान को घर की हालतो से मजबूर होकर अपनी आजादी के लिए जमानत देनी पडी किन्तु इससे उन्हे इतनी पीडा हुई कि अपनी कमजोरी के प्रायश्चित्त स्वरूप उन्होने अपने-आपको मार डाला। उनके मित्रो और रिश्ते-दारो ने वहुतेरा समझाया कि जमानत की शर्त भग कर वह फिर जेल मे जा सकते है, मगर उनकी समझ मे न आया और वह आत्महत्या करके ही रहे, जिसका कारण एक पुर्जे

मे उन्होने बताया कि उसके सवव पूरे परिवार पर जो कलक लगा है उसको सिर्फ मौत से ही धोया जा सकता है।

दूसरे प्रसिद्ध कार्यकर्ता सैयद अब्दुल वदूद वादशाह एक बडे धार्मिक नेता और मालकद कबायली इलाके के जमीदार थे, वह तीन साल से जेल मे थे। उनके बूढे अपग वाप बिल्कुल मौत के किनारे आ लगे, तो उन्होने मरने से पहले पुत्र को देखने के लिए उन्हे जमानत पर छुडवाया, पर पुत्र को यह अच्छा न लगा और जेल से बाहर आने पर शर्म के मारे अपनेको गोली मारकर जान दे दी।

सब कोई जानते है कि पठान कितने जल्दी गुस्सा हो जाते है। फील्डिग किग हाल के 'भारत मे तीस दिन' पुस्तक से पठानो की इस प्रसिद्ध गर्म-मिजाजी का उदाहरण दिया जा सकता है।

एक पठान बेठा हुआ रेडियो से कार्यक्रम सुन रहा था। इसपर उसका पडोसी वडबडाने लगा। पहले आदमी ने वोलनेवाले से कहा—चुप रहो। पर दूसरे आदमी ने कहा कि पहले उस बडबोले (रेडियो) को तो चुप कराओ। बस, रेडियो-प्रेमी ने उसी वक्त उसकी पसलियो मे चाकू घुसाकर उसे खत्म कर दिया।

फिर भी खुदाई खिदमतगारो के खिलाफ एक भी हिसा की मिसाल नही बताई जा सकी है। उनमे से कुछने जब देखा कि उनकी अहिसा टूटने के बिन्दु तक तानी जा रही है, तो खुदकुशी जरूर कर ली, पर हिसा पर उतारू नही हुए।

भाग दो

महात्मा की छाया में

१

दो गांधी

१६३४ मे खान-बन्धु फिर छोड दिये गए। परन्तु उन पर यह पाबन्दी लगा दी गई कि वे सरहदी सूबे और पजाब मे नही जा सकते। नवम्बर के अन्तिम सप्ताह मे बादशाह खान गाधीजी के साथ रहने के लिए वर्धा आये। उन्होने इगलैंड मे शिक्षा पा रही अपनी बेटी को भी बुला लिया और उसे महिला-आश्रम (वर्धा) मे मीराबहन (मिस स्लेड) की निगरानी मे रखा। मीराबहन एडमिरल स्लेड की बेटी थी, जो गाधीजी की जीवन-पद्धति को अपनाकर उनकी निष्ठावान अन्तेवासी बन गई थी। ७ दिसम्बर को बादशाह खान फिर पकडे गये। बम्बई मे यग क्रिश्चियन एसोसियेशन के आमत्रण पर उन्होने एक व्याख्यान दिया था। उसीपर उन्हे दो वर्ष के सपरिश्रम कारावास का दण्ड दिया गया।

१६३६ मे जेल से छूटने पर वह वर्धा मे सेठ जमनालाल बजाज के अतिथि बनकर रहे, पर अपना अधिकाश समय वह गाधीजी के साथ सेवाग्राम-आश्रम मे ही बिताते थे। स्थिति बदलने पर अपने सूबे को लौटने तक वही उनका घर बन गया। दोनो के लिए यह एक महान और मूल्यवान अवसर था। साथ-साथ रहते समय वे बहुत-सी हार्दिक बाते

कर सके, जब उन्होने अपने गहरे आन्तरिक अनुभवो का विनिमय किया। साम्प्रदायिक एकता की उत्कट इच्छा के कारण गाधीजी के लिए बादशाह खान सारी मुसलिम जाति के प्रतीक थे और बादशाह खान से अधिक सच्चा, श्रद्धा-वान तथा पारदर्शी प्रामाणिकतावाला या अधिक सहिष्णु मुसलमान उन्हे मिलता भी कहा! जहातक बादशाह खान का सबध है, गाधीजी के प्रति उनके नाम या यश ने या गाधी-जी के राजनैतिक कार्य ने उन्हे आकर्षित नही किया था। उनकी गाधीजी मे एकनिष्ठ श्रद्धा का रहस्य तो यह था कि उन्हे गाधीजी मे एक समान आत्मावाला व्यक्ति मिला, जो श्रद्धालु और प्रार्थनामय ही नही था, बल्कि जिसका जीवन पवित्र, वैराग्यपूर्ण और ईश्वरार्पित था—जिसने अपने-आप को पूरी तरह ईश्वर को सौप दिया था और छोटे-से-छोटे काम मे भी उसीकी इच्छा-पूर्त्ति की दृष्टि रखता था।

उन्होने एक बार कहा था, "मेरे जैसे किसी मुसलमान या पठान के लिए अहिसा का सिद्धान्त स्वीकार करना कोई अचरज की बात नही है। यह कोई नया सिद्धान्त नही। हजरत मुहम्मद ने १४०० साल पहले इसे माना था, जब वह मक्का मे थे, और तब से वे सब इसे मानते है, जो अन्याय का जुआ फेक देना चाहते है। पर हम इसे इतना भूल गये थे कि जब महात्माजी ने इसे हमारे सामने रखा, तो हमे लगा कि वह एक नया धर्म सिखा रहे है। हम लोगो मे से उन्हे ही इस बात का श्रेय है कि उन्होने एक भुलाये हुए सिद्धात को सबसे ले पुनर्जीवित किया और एक सकटग्रस्त देश के सामने

सकट से मुक्ति के लिए प्रस्तुत किया।"

एक अन्य अवसर पर बादशाह खान ने कहा, "जब-जब गाधीजी के जीवन मे कोई बडा सवाल उठता और गाधीजी कोई अहम फैसला करते, तब सहज ही मुझे ऐसा लगता कि यह निश्चय ऐसे आदमी का है, जिसने अपने को पूरी तरह ईश्वरार्पित कर दिया है और ईश्वर निश्चय ही कभी गलत रास्ता नही बतलाता।"

एक और मौके पर वह बोले, "उनके (गाधीजी के) निश्चयो पर शका करना मुझे कभी आसान नही जान पडा, क्योकि वह अपनी सब समस्याए ईश्वर को अर्पित करते है और उसीका हुक्म सुनते है। आखिर मेरे पास एक ही मान-दड है—वह है व्यक्ति के ईश्वरार्पित होने का।"

सन १९३७ मे काग्रेस ने भारत सरकार के १९३५ के शासन-विधान के अन्तर्गत प्रान्तो मे सरकार बनाने का निश्चय किया। खान-बधुओ पर अब भी अपने सूबे मे जाने पर पाबन्दी थी, इसलिए वे चुनाव मे भाग नही ले सके। पडित जवाहर-लाल नेहरू को भी सरहदी सूबे मे चुनाव का प्रचार करने नही जाने दिया गया जबकि भारत की मुस्लिम लीग के नेताओ को सब सुविधाए दी गई। खान-बधुओ और काग्रेस के खिलाफ सरकारी अफसरो ने खुले आम प्रचार किया। इन सबके बावजूद डा० खानसाहब को जबर्दस्त बहुमत मिला और वह अनुपस्थित होनेपर भी चुने गये।

निगाह मे जो खतरनाक समझे जाते थे वे वहा के हाकिम बन गये।

लेकिन बादशाह खान एक सच्चे फकीर की तरह न तो चुनाव के लिए खडे हुए, न उन्होने अपने भाई के मन्त्रिमण्डल मे कोई पद ही लिया। उन्हे पूरा विश्वास हो गया था कि गाधीजी द्वारा प्रचारित अहिसा को छोड और कोई रास्ता जनता को उठा नही सकता और न उसे पूरी नैतिक ऊचाई तक ले जा सकता है। इसलिए उन्होंने सेवा का कठिन और पथरीला मार्ग चुना।

· २ ·

शान्ति-यात्रा

सरहदी सूबे मे काग्रेस सरकार की शुरुआत ने एक विचित्र स्थिति पैदा करदी और उससे एक नई चुनौती सामने आ गई। अग्रेज अधिकारी—खासकर सेना और राजनैतिक विभाग के—उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त मे काग्रेस के सत्तारूढ होने की बात से खुश नही थे। सरहदी सूबे मे हुकूमत की जो द्वैध नीति उस समय जारी थी उसकी सहायता से उन्होने काग्रेस सरकार के खिलाफ कबायलियो को एक अदृश्य विरोधी शक्ति के रूप मे उभाडा। सविधान के अनुसार प्रान्तीय सरकार के प्रधान के नाते गवर्नर को अपने मन्त्रियो की सलाह से काम करना पडता था, पर कबायली इलाको के मामले मे

वह सीधे मात्र सम्राट के प्रतिनिधि वाइसराय के प्रति जिम्मेदार था और उन्हीसे सीधे सबध रखता था। फिर 'जिलों और कबायली इलाको के अपार्थक्य' सिद्धान्त के अतर्गत ऊचे सिविलियन अफसर जहा डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट अपने कर्तव्यो के लिए मत्रिमडल के प्रति उत्तरदायी थे, वहा कबायली इलाको के प्रशासक के नाते सीधे भारत-सरकार के राजनैतिक विभाग के प्रति उत्तरदायी थे। इस नाते विधान सभा या मत्रिमडल के बिना जाने और उनकी अनुमति के बिना, उनसे बिना पूछे बालाबाला वे जो चाहे कर सकते थे और करते थे।

राजनैतिक विभाग का प्रतिनिधित्व गवर्नर और सेना करते थे। इससे मत्रिमडल और राजनैतिक विभाग के बीच सबध बिगडने से सरकारी नौकरो मे ढीलापन और अनुशासनहीनता बढी। फलत सीमावर्ती इलाको मे हमले एकदम बढने लगे। अगले ही साल बन्नू, कोहाट और डेरा इस्माइल खा में जो हमले हुए थे, वे इसके प्रत्यक्ष प्रमाण थे।

जनता का काग्रेसी मत्रिमडल क्या करता? अग्रेजो ने ताकत का प्रयोग करके देखा था और वह कामयाब नही हुआ था। ब्रिटिश सरकार ने कबायलियो पर हवाई हमले भी किये थे। क्वेटा के प्रसिद्धि-प्राप्त सर राबर्ट सैण्डमैन ने कबायली मुखियो की मदद करके और उन्हे नैतिक और भौतिक लाभ पहुचाकर भीतर से कब्जा करने के लिए शान्तिपूर्ण अन्त प्रवेश की जो नीति (सैण्डमैन-पद्धति) अपनाई उसका प्रयोग करने से शायद उपलब्धिया हो सकती थी, पर उसमे बुराई के

बीज भी थे। यह तथ्य छोड भी दे कि एक पुरानी घिसी-पिटी सामती पद्धति को वह स्थिर करना चाहते थे, तो भी वस्तुत साम्राज्यवादी लूट-खसोट की पद्धति से वह अलग नही थी, क्योकि उसी पद्धति का वह एक अनुभाग थी। क्या ब्रिटेन ने धीरे-धीरे प्राय अदृश्य ढग से आज के बलोचिस्तान सूबे के सारे भूप्रदेश की पट्टी को नही हडप लिया था और गोमाल दर्रे को नही खोल दिया था, यद्यपि उन वजीरिस्तान की पहाडी-श्रेणियो के आगे पजाब के राजनीतिज्ञ बरसो तक बैठे ताकते रहे थे। डेवीस से लेकर अबतक सरहद के बारे मे लिखनेवाले हर लेखक ने पठान कबायलियो के जनतात्रिक रूप की और स्वतत्रता के लिए उनके गहरे प्रेम की चर्चा की है। उनकी बहुत दिनो से चाही गई आजादी के लिए सैण्डमैन-पद्धति को अगर वे एक खतरा मानते थे, तो उसमे आश्चर्य की क्या बात थी ?

बन्नू मिशन के डा० पेनल का साहस इससे भिन्न प्रकार का था। वह पठानो मे जाकर रहे। उनके जैसे कपडे पहने, बातचीत के लिए उनकी भाषा अपनाई और उनकी सेवा करते हुए ही अपने प्राणो का उत्सर्ग किया। सबसे खूख्वार पठान लोगो के बीच भी वह हमेशा बिना हथियार जाते। जब एक नये कमाडेट ने आग्रह किया कि वह अपने साथ एक रक्षक ले जाय, तो उन्होने उत्तर दिया कि इस तरह तो चारो तरफ से घेरा डालकर मार डाले जाना निश्चित है। उनके ऐसे तौर-तरीके के कारण ही ऐसा प्रभाव था कि अग्रेज लोग कहते थे, पेनल का होना दो रेजिमेटो के बराबर है।

पर डा० पेनल का साहस व्यक्तिगत था। वह इस सन्देह से परे नही थे कि लोगो के दिलो मे पैठकर वह उनका धर्मान्तर कराना चाहते थे और ब्रिटिश साम्राज्यवादी घुसपैठ के पाचवे दस्ते की तरह काम कर रहे थे। सन्त अग्रेज सी० एफ० एड्रयूज द्वारा सुन्दर रूप से रखा गया यह मूल प्रश्न अनुत्तरित ही रहा

"जो हिसक साधन आज सभ्यता को नष्ट कर रहे है, उनके आगे नैतिक विरोध का कोई स्थान है भी या नही ? क्या कोरिया, मचुकुओ या उत्तर-चीन मे जापानी आधिपत्य का सामना चीनी इसी तरह कर सकते थे ? इतालवी आक्रमण के विरोध मे इसका कोई स्थान था या नही ? क्या इसका प्रयोग स्पेन मे किया जा सकता था ? पाशविक बल से की गई सफलता को नैतिक पराजय के रूप मे वदला जा सके, इसके लिए विश्व-अन्तरात्मा को भला किस तरह जागृत किया जा सकता है ? क्या दुनिया मे ऐसी कोई नैतिक शक्ति है, जो अपने प्रभाव के लिए पशुवल से भिन्न आधार रखती हो ? और अत मे सवाल यह है कि क्या ऐसी नैतिक मान्यता भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा मे कबायलियो को शान्त करने के काम मे लाई जा सकती है ?"

बादशाह खान और उनके खुदाई खिदमतगारो ने इसका अशत उत्तर दिया था। गाधीजी ने निश्चय किया कि चले और खुद देखे कि क्या इसका पूरा जवाब मिल सकता है।

सितम्बर १९३८ के अन्त मे, म्युनिख-सन्धि के थोडे ही अरसे वाद, जिसमे चेम्बरलेन-सरकार ने सुडेटनलैड हिटलर

को देकर दूसरे महायुद्ध के लिए रास्ता बना दिया था, गाधी-जी ने उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रात की चार सप्ताह की यात्रा की। दक्षिण मे मानशेरा से डेरा इस्माइलखान तक और पश्चिमी सीमा पर हजारा से खूनी राजपथ या सहसा मृत्यु के चौक खैबर दर्रे तक दोनो गाधियो ने एकसाथ सफर किया। रमजान का महीना होने पर भी गाधीजी के बार-बार इसरार करने के बावजूद बादशाह खान ने न तो सफर मे कोई कोताही की, न उसके जोश को ही कम होने दिया। अपने मेहमान की बादशाह खान इतनी चिन्ता रखते थे कि एक बार उत्तमानजई मे जब गाधीजी उनके घर ठहरे हुए थे, तो गाधीजी की जानकारी के बिना उन्होने उस घर की छत पर सशस्त्र पहरेदार तैनात किये थे। जब गाधीजी को इसका पता चला, तो उन्होने कहा कि उनके अहिसा के सिद्धान्त के यह विरुद्ध है। बादशाह खान ने समझाया कि हथियार इस्ते-माल नही किये जाने है। वे तो सिर्फ शरारती लोगो को डराने के लिए है।

खानसाहब के तर्क मे जो गलती थी, वह बतलाने के लिए गाधीजी ने एक कहानी सुनाई। एक बार भगवान ने साप को बुलाया और कहा कि हम तुम्हारे विष के दात वापस लेते है। साप ने जवाब दिया—"बहुत अच्छा, पर कम-से-कम मुझमे फन उठाकर फुफकारने की ताकत तो रहने दीजिए।" भगवान ने कहा—"हा उतना तुम कर सकते हो। पर याद रखो, उसके लिए आदम की सतान तुम्हारा और तुम्हारे वश का नाश कर देगी। काटने की क्षमताविहीन

फुफकार ही तुम्हारे नाश का कारण बनेगी।"

साथ ही टीका करते हुए गाधीजी ने कहा था, "मतलब यह है कि ताकत का दिखावा भी एक तरह की हिसा है और उसे काम मे लानेवाले का वही अजाम होता है, जो हिसा करनेवाले के साथ होता है, बल्कि यह और भी बुरा है।"

इसपर पहरेदार तुरत हटा दिये गए और बिना हथियार-वाले रात के चौकीदार रखे गये। इसे गाधीजी को अनमने ढग से किसी तरह मानना ही पडा।

दस साल बाद जब खुद बादशाह खान के ऊपर विपत्ति के बादल मडराने लगे, उनके आदमियो ने उसी तरह उनकी हिफाजत करनी चाही, तब उन्होने किस तरह विरोध किया और अपने आदमियों को बताया कि महात्माजी ने उन्हे एक बार क्या कहा था, यह कहानी हम आगे सुनायेगे।

इस सफर मे खानसाहब ने गाधीजी से कहा था, "महात्माजी, मुझे सियासत से नफरत है। मै उसमे भाग जाना चाहता हू।"

इसी यात्रा मे एक दूसरे मौके पर उन्होने कहा था—"दूसरे सूबो का कुछ भी हो, पठानो के लिए तो अहिसा के सिवा मुक्ति का दूसरा कोई रास्ता ही नही है। हम लोग अग्रेजो से डरते थे। आपके आन्दोलन ने हममे जान डाल दी है। अब हम अगेजो से नही डरते, बल्कि अब अग्रेज हमारी अहिसा से डरते है। वे कहते है कि अहिसक पठान हिसक पठान से कही ज्यादा खतरनाक हैं।"

गाधीजी की सलाह से बनाई योजना के अनुसार बादशाह

खान ने सरदादयाव मे खुदाई खिदमतगारो के प्रशिक्षण का एक केन्द खोला। उनकी माग पर गाधीजी ने पहले मीरावहन (मिस स्लेड) को और वाद मे आश्रम की एक मुस्लिम वहन वीबी अमतुस्सलाम को, जो गाधीजी की वेटी तरह हो गई थी, वादशाह खान के शिक्षा और सामाजिक सुधार के काम मे मदद करने के लिए भेजा—खास तौर से मुसलमान स्त्रियो मे।

अगले साल गाधीजी फिर सीमाप्रात गये, पर इस वीच उनका स्वास्थ्य बहुत गिर गया था। जिलो मे वह नही जा पाये। खुदाई खिदमतगारो के केन्द्र मे भी वह नही जा सके। अत गाधीजी ने वादशाह खान के साथ पठान लोगो और ट्रेनिग लेनेवाले खुदाई खिदमतगारो के वीच जाकर लम्बे समय तक रहने का जो कार्यक्रम बनाया था, वह आगे के लिए मुल्तवी रखा गया। पर वह फिर कभी पूरा नही हो सका।

३

श्रद्धा की परीक्षा

१९४० मे पूना मे जव अग्रेजो के युद्ध-प्रयत्नो मे सशर्त सहयोग की वात काग्रेस कार्यकारिणी ने रखी और गाधीजी अहिसा के सिद्धान्त को लेकर काग्रेस से अलग हो गये, उस वक्त काग्रेस कार्यकारिणी के वादशाह खान ही अकेले ऐसे सदस्य थे, जो गाधीजी के साथ रहे। बादशाह खान ने उस

समय इसी सवाल पर कार्यकारिणी से इस्तीफा दे दिया था। उनकी इस श्रद्धा की परीक्षा का अवसर भी जल्दी ही आ गया।

पूना मे कांग्रेस ने जो हाथ बढाया था, उसे ब्रिटिश सरकार ने नामजूर कर दिया और कांग्रेस फिर गाधीजी की शरण मे आ गई। सितम्बर १९४० मे उसने निश्चय किया कि युद्ध मे भाग न लेने के आधार पर गाधीजी के नेतृत्व मे वह सविनय अवज्ञा का अन्दोलन शुरू करेगी।

इसके अनुसार बाद मे जो वैयक्तिक सत्याग्रह शुरू हुआ, उसमे खान-बन्धुओ ने पूरी तरह भाग लिया, लेकिन हजारो सत्याग्रहियो की गिरफ्तारी के बावजूद खान-बधु गिरफ्तार नही किये गए।

अगस्त १९४२ मे क्रिप्स-मिशन के साथ बातचीत टूट जाने पर जो ऐतिहासिक 'भारत छोडो' सग्राम छिडा, उसमे भी बादशाह खान का पूरा योग रहा। इसमे हुई गिरफ्तारी के बाद मार्च १९४५ मे जब उत्तर-पश्चिम सीमाप्रात मे काग्रेसी सरकार बनी तभी वह छोडे गये। उनके भाई डा० खान-साहब उस समय वहा के मुख्य मत्री बनाये गए।

लेकिन श्रद्धा की अन्तिम परीक्षा तो अब होनेवाली थी। मार्च १९४६ मे ब्रिटिश मन्त्रिमडल का प्रतिनिधि-मडल भारत आया। इसी वर्ष के आरभ मे केन्द्रीय असेबली और प्रातो के चुनाव हुए थे। बादशाह खान ने १९४६ के चुनाव मे भाग लिया। मगर ऐसा उन्होने मत बटोरने के लिए नही, बल्कि मतदाताओ के प्रशिक्षण के लिए किया। उन्होने वोट देनेवालो

से कहा, "मै आपसे वोट की भीख मागने नही आया हूं, क्योंकि वोट और आजकल की असेम्बलिया मेरे लिए मूल्यवान नही है। मै तो इतने वर्षो से आप जो आजादी की लडाई लड रहे है उसके लिए मित्रता और सफलता की कामना का सदेश लेकर आया हू। आजादी की लडाई के इस मौके का आप लाभ उठावे और इस वार आजादी हासिल किये विना हर्गिज न रहे।"

चुनाव के बाद काग्रेस पार्लमिटरी वोर्ड के नवनिर्वाचित सदस्यो के वीच वोलते हुए उन्होने कहा, "आप अच्छी तरह से जानते है कि मन्त्रिमण्डल वनाने या उसके काम मे मैने आज-तक कोई दिलचस्पी नही ली है। उसका कारण बिल्कुल साफ है। मेरा कभी ऐसी चीजो की तरफ रुझान नही रहा। लेकिन उस पक्ष को भी मै अवहेलना नहीं कर सकता, जो मुझे समझाने की कोशिश कर रहा है कि पार्लमिण्टरी कार्यक्रम द्वारा भी गरीब जनता की सेवा की जा सकती है।'

जिन्ना और मुस्लिम लीग ने दो-राष्ट्र के सिद्धान्त पर आधारित पाकिस्तान की माग १९४० से ही शुरू कर दी थी। इस सिद्धान्त के अनुसार मुसलमान हिन्दुओ से अलग राष्ट्र थे और इसलिए सार्वभौम सत्तायुक्त अपनी अलग मातृभूमि के हकदार थे। यह मातृभूमि भारत के उन हिस्सो से वननेवाली थी, जहा मुसलमान सख्या मे अधिक थे और उनकी मूल परिभाषा के अनुसार उसमे पजाब, उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त (अफगान सूबा), काश्मीर, सिंध और बलोचिस्तान आते थे। वगाल और असम उसमे वाद मे जोडे गये। यह सिद्धान्त

की दृष्टि से सिद्ध नही होता था और व्यवहार की दृष्टि से एकदम गलत था। पर जिन्ना और मुस्लिम लीग ने अपनी जिद नही छोडी और उन्हे ब्रिटिश साम्राज्यवादियो का पूरा समर्थन और प्रोत्साहन मिलता गया।

खान-बन्धुओ ने खुले शब्दो मे 'दो राष्ट्रो' के सिद्धान्त की मुखालफत की। सरहदी सूबे के चुनाव मे मुस्लिम लीग बुरी तरह हार गई थी और उसने अपनी उद्देश्य-सिद्धि के लिए खुले आम हिसा का प्रचार शुरू किया। अगस्त १९४६ मे कलकत्ता मे जो भयानक कत्लेआम हुआ, 'दो राष्ट्रो' के सिद्धान्तवालो ने उसे आयोजित किया था और उसके बाद पूर्वी बगाल के नोआखाली क्षेत्र मे हिसा का नगा नाच हुआ। ब्रिटिश अधिकारियो ने मुस्लिम लीग की अविवेकपूर्ण माग को मान लेने के लिए इस हिसा के ताडव को बहाना बनाया।

अक्तूबर १९४६ मे गाधीजी हिन्दू-मुसलमानो के बीच पुर्नमिलन का सुनहला सेतु बनाने नोआखाली गये। नोआखाली के दगे के बाद बिहार और देश के दूसरे हिस्सो में वैसे ही साप्रदायिक दगो का एक सिलसिला चल पडा। खान-बन्धुओ को इन घटनाओ ने झकझोर दिया, पर उनकी श्रद्धा कुदन की तरह और भी चमकी। जनवरी १९४७ में गाधीजी जब नोआखाली से अपने शाति और करुणा के मिशन पर बिहार गये तो उन्होने बादशाह खान को बुलाया। उस आधी-तूफान से भरी अधेरी रात मे बादशाह खान की शानदार दिलेरी, सहनशीलता, पहाड-जैसी मजबूती और इन्सान की बुनियादी अच्छाई तथा खुदा रसूल मे उनकी अटूट

श्रद्धा एक चमकते हुए मार्गदर्शक प्रकाश की तरह सामने आई ।

एक सधे हुए पत्रकार ने रिपोर्ट दी—"इस आदमी की ईमानदारी ने, जो उसके एक-एक शब्द से झलकती है, सुनने-वालो पर मोहिनी मत्र डाला है । जो कुछ उन्होने कहा, उसमे कुछ नया नही था । फिर भी जो सादा शब्द उनके दर्द-भरे दिल से निकलते, वे सुननेवालो के दिलो मे झकार पैदा कर देते थे । सरहदी गाधी की सभाओ मे जो मिलाप के दृश्य दिखाई दिये और सब जमातो का इस तरह से इबादतगाहो मे एक जगह पर आना, यह सब खिलाफत के दिनो की याद दिलाता था ।"

इसी पत्रकार ने आगे लिखा—"ये थी तो छोटी-छोटी घटनाए, पर चारो ओर फैले अधेरे मे चमकती किरण की तरह से थी ।" हिदू, मुसलमान, सिखो की एक मिली-जुली सभा पटना मे गुरु गोविन्दसिह के जन्मस्थान गुरुद्वारा हर-मदिर मे बुलाये जाने पर बादशाह खान ने कहा, "हिन्दुस्तान मे इस वक्त पागलपन के दोजख की आग फैली हुई है और अपने ही घर को इस तरह से आग लगाते हुए देखकर मेरा दिल रोता है । आज हिन्दुस्तान मे अधेरे की घटा छाई है और मेरी आखे व्यर्थ एक दिशा से दूसरी ओर प्रकाश के लिए ताकती है ।" उन्होने बताया कि वह सत्ता की राजनीति से उकता गये थे और सारे मुल्क मे जो नफरत फैलाई जा रही थी उसे देखकर बहुत दुखी थे । खुदाई खिदमतगार के नाते वह पीडित मानवता की जो भी थोडी-बहुत सेवा कर

सके, करना चाहते थे। सभा के अन्त मे हिन्दू, सिख, मुसलमान गुरुद्वारे के पास की एक मस्जिद मे उनके साथ-साथ गये, गले मिले और सबने एक-दूसरे को सलाम-दुआ दी।

बादशाह खान ने मुगेर मे कहा, "हिन्दुस्तान हिन्दू-मुसलमान दोनो का मुल्क है। ऐसे सूबे है, जहा हिन्दू अल्प-सख्या मे है और ऐसे भी सूबे है, जहा मुसलमान भी उसी तरह कम तादाद मे है। जो कुछ हुआ, उसकी दूसरी जगहो पर भी अगर नकल हुई और बहुसख्यक जमात अल्पसख्यको को दबाने और मारने लगी, तो देश का भविष्य अधकारमय होगा और फिर हमेशा के लिए हम गुलामी मे पड जायगे।"

काग्रेस के मन्त्रिमडलो को भी उन्होने नही छोडा और राष्ट्रीय भारत से बोलने का अधिकार उनसे अधिक था भी किसे? उन्होने कहा कि जनता के मिनिस्टरो की प्रातीय सरकारे दगे-फसाद रोकने मे असमर्थ रही है। मुस्लिम लीग से उन्होने कहा, "मै आपका ध्यान इस तथ्य की ओर खीचना चाहता हूं कि दुनिया मे इस्लाम के सिद्धान्तो मे सबसे अधिक सहिष्णुता है। अगर हमे सच्चे मुसलमान बनना है, तो हमे इसका अहसास होना चाहिए और अपने भाइयो के बीच सहिष्णुता फैलाने की कोशिश करनी चाहिए। आज तो मै देखता हू, दूसरी जमाते कही ज्यादा सहिष्णु है। अगर सच्चे मुसलमान बनना हो, तो हमे अपने मे से इस दोष को हटाना चाहिए।"

पर उनकी आवाज अरण्यरोदन की तरह अकेली आवाज थी। मुस्लिम लीग के प्रचार के फलस्वरूप बिहार से

सम्प्रादायिक दगोके अगारे दिसम्बर १९४६ से ही सरहदी सूबो तक भी पहुचे। फरवरी और मार्च १९४७ मे फिर अराजकता फूट उठी—अब की बार हजारा प्रान्त मे। बादशाह खान को अपने प्रान्त को जल्दी लौटाना पडा। पेशावर से एक बयान देते हुए उन्होने कहा, "यह शायद हमारे देश के इतिहास मे सबसे खतरनाक दौर है। हवा मे हिसा है। हममे से अनेक आदमी नही रहे, हम वहशी हो गये है।" उन्होने कहा, "अब सरहदी सूबे मे मै अपना सारा वक्त अपने मजहबवालो से जगलीपन दूर करने मे बिताऊगा—चाहे वह सरहद मे हो या सरहद के पार। मेरा मुस्लिम लीग या ब्रिटिश अफसरो से कोई झगडा नही। मै तो यही चाहता हू कि पठान और दुनिया के सारे लोग किसी भी तरह की गुलामी मे न रहे।"

साढे तीन महीने बिहार मे रहकर बादशाह खान अपने सूबे मे लौटे, तो पहली सार्वजनिक सभा मे उन्होने भाषण देते हुए कहा, "मै उन सब लोगो से, जो मुल्क मे आग लगाना चाहते है, आग्रह करना चाहता हू कि जो आग वे लगा रहे है, वह उन्हे भी भस्म कर देगी। मै नही जानता कि धार्मिक स्थानो मे आग लगाने से और भोले-भाले लोगो को मारने और लूटने से इस्लाम की रक्षा कैसे हो सकेगी?" उनके घायल दिल को सिर्फ इतनी ही तसल्ली थी कि कम-से-कम खुदाई खिदमतगारो ने उनकी उम्मीदे पूरी की थी। अपने अहद पर कायम रहते हुए दस हजार खुदाई खिदमतगार अपने दुखी हिंदू और सिख भाइयो की मदद के लिए

दौड पडे थे और उन्होने उनके जान-माल की रक्षा की थी।

सरकार के वहशीपन और गरीब भोले लोगो के घर-द्वार की इस तरह बडे पैमाने पर बरबादी पर जितना ही वह सोचते, उतने ही दुखी होते। लेकिन उन्होने हिम्मत नही हारी और बार-बार सारे समझदार लोगो को निराश न होने के लिए कहते रहे। शान्ति के लिए अनथक प्रयत्न करते रहने का उन्होने आदेश दिया। "हिन्दू-मुस्लिम एकता को आप नामुमकिन मानते है?" एक सशयात्मा से उन्होने कहा, "कोई भी सच्चा प्रयास व्यर्थ नही जाता। उन खेतो की ओर देखो। बोये हुए बीजो को कुछ वक्त तक जमीन मे रहना पडता है, तभी उनके अकुर बनते है और उनमे से सैकडो वैसे ही बीज फूट पडते है। हर अच्छे काम मे यही बात होती है।"

१६४५ मे जेल से छूटने के बाद से वह खुदाई खिदमतगार आन्दोलन के पुनर्गठन और शुद्धिकरण मे लग गये थे। अब उन्होने निश्चय किया कि नि स्वार्थ खुदाई खिदमतगारो की टोलियो को सारे सूबो मे भेजा जाय, जो खुदा और इसानियत के नाम पर गलत रास्ते पर जानेवाले लोगो के जमीर को सुधारे और उनकी गलतिया उन्हे बताये। उन्होने कहा, "मै आशा करता हू कि खुदा इस पाक काम मे मेरी मदद करेगा और जनता सही-सही पहचान लेगी कि प्रेम, सत्य और अहिसा का सार ही अच्छे, स्वतत्र, समृद्ध समाज का मुख्य लक्षण होता है।"

नई अग्नि-परीक्षा

बादशाह खान के लिए एक और अग्निपरीक्षा सामने थी। ब्रिटिश केबिनेट प्रतिनिधिमडल ने १६ मई के अपने वक्तव्य मे एक योजना की रूपरेखा रखी, जिसमे भारत की जनता को सत्ता सौपने के 'अभिन्न अग' के रूप मे अलग-अलग प्रदेशों के 'समूहीकरण' की बात थी। भारत की उत्तर-पश्चिम और पूर्वी सीमाओ पर मुस्लिम बहुसख्यावाले प्रदेश एक अलग समूह मे आते थे। इस समूह के इस विभाग के लिए अपना सविधान बनाने की व्यवस्था थी और प्रत्येक इकाई (प्रदेश) को यह हक था कि इस समूह के चुने हुए प्रतिनिधियो के बहुसख्यक मतो से वह चाहे तो अलग हो जाय। यो उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त, पजाब, बलोचिस्तान और सिध 'बी' समूहो मे आते थे, असम और बगाल 'सी' समूह मे, और शेष सूबे, जो इन दोनो समूहो मे नही शामिल किये गए थे, 'ए' समूह मे आते थे। इस तरह से कल्पना यह थी कि उत्तर-पश्चिमी और पूर्वी हिस्सो मे मुस्लिम बहुसख्यावाले क्षेत्र बना दिये जाय, जो मुस्लिम लीग को 'पाकिस्तान का सार' दे सके। इस प्रस्ताव मे कुटिल बात यह थी कि यद्यपि केबिनेट मिशन की योजना वैसे तो स्वेच्छिक घोपित की गई थी, पर इन समूहीकरण की धाराओ का प्रभाव यह होनेवाला था कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त को चुने हुए

प्रतिनिधियो की इच्छा के विरुद्ध समूह 'बी' मे शामिल होना पडता, जिसमे दो राष्ट्रो के सिद्धान्त को माननेवालो का आधिपत्य था। यह भी हो सकता था कि 'समूह' एक ऐसा सविधान बनाते कि उसके बाद उस समूह मे से किसी भी प्रान्त का स्वेच्छा से बाहर रह सकना असभव हो जाता।

खान-बन्धुओ ने कहा कि हमे इन गुटो के बनाने के राजनैतिक पहलू मे कोई दिलचस्पी नही है। हम तो किसी भी गुट के साथ जा सकते है, जो पठानो को अपने ढग से पूरी तरह विकास करने की आजादी दे। जुलाई १९४६ मे ही बादशाह खान ने घोषित किया था, "मुझे पजाब, सिंध, बलोचिस्तान के गुट मे रहने मे कोई आपत्ति नही है, परन्तु मै सिर्फ इतना कहना चाहता हू कि ऐसे किसी समझौते मे हिस्सेदार होने से पहले हम सब भाई-भाई की तरह एक जगह बैठे और एक-दूसरे की शकाए दूर करके सबको सतुष्ट करे कि ऐसे समूह हर प्रान्त के लिए अच्छे है। कुछ लोग इसे मजहबी रग देते है, जो ठीक नही। मजहब को इससे क्या लेना-देना है? यह तो एक आर्थिक समस्या है—शुद्ध रूप मे नफे और नुकसान की बात है। जबर्दस्ती से कुछ नही किया जा सकता। आजकल तो एक बाप भी अपने बेटे से जोर-जबर्दस्ती से कुछ मनवा नही सकता। कभी भी अगर हमे गुट बनाना पडे, तो यह सिर्फ पजाब, सिंध, बलोचिस्तान के साथ ही हो सकता है, और किसीके साथ नही क्योकि हिन्दू बहुसख्यक प्रान्त सभी हमसे सैकडो मील दूर है।"

पर केबिनेट प्रतिनिधिमडल की १६ मई की योजना को

सफलता नही मिली और २० फरवरी, १९४७ को ब्रिटिश प्रधानमत्री एटली ने कामन्स सभा मे ऐलान कर दिया कि सत्ता-परिवर्तन और केबिनेट प्रतिनिधि-मडल की १६ मई की योजना के आधार पर भावी सविधान के बारे मे भारत के प्रमुख दलो के बीच एकराय न हो सकी, तो अग्रेजो को यह सोचना पडेगा कि भारत से हटने पर सत्ता किसे और कैसे दी जाय ? जिन सूबो की सविधान-सभा (कान्स्टियूएट असेबली) मे पूरी तरह प्रतिनिधित्व नही हुआ, उनके बारे मे कहा गया कि इनमे इस समय जो सरकारे कायम है, उन्ही के आधार पर परिवर्तन किया जायगा। इसका अर्थ हुआ कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त मे डा० खानसाहब की सरकार को सत्ता सौपा जानी थी। अत इसके बाद दो राष्ट्र का सिद्धान्त माननेवालो की सारी ताकत उसी सरकार को उलटने मे लग गई। और ऐसे मौके पर साम्प्रदायिक भावनाओ को उभारने से आसान और क्या हो सकता था ? इस तरह प्रान्त के सभी हिस्सो मे हिन्दू और सिखो के खिलाफ व्यापक रूप मे दगे शुरू किये गए—पहले मार्च मे और बाद मे अप्रैल मे। और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, असम और पजाब मे सीधी कार्रवाई के नाम पर जो कुछ हुआ, वही खानसाहब के मन्त्रिमडल के खिलाफ भी किया गया।

मार्च १९४७ मे लार्ड वैवल की जगह लार्ड माउटबैटन हिन्दुस्तान मे वाइसराय बनकर आये। अप्रैल के मध्य तक उन्होने हिन्दुस्तान का हिन्दू और मुस्लिम बहुसख्यक प्रान्तो मे बटवारा करके सत्ता-परिवर्तन करने की एक योजना

तैयार कर ली। इसमें दिक्कत यह थी कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त में वहुसख्या मुसलमानो की थी, मगर सरकार काग्रेसी थी, जो धर्मनिरपेक्षता के आदर्श से बधी हुई थी और मुस्लिम लीग के दो राष्ट्रो के सिद्धान्त के खिलाफ थी। इस मुश्किल को हल करने के लिए अप्रैल के अन्त मे लार्ड माउन्टबैटन ने सीमाप्रान्त का दौरा किया। उनके दौरे का फायदा उठाकर मुस्लिम लीग के स्वयसेवको ने उनके सामने एक प्रदर्शन किया और गवर्नर सर ओलाफ कैरो उन्हे ऐसे लोगो का प्रदर्शन दिखाने ले गये, जो उन्हीके मत्रियो के खिलाफ कानून तोडने और अराजकता फैलाने का काम कर रहे थे। किसी भी सूबे के सवैधानिक प्रमुख के लिए ऐसा करना निश्चय ही अजीव वात थी।

गवर्नर ने एक और भी अनोखी वात की। उन्होने वाइसराय से सीमाप्रान्त मे धारा ६३ लागू करके नये चुनाव कराने का आग्रह किया। मत्रिमडल की वाइसराय के वहा जाने पर हुई बैठक की रिपोर्ट को उन्होने उलटा-सीधा और झूठा रूप देकर वाइसराय के पास भेजा और खुद मुख्यमत्री का वह नोट भेजने से इन्कार किया, जिसमे उस रिपोर्ट का सही रूप था। मुख्यमत्री को मजवूरन उसे गवर्नर की मार्फत भेजने के वजाय सीधे भेजना पडा।

सच बात यह है कि उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त के अग्रेज अफसर चाहते थे कि हाथ से निकलती सत्ता पर जितना भी हो सके कब्जा करके उसे अपने आश्रित और परम्परागत मित्र मुस्लिम लीग को सौप दे, जो ब्रिटिश नौकरशाही के

पोपण से ही बढी थी और अब जोर पकड रही थी । दूसरी तरफ ब्रिटिश सरकार हिन्दुस्तान मे अपना राज्य खत्म तो करना चाहती थी, पर उसे इस मामले के हल का इसके सिवा दूसरा कोई चारा नजर नही आ रहा था कि बटवारे के लिए वह मुस्लिम लीग को राजी कर ले । और इसके लिए लीग की माग के हिसाब से उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त को जैसे भी हो, उसे देना जरूरी था । अग्रेजो की ईमानदारी पर हम शक नही करना चाहते थे, पर यह कहना पडेगा कि ब्रिटिश मत्रिमडल के अच्छे इरादो और अग्रेज उच्च अधिकारियो के हथकडो के बीच उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त शिकार बन गया और जल्दी हल निकालने की अवसरवादिता की वेदी पर इन्साफ की बलि हो गई ।

५

गवर्नर का षड़यंत्र

बादशाह खान जब बिहार मे थे, तब उन्होने राजनीति से पूरी तरह हाथ खीच लेने का गभीरता से विचार किया था । हुकूमत की सियासत और उसके क्षुद्र स्वार्थो से उन्हे नफरत हो गई थी । परन्तु सीमाप्रान्त मे जो कुछ हुआ उसने उनका इरादा बदल दिया । ऐसे समय सार्वजनिक जीवन से सन्यास ले लेना पठानो को उनकी परीक्षा की घडी मे अधर मे छोड देने के बराबर होता । मोहमद कबायलियो के एक

जिरगे में उन्होने कहा, "हम बडे ही नाजुक दौर में से गुजर रहे है । अग्रेज और उनके नौकरशाह ताकत खोने के डर से घबराते है । लोग तुम्हे इस्लाम के नाम पर गुमराह कर रहे है—मुझे यह अपना फर्ज जान पडता है कि आगे आनेवाले खतरो की ओर से तुम्हे आगाह कर दू, ताकि कयामत के दिन मै खुदा और वन्दे के सामने अपने आपको सही साबित कर सकू । मै खामोश नही रह सकता ।"

सर ओलाफ कैरो की ओर इशारा करते हुए उन्होने कहा, "मै दिल्ली से अभी आया हू और मै बहुत करीबी जानकारी से कह सकता हू कि यही आदमी, जो जिरगो में तुमसे मिलता है और अपने-आपको दोस्त वताता है, वही तुम्हारे खिलाफ रिपोर्ट दर्ज करता रहा है और दिल्ली मे हुक्मरानो से इसरार करता रहा है कि वमबाजो के मजबूत दस्ते तैयार रखे कि जो तुमपर आग और कहर बरसाये । वह जब दुबारा जिरगे मे तुम्हारे पास आयेगा तो उससे पूछना कि मै जो कह रहा हू वह सच है या झूठ । अगर वह कहे कि झूठ है, तो वह मेरे सामने आये । अपने बयान की एक-एक वात का मै सबूत पेश कर सकता हू ।"

उन्होने याद दिलाई कि हाल मे सर ओलाफ कैरो ने सरहदी मन्त्रियो से कहा कि उनके और हिन्दुस्तान के बीच मे एक जैसी कोई बात नही है और अगर वे काग्रेस से अलग हो जाय तो वह उन्हे पूरा सहयोग देगा ।

वादशाह खान ने पूछा, सर ओलाफ कैरो सरहद मे नया चुनाव क्यो चाहते है ? और जवाब दिया, सर ओलाफ

का इरादा साफ है। वह हुकूमत अपने उन खुशामदी पिट्ठुओ को देना चाहते है—उन खानो, नवाबो और अफसरो को—जिन्होने खुदाई खिदमतगारो के जद्दोजहद के खिलाफ अग्रेजो की सब तरह से मदद की, नही तो नये चुनावो का कोई मतलब ही नही हो सकता। एक साल पहले ही पठानो ने पाकिस्तान के मामले मे अपना साफ तस्फिया दे दिया है। खुदाई खिदमतगारो को पठानो के बहुत बडे चुनाव-मडल ने इतने बडे बहुमत से चुना है।"

आगे उन्होने कहा, "मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिक तेहरीक को राजनैतिक दर्जा देना बेईमानी है, जबकि लीग-वालो ने सब तरह के जुर्म किये है और कर रहे है।"

गवर्नर का तर्क था कि "सूबे भर मे हो रहे हिसा-काण्ड मत्रिमडल मे अविश्वास के सूचक है।" बादशाह खान ने बहुत जोश से जवाब दिया। उन्होने कहा कि युद्ध के छ. वर्षो मे जब अग्रेज खुद सकट मे थे, तब कबायली इलाके मे कोई गडबडी क्यो नही हुई ? तब अग्रेजो को शान्ति चाहिए थी और शाति बनी रही और अब सैकडो लोगो का कत्ले-आम हुआ, हजारो अनाथ और बेघर हुए, फिर भी सरहद मे ब्रिटिश सत्ता सिर्फ देखती रही। उसने गुडागर्दी को दबाने के लिए कोई कडे कदम नही उठाये, जबकि उनके अपने मत्री उसकी माग कर रहे थे, उलटे इसी अराजकता को वे इन मत्रियो को हटाने का कारण बनाकर इन्हे हटाना चाहते है, जबकि मतदाताओ की भारी बहुसख्या ने इन्हे चुना है और

व मे अभी भी इनका बहुमत है।

बादशाह खान को इन सारी घटनाओ में लीगियो और उनके विदा लेनेवाले मालिक अंग्रेजो का एक बडा षड्यंत्र लगा। उन्होने दो राष्ट्र का सिद्धान्त माननेवालों को आगाह किया, "हमने अपने हाथो मुल्क में ऐसी आग लगा दी है, जिससे हम खुद भी नही बच पायगे। इन बातो से इस्लाम, मुस्लिम लीग और पाकिस्तान किसीका भी भला नही होगा।" मुस्लिम लीग से उन्होने अपील की कि एक मिले-जुले जिरगे में बैठकर वह खुदाई खिदमतगारो से हिन्दुस्तान से अंग्रेजो के जाने के बाद पैदा होनेवाले मसलो पर विचार करे। उन्होने कहा, "अंग्रेज तो अब जा रहे है, तो लीगी जिरगे में हमारे साथ बैठे। अगर वे हमसे भाई की तरह मिले और अपने हिसक तरीके छोड दे, तो हम अपने आपसी मतभेद आसानी से दूर कर सकते है। अगर ईमानदारी से कोशिश की जाय तो आपस मे बाइज्जत समझौता करने के लिए मै हमेशा तैयार हू। लीगियो को हिन्दुओ की हुकूमत का डर है, जबकि हमें अंग्रेजो की हुकूमत का। हम लोग आपस मे मिले और एक-दूसरे को समझाने की कोशिश करे। हम उनका डर दूर करने को तैयार है। क्या वे हमारा डर दूर करने की कोशिश करेगे ?"

यह अपील किसीने नही सुनी। लीग की कोई इच्छा ही नही थी कि अंग्रेजो को छोडकर वह कांग्रेस या खुदाई खिदमतगारो के साथ बातचीत करे। जबतक वह अंग्रेजों से ज्यादा पा रही थी तबतक किसी बाइज्जत समझौते के लिए वह तैयार ही नही थी।

१४ मई, १९४७ को काग्रेस के जनरल सेक्रेटरी आचार्य जुगलकिशोर और दीवान चमनलाल ने, जिन्हे नेहरूजी ने जाच करके रिपोर्ट देने के लिए सीमाप्रान्त भेजा था, दिल्ली से यह बयान जारी किया

"यह एक खुला रहस्य है कि जो गवर्नर वहा है वह मत्रिमडल के साथ मे नही है। उनके पद पर काम करनेवाला व्यक्ति जो राजनैतिक विभाग का प्रमुख भी है, किसी भी मत्रिमडल के काम मे गभीर रूप से बाधा डाल सकता है, क्योकि उसके मातहत नागरिक प्रशासको की एक बडी तादाद ऐसी है जो नागरिक प्रशासक होने के साथ-साथ राजनैतिक प्रतिनिधि (पोलिटिकल एजेण्ट) भी है।"

"नागरिक प्रशासन के प्रमुख ने बार-बार हुक्म दिये कि गुडो के सरगनो को पकडा जाय और बार-बार इन हुक्मो को पुलिस अफसरो ने नही माना, यहा तक कि मत्रिमडल के आदेश पर पुलिस के इन्सपेक्टर जनरल ने जो हुक्म दिये उन्हे भी ठुकरा दिया गया।"

उनका निष्कर्ष था "मत्रिमडल को नही, बल्कि गवर्नर को और उनके उन अफसरो को पद से हटा देना चाहिए, जो उनसे समर्थन चाहते है और जो कानून और व्यवस्था को बनाये रखने मे असफल हुए है।"

अधिकार की दो अमली पद्धति मे अफसरो की मिली-भगत और टालमटोल से चीजे कितनी बिगड सकती है, इसकी एक मिसाल तब मिली जब १९४६ की आखिरी तिमाही मे अन्तरिम सरकार के उपाध्यक्ष नेहरूजी सीमाप्रान्त

के दौरे पर गये । रास्ते के दोनो ओर दस मील तक खुदाई खिदमतगारो ने उनका शाही स्वागत किया, लेकिन मालकद एजेसी मे उनकी मोटर को कुछ कवायलियो ने घेर लिया । इस सारे मामले में अफसरो का कुछ हाथ रहा होगा, ऐसा सन्देह किया गया और ग्रपने कर्तव्य मे उपेक्षा के लिए सबद्ध राजनैतिक अफसर के खिलाफ कार्रवाई करनी पडी ।

काग्रेस ने आखिरी चुनोती दी कि अगर डा० खान-साहव के मत्रिमडल को वर्खास्त किया गया ग्रौर सीमाप्रान्त में नये चुनावो का हुक्म दिया गया तो, लार्ड माउटबैटन की बटवारे की योजना पर काग्रेस अपना रुख वदल देगी । इसके परिणाम-स्वरूप वह प्रस्ताव आखिर छोड दिया गया और दूसरा प्रस्ताव रखा गया, लेकिन सीमाप्रान्त मे इससे इतना ही फर्क पडा कि भट्टी से निकले तो भाड में जा गिरे ।

६

भेड़ियों के हवाले

"तो महात्माजी, अब तो आप हमे विदेशी पाकिस्तानी कहेगे न ?" ३ जून को काग्रेस के बटवारे की योजना मान लेने पर वादशाह खान ने उदास मुस्कान के साथ गाधीजी से कहा और वताया, "सरहदी सूवे में हमारा भविष्य भारी खतरे से भरा हुआ है । हमें क्या करना चाहिए, यह कुछ नही सूझता ।"

गाधीजी ने जवाब दिया, "खानसाहव, अहिसा मे निराशा को स्थान नही है। यह आपकी परीक्षा की घडी है। आप कह सकते है कि पाकिस्तान आपको विल्कुल नामजूर है और ऐसे रुख के कारण जो मुसीवते आये उन्हे झेलने को तैयार रहे। 'करेगे या मरेगे' की प्रतिज्ञा लेनेवालो को डर किस बात का है ?" लेकिन अपने साथियो से धीमी आवाज मे वोले, "खानसाहव का दर्द देखकर मेरा दिल टूटता है। लेकिन अगर मै भी अपना दु ख प्रकट करने लगू तो पठानो के बहादुर होने पर भी उनका दिल टूट जायगा।" साथ ही घोपणा की कि "परिस्थितिया अनुकूल होते ही मै सीमाप्रान्त जाने की इच्छा रखता हू। अगर पाकिस्तान वन गया, तो मेरी जगह पाकिस्तान मे होगी।"

वादशाह खान ने और कुछ नही पूछा। सिर्फ यही कहा, "आपका और समय मै नही लेना चाहता।"

गाधीजी ने उस शाम को दु ख से कहा, "मेरे जीवन का कार्य अब समाप्त हो गया मालूम पडता है।"

बटवारे की सशोधित योजना मे मुख्य बात यह थी कि नये चुनावो के बदले सीमाप्रात मे मतगणना (रेफरैंडम) द्वारा यह निर्णय होगा कि वह हिन्दुस्तान मे मिलना चाहता है कि पाकिस्तान मे। खान-बन्धुओ ने घोपित किया कि हिन्दुस्तान बनाम पाकिस्तान मे मिलने का सवाल तो पहले ही खत्म हो चुका है, क्योकि काग्रेस और मुस्लिम लीग दोनो ने वटवारे की योजना को सिद्धान्त रूप मे मान लिया है और सीमाप्रान्त तथा शेष हिन्दुस्तान मे यातायात का कोई रास्ता ही नही

रहा। मतगणना से वह डरते नहीं थे, बशर्ते कि उसमें पठानों के लिए अपना अलग आजाद देश बनाने की छूट हो। उन्होंने कहा, "मुस्लिम लीग अगर इस बात पर राजी हो कि पाकिस्तान बनाम आजाद पठान राज्य पर मत लिये जाय और ऐसे मुकाबले में अगर जनता पाकिस्तान के हक में राय दे तो मैं पाकिस्तान की ताईद करनेवाला पहला आदमी होऊंगा।" और पठानिस्तान स्वावलंबी नहीं हो सकेगा, इस आलोचना का यह जवाब दिया, "हमारी आजादी बनी रहे तो हम अपनी रूखी-सूखी रोटी और घासफूस की झोपड़ियों में ही संतुष्ट रहेंगे। हमें महलों की गुलामी से वह ज्यादा पसन्द है। फिर पठानिस्तान आर्थिक दृष्टि से हमेशा परावलंबी राज्य रहेगा, यह कहना गलत है। आज तो हम एक ऐसा पूंजीवादी शासन चला रहे हैं, जो फिजूलखर्ची से भरा है। अकेले गवर्नर पर ही लाखों रुपये खर्च किये जाते हैं। साथ ही दूसरे ब्रिटिश अफसर भी हैं, जो हमारे प्रान्तीय राजस्व का बहुत बड़ा हिस्सा ले जाते हैं। अगर यह सब फजूलखर्ची दूर की जाय और यह सब रकम उत्पादक योजनाओं पर खर्च की जाय तो हम अपने सूबे को निश्चित रूप से स्वावलंबी बना सकेंगे।"

लोगो द्वारा अपने प्रान्त का सविधान स्वय बनाया जायगा और हिन्दुस्तान तथा पाकिन्तान दोनो का सविधान बन जाने पर ही इसके द्वारा यह तय किया जायगा कि किस उपनिवेश से वह सबद्ध हो।

लीग को यह बात मजूर नही थी। उसका आग्रह था कि उन्हे सहयोग के बदले मे अग्रेज नजराने के तौर पर उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त दे दे। माउटबेटन की योजना को लीग मजूर करे, इसीपर माउटबेटन की सफलता निर्भर थी और वाइसराय इस बात के लिए तैयार नही थे कि असफलता के साथ वोरिया-बिस्तर बाधकर घर लौटे। अत ऐसी योजना बनाई गई जिससे लीग का मनचाहा हो सके। १९४६ मे हुए आम चुनाव मे सीमाप्रान्त मे ५० मे से ३२ स्थान काग्रेस को मिले थे। मुसलमान उम्मीदवारो मे ३८ मे से २१, हिन्दुओ मे ९ के ९ और सिखो में ३ मे से २ स्थान काग्रेस को मिले थे। माउटबेटन के युद्धकालीन सहायक लार्ड इस्मे और उनके अग्रेज साथियो ने इस स्थिति को बेहूदा बताया, मानो मुस्लिम-बहुल प्रदेश मे काग्रेस सरकार को चुनकर वहा के मतदाताओ ने कुदरत के खिलाफ कोई जुर्म कर डाला हो। इस स्थिति को बदलने के लिए चालाकी से एक झूठे सवाल पर वहा मतगणना जबर्दस्ती लादी गई। स्वतन्त्र पख्तू-निस्तान के मामले को तो अलग रख दिया और सारा सवाल हिन्दुस्तान बनाम पाकिस्तान तक महदूद कर दिया।

दूसरी तरफ बलोचिस्तान मे, जहा कि एक चुनी हुई प्रतिनिधि सस्था का अभाव था, मतगणना ही अकेला बुद्धि-

सम्मत हल था। लेकिन वहा ऐसा न कर चालाकी से एक सस्था खडी की गई, जिसमें शाही जिरगा और क्वेटा म्युनिसिपैलिटी के नामजद सदस्य ही थे। कुछ भ्रष्टाचारी सरकारी महकमे और निगम टेडर मगाने मे जैसी चालाकी बरतते है वैसा ही यह झासा था, जिसमे ऐसी शर्ते पहले से रख दी जाय कि जिस पार्टी पर मेहरबानी करनी है वही सफल हो सके।

माउटबेटन ने कहा कि मतगणना के लिए वह निश्चित रूप से वचनवद्ध है और उनके लिए यह प्रतिष्ठा का प्रश्न है। अगर यह बात वैसी ही नही हुई जैसी कि वह चाहते है तो वह इस्तीफा दे देगे। उन्होने खानगी तौर पर यह इशारा भी किया कि मतगणना मे काग्रेस के आने की भी उतनी ही सभावना है। कागेसी नेताओ ने इस कडवी घूट को चुपचाप पी लिया और बटवारे की इस सशोधित योजना को मजूर कर दिया। गाधीजी के सख्त विरोध के बावजूद उन्होने उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त मे मतगणना की शर्तो को मान लिया। इस तरह खान-बन्धु और उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त के खुदाई खिदमतगार, जो कधे-से-कधा भिडाकर पिछले बीस साल से आजादी की लडाई मे हमारे साथ थे, उन्हे अब उन्ही लोगो की मेहरबानी पर छोड दिया गया, जिनके खिलाफ वे लडे थे। बादशाह खान ने बाद मे ठीक ही कहा, "उन्हे भेडियो के हवाले कर दिया गया।"

७

धोखाधड़ी

सिद्धान्तरूप से बटवारे की योजना काग्रेस और मुस्लिम लीग दोनो ने मान ली थी। स्वतत्र पख्तूनिस्तान को रद्द कर दिया गया। अब जो बचा था, वह सवैधानिक तजवीज के नाम पर एक ऐसा प्रस्ताव था कि उससे अलग कोई चारा ही नही था। गाधीजी ने इस धोखाधडी मे शामिल होने से साफ इन्कार कर दिया और खान-बन्धुओ को खुद ही निर्णय करने के लिए कहा।

बादशाह खान सीधे-सादे आदमी थे। उन्हे टेढी-मेढी कूटनीति से कोई मतलब नही था। एक करोड पख्तूनो के भाग्य के साथ खिलवाड करने से उन्होने इन्कार कर दिया और ऐसे जुए मे दाव लगाने को तैयार नही हुए, जिसमे प्रति-पक्षी के पासे खुले हुए हो।

एक और महत्वपूर्ण कारण था। पठान लोग अपने सामाजिक सबधो मे पठान-प्रतिष्ठा की जिस पख्तूनवाली नियमावली का अनुसरण करते है, उसके अनुसार कबायलियो के कुछ कर्तव्य है, जिन्हे न निभाना सबसे बुरा पाप माना जाता है और उसका नतीजा होता है हमेशा के लिए बेइज्जत होना और कबीले से बहिष्कार। उनमे ये तीन कर्तव्य मुख्य है . (१) उन्हे सब शरणार्थियो को आश्रय देना चाहिए (नानावटाई), (२) उन्हे अपने सबसे बडे शत्रु को भी खुले

दिल से आतिथ्य देना चाहिए (मेलमस्तिया), और (३) अपमान का बदला अपमान से देना चाहिए (बदला)।

आखिरी चीज से ही वशपरपरा से बदला लेने की बात चलती है, जो कि पठान जाति का अभिशाप है। कालिस डेवीस ने लिखा है, "हर कबीले के हर हिस्से मे भाई-भाई तक की लडाई चलती है, हर परिवार मे पारपरिक प्रतिशोध चलते रहते है और प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत शत्रु होते है। हर आदमी अपने किये हुए खूनो का हिसाब रखता है। हर कबीले और उसके पडोसी के बीच खून और उसके बदले का बहीखाता रखा जाता है। जान की कीमत जान से ली जाती है।" डेवीस और भी कहता है, "दुर्भाग्य से ऐसे कुछ बहुत ही ऊचे और अच्छे कुनबे बिल्कुल सर्वनाश के किनारे पहुच चुके है। जबतक ये वर्वर आपसी नागरिक झगडे मिट नही जाते, कोई सयुक्त जनता नही हो सकती और न शान्ति ही रह सकती है।" बादशाह खान के एक चाचा या बाबा ने उनके कबीले मे इस रिवाज को बन्द करा दिया था। पठानो मे फिर से खानाजगी और खून का बदला खूनवाली कुनबो की दुश्मनी को जिन्दा करना एक ऐसी बुरी बात थी कि उसका खयाल भी नही किया जा सकता। वह उसके लिए किसी तरह जिम्मेदार नही होना चाहते थे। इसलिए पख्तूनो के सूबाई जिरगे ने मतगणना मे शामिल न होने का निश्चय किया।

पठान गर्वीले और सवेदनशील होते है। उनमे पहाडी आदमियो की यह तीव्र भावना मौजूद है कि वे मैदानी

आदमियो का प्रभुत्व नही मानेगे। इस मामले मे तो वह भावना और भी वढ गई थी, क्योकि पठान की स्वायत्तता नही मानी गई तो पाकिस्तान से मिलने का मतलव था पजावी मुसलमान पूजीपतियो का प्रभुत्व मानना। पाकिस्तान वन जाने के वाद अपने एक वक्तव्य मे वादशाह खान ने कहा, "हमारे सूवे मे पजावी छा गये है और वे कोशिश कर रहे है कि पठान आपस मे लडे। मजहवी वटवारे मे पजाव का वहुत वडा हिस्सा हाथ से निकल जाने से पजावी नवाव और वडे पूजी-पति लोग अव हमारे सूवे के पीछे लगे है कि उनका नुकसान पूरा हो जाय।"

पजावी मुसलमानो की हुकूमत और शोषण का यह भय सिर्फ सीमाप्रात तक ही सीमित नही था। पाकिस्तान वन जाने के वाद वहुत-से पाकिस्तानी हिस्सो मे यह भावना प्रमुख थी—पूर्वी वगाल मे तो सवसे ज्यादा। पाकिस्तान का पूर्वांचल जनसख्या मे पश्चिम से कही अधिक था। अत पाकिस्तान की सविधान-सभा के विधान-पडितो का सवसे वडा काम यही हो गया कि इस वहुसख्या के प्रभाव को कैसे वेअसर करे। सिन्ध प्रान्तीय सरकार की वफादारी पर इससे वहुत वडा तनाव पडा और काश्मीर को तो अपनी हिफाजत के लिए हिन्दुस्तान के साथ मिलने के सिवा कोई चारा ही न रहा।

अलविदा

दुखी हृदय से गाधीजी इस चिन्ता मे पडे कि काग्रेस के निर्णय ने बादशाह खान और खुदाई खिदमतगारो को जिस परिस्थिति मे डाल दिया था, उसका कोई इलाज ढूढे। उन्होंने लार्ड माउटबेटन को सुझाया कि वह जिन्ना से कहे कि उन्हे अब पाकिस्तान तो मिल ही गया है, अत वह सीमाप्रान्त की जनता को और वहा के मत्रिमडल को प्रान्तीय सविधान देने की बात कहकर पाकिस्तान का प्रान्त बनने के लिए प्रेरित करे और इस तरह से उनका विश्वास प्राप्त कर ले। यदि जिन्ना उन्हे इस तरह मनाने मे कामयाब हो जाते, तो फिर मतगणना या जो कुछ भी होना था वह चीज चली जाती। माउटबेटन ने गांधीजी का सुझाव जिन्ना के सामने रखा, पर उसका कोई असर नही हुआ। उसके बाद गाधीजी ने काग्रेस-नेताओ के साथ मिलकर सुझाया कि जिन्ना ने पठानो का प्रेम प्राप्त करने से इन्कार कर दिया है तो अब बादशाह खान जिन्ना और मुस्लिम लीग का विश्वास प्राप्त करने की कोशिश करे। इसके अनुसार १८ जून को बादशाह खान जिन्ना से उनके घर जाकर मिले और कहा कि वह पाकिस्तान मे मिलने को राजी है, बशर्ते कि (१) वह सम्मानपूर्वक हो, (२) पाकिस्तान आजादी के बाद यह तय करे कि वह ब्रिटिश हुकूमत मे रहेगा तो पठानो को बसे हुए सूबो

मे या कवायली इलाको मे यह हक रहे कि वे ऐसी हुकूमत से अपनी मर्जी से अलग हो जाय और अपना एक अलग आजाद सूबा बना ले, और (३) कवायली लोगो के सब मामले पठान खुद आपस मे तय करेगे, बाहर के किसी तीसरे आदमी का कोई दखल या अधिकार नही होगा, जैसाकि हक आज की विधान-सभा से भी उन्हे मिला हुआ है।

पहले सब प्रस्तावो की तरह यह प्रस्ताव भी ठुकरा दिया गया। गाधीजी को खान-बन्धुओ पर विपत्ति के काले बादल मडराते हुए दिखाई दिये। उस रात गाधीजी को नीद नही आई। रात के साढे बारह बजे से इन्ही विचारो मे वह डूबते रहे। "मैने अब सवासौ बरस तक जीने की इच्छा छोड दी है। फिर भी बादशाह खान की चिन्ता मुझे नही छोडती।" उन्होने कहा, "बादशाह खान एक महापुरुप है—ऐसे व्यक्तियो की हार नही हो सकती। मुझे पूरा भरोसा है कि वह किसी भी बलिदान से पीछे नही हटेगे और पठानो की सेवा करते हुए ही प्राणत्याग करेगे।"

उन्होने सोने की कोशिश की, पर थोडी देर के बाद फिर जग पडे और कहा, "नही, मै सो नही सकता। उनके खयाल ने मेरी नीद चुरा ली है।"

गाधीजी को सबसे ज्यादा जिस बात का डर था वही हुआ। सरहदी नेताओ के इस निर्णय से कि वे मतगणना मे भाग नही लेगे, जिन्ना और मुस्लिम लीग के धैर्य का बाध टूट गया। यही नही, अफगानिस्तान की सरकार ने भी लगभग इसी समय सार्वजनिक रूप से यह माग की कि

अफगानिस्तान और हिन्दुस्तान के बीच की सीमा बतानेवाली ड्यूरैंड रेखा को सशोधित किया जाय। इससे लाभ उठाकर लीग ने बादशाह खान के खिलाफ बुरी तरह अभियान शुरू कर दिया। कहा गया कि वह अफगानिस्तान के कठपुतले है। यह बिल्कुल झूठा और हास्यास्पद इलजाम था। इस झूठे प्रचार को देखकर गाधीजी भी खामोश नही रह सके। उन्होने स्वय ही जो खामोशी अख्तियार की थी, उसे तोड़ने के लिए वह विवश हो गये, क्योकि यह प्रचार ऐसे आदमी के खिलाफ था, जो सत्य और प्रामाणिकता की मूर्ति थे और जनता की स्वतन्त्रता के पक्के हिमायती थे।

३० जून की शाम की प्रार्थना के बाद उनका लिखित सदेश सुनाया गया, क्योकि उस दिन सोमवार होने से उनके मौन और आत्म-निरीक्षण का दिन था। उन्होने कहा, "बादशाह खान और उनके सहयोगी हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच चुनाव नही चाहते। यह एक गलत चीज है, क्योकि इसका मतलब होता है हिन्दू और मुसलमानो के बीच चुनाव। इसलिए खुदाई खिदमतगार अपनी राय नही देगे। बादशाह खान पर यह इलजाम लगाया जा रहा है कि उन्होने पठानिस्तान की नई माग शुरू की है। लेकिन यह इलजाम गलत है। जहातक मै जानता हू, काग्रेस का मन्त्रिमडल बनने से पहले भी बादशाह खान के दिल मे अपने अन्दरूनी मामलो मे पठानो की आजादी की बात थी। वह कोई नया राज्य नही बनाना चाहते। उन्हे अगर सिर्फ अपना स्थानीय सविधान बनाने दिया जाय, तो वह खुशी से दोनो में से

किसी राज्य मे मिलना पसन्द करेगे। पठानो का अपमान करके उन्हे पालतू बनाने का इरादा नही है, तो मेरी समझ मे नही आता कि पठान स्वायत्तता की इस माग पर क्या आपत्ति हो सकती है।"

आगे उन्होने कहा, "इससे भी ज्यादा गभीर आरोप यह है कि बादशाह खान अफगानिस्तान के हाथो मे खेल रहे है। मै समझता हू कि वह कोई भी काम चोरी-चुपके कर ही नही सकते। सीमाप्रान्त को अफगानिस्तान हडप ले, यह वह कभी नही चाहेगे।"

सरहदी सूबे से दिल दहलानेवाली खबरे आने लगी। उनकी ओर इशारा करते हुए गाधीजी ने लार्ड माउटबेटन को एक चिट्ठी मे लिखा

"वह (बादशाह खान) चाहते है कि मै इस तथ्य की ओर आपका ध्यान खीचू कि मतगणना को प्रभावित करने के लिए पजाबी मुसलमान सरहदी सूबे मे खुले आम भेजे जा रहे है। इससे खून-खराबी का खतरा बढता जाता है। वह यह भी कहते है कि जो गैर-मुस्लिम शरणार्थी हजारो की तादाद मे है, उन्हे मतगणना मे भाग लेने का कोई मौका नही मिलेगा। इतना ही नही बल्कि उन्हे धमकी दी गई है कि उन्होने अगर राय देने की कोशिश की तो उन्हे सख्त सजा दी जायगी।

"मै आज के अखबारो मे देखता हू कि कायदे-आजम जिन्ना कहते है कि पठान मतदान मे शरीक नही हुए, तो वह मतगणना की शर्तो के खिलाफ होगा। यह तर्क मेरी समझ

में नही आता।"

माउटबेटन ने बादशाह खान की शिकायत को उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त के गवर्नर के पास भेज दिया। इसका उन बडे हजरत पर कोई असर नही हुआ। बादशाह खान ने अपने अगले पत्र मे गाधीजी को लिखा

"मुस्लिम लीगवाले हमे काफिर कहते है और गालियां देते है। मुझे लगता है कि मुस्लिम लीगियो, अफसरो और मतगणना करनेवाले अफसरो के बीच सगठित षडयन्त्र है—वहा जो मतगणना पर निगरानी रखनेवाले अफसर है, उन्होने फर्जी वोट आराम से बढने दिये है—कुछ जगह तो ८० से ९० प्रतिशत ऐसे वोट गिने गये है। यह ऐसी बात है, जो किसी चुनाव मे अबतक नही हुई और जो चुनाव-सूची सिर्फ दो साल पहले बनी हो, उसमे तो यह और भी नामुमकिन बात है।

"वे (मुस्लिम लीगी) आम सभाओ मे यहातक कहते है कि लाल कुर्तीवालो के बडे लीडरो को खत्म किया जाय। वे खुलेआम कहते है कि एक बार पाकिस्तान बन जाने पर न्यूरेम्बर्ग की तरह से इनपर मुकद्दमे चलाये जायगे, क्योकि ये इस्लाम से गद्दारी करते है, और इन्हे फासी पर चढाया जायगा। हजारा के एक एम० एल० ए० ने एक आम सभा मे कहा कि अगर कोई मुस्लिम मत्री हजारा मे आया तो उसे हम मार डालेगे।"

इस तरह की भडकानेवाली हिसा और अग्रेज अफसरो और मुस्लिम लीगियो के खुले गठबधन के वातावरण मे मत-

गणना की गई। खुदाई खिदनतगार और उनकी पार्टी ने उसमे कोई हिस्सा नही लिया और सरहदी सूबा पाकिस्तान का हिस्सा करार दे दिया गया।

३० जुलाई, १९४७ को गाधीजी काश्मीर गये और बादशाह खान अपने प्रान्त को लौट गये। गाधीजी ने कहा कि उनका काम वही है—"पाकिस्तान को पाक बनाने का।" बादशाह खान ने विदा होने तक गाधीजी के साथ के आदमियो से कहा, "महात्माजी ने हमे सच्चा रास्ता दिखाया है। जब हम नही रहेगे तब भी बहुत बरसो तक हिन्दुओ की आनेवाली पीढिया उन्हे याद करेगी। भगवान कृष्ण के अवतार की तरह, मुसलमान उन्हे मसीहा मानेंगे और ईसाई दूसरा शान्ति-दूत। वह हिन्दुस्तान के लिए गर्व का दिन होगा। ईश्वर करे कि वह दीर्घायु हो, जिससे हमे प्रेरणा और शक्ति मिलती रहे और हम सत्य और न्याय के लिए अन्त तक लडते रहे।" और बोले, "हमारे लिए दुआ कीजिए कि खुदा हमे हिम्मत और अकीदत दे, क्योकि हमारे लिए आगे बहुत मुसीबत के दिन आनेवाले है।"

इसके बाद वह गाधीजी से फिर कभी नही मिले।

: ९ :

अग्नि-परीक्षा

हिन्दुस्तान १५० वर्षों की गुलामी के बाद १५ अगस्त, १९४७ को आजाद हुआ, लेकिन खान-बधुओं के लिए नये सघर्ष का सूत्रपात हुआ। डा० खानसाहब का मन्त्रिमडल बंटवारे के बाद भी जारी रहा। वह इतना मजबूत था कि साधारण वैधानिक ढग से उसे हटाना मुश्किल था। अत २१ अगस्त, १९४७ को जिन्ना ने (जो अब पाकिस्तान के गवर्नर जनरल थे) एक जारशाही फरमान से उसे बर्खास्त किया।

बादशाह खान इससे जरा भी विचलित नही हुए और पठानिस्तान के अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए जनमत को शिक्षित और सगठित करने का अनथक प्रयत्न करते रहे। वह इतने बरसों तक इसलिए नही लडे थे कि एक जुआ उतारकर दूसरा लाद ले। सितम्बर, १९४७ के पहले हफ्ते मे सूबे के जिरगों, सूबे की पार्लमिण्टरी पार्टी (ससदीय दल), जलमाई पख्तून (पठान तरुण सघ), खुदाई खिदमतगारो और कबायली इलाके के प्रतिनिधियो की सदरयाब मे एक बडी सभा हुई। इसमे उन्होने पठानिस्तान की अपनी माग को एक बार फिर से स्पष्ट किया। उसका मतलब इससे ज्यादा नही था कि पठानो को पाकिस्तान की एक इकाई के रूप में रहते हुए अपने अन्दरूनी मामलों मे पूरी आजादी रहे। इस सभा मे पास किये गए प्रस्तावो मे से एक इस प्रकार था :

"यह नया राज्य आज के उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त के छ बसे हुए जिलो और उनसे लगे हुए उन हिस्सो को मिलाकर बनेगा, जिनमे रहनेवाले पठान स्वेच्छा से उसमे मिलना चाहे तो इस राज्य की रक्षा, विदेशी मामलो और यातायात के मामले मे पाकिस्तान की हुकूमत के साथ सबध रहेगा।"

बादशाह खान ने घोषणा की, "मै सारी जिन्दगी पठानिस्तान बनाने के लिए काम करता रहा हू। पठानो के बीच मेलजोल पैदा करने के लिए ही १९२९ मे खुदाई खिदमतगारो का सगठन बनाया गया था। १९२९ मे मेरे जो सिद्धान्त थे, उन्हीके अनुसार आज भी मै चलता हू। मेरा रास्ता सफा है। मैं उसे कभी नही छोडूगा, चाहे मुझे दुनिया मे अकेला ही क्यो न खडा होना पडे।"

बादशाह खान को बदनाम करने के लिए उनके विरुद्ध प्रचार और तेज हुआ। गाधीजी को इससे चिन्ता हुई। सरहदी मसले के सिवा उनकी चिन्ता बढानेवाली और भी बाते हुई। पाकिस्तान का रुख दिन-ब-दिन और खराब होता जाता था। आखिर २६ सितम्बर को प्रार्थना के बाद के अपने भाषण मे गाधीजी ने कहा कि मै युद्ध के सदा खिलाफ रहा हू। पर अगर पाकिस्तान से न्याय प्राप्त करने का दूसरा कोई रास्ता न हो, पाकिस्तान अपनी गलती से बाज न आये और बार-बार उससे इन्कार करता रहे, तो भारत-सरकार के लिए युद्ध घोषित करने के सिवा कोई चारा नही है। युद्ध कोई मजाक नही है। उन्होने कहा, 'कोई भी योही युद्ध नही चाहता, परन्तु अन्याय कबूल करते रहने की सलाह मै

किसीको भी हर्गिज नही दे सकता ।"

कुछ अंग्रेज आलोचको ने गाधीजी के भाषण को चर्चिल-जैसा बताकर उनकी आलोचना की । पर गाधीजी अपनी बात पर अडे रहे । आलोचक नही जानते थे कि वे क्या कर रहे है । २९ सितम्बर, १९४७ की प्रार्थना में इसी बारे मे गाधीजी नें फिर से कहा, 'मै कभी युद्ध का प्रतिपादन नही कर सकता, लेकिन मै हिन्दुस्तान की हुकूमत को नही चला रहा हूं । फिर भी यह तो कहना ही पडेगा की एक पक्ष बराबर अन्याय करता रहे, तो उसका एक ही रास्ता बाकी रह जाता है और वह है युद्ध का ।"

गाधीजी के पास नवम्बर के महीने मे खतरनाक खबरे पहुची, जिनसे उन्हे खान-बधुओ की सुरक्षा का खतरा महसूस हुआ । बटवारे के बाद उन्होने गाधीजी या अपने भारतीय मित्रो को शायद ही कोई पत्र लिखे हो । जिस पाकिस्तान का हिस्सा उन्हे हिन्दुस्तान ने ही बनाया था, उसके प्रति अपनी वफादारी को सन्देह से दूर रखने का उन्हे पूरा खयाल था । फिर भी ऐसी खबरे पाकर, उनके आधार पर, गाधीजी ने १७ नवम्बर, १९४७ को बादशाह खान को एक पत्र भेजा, जिसमे खुले आम यह सुझाव दिया कि वह सीमा प्रान्त छोड दे और हिन्दुस्तान से अहिसक लडाई चलाये, "यह काम आप यहां मेरे साथ या और किसी ढग से कर सकते है । मगर और ढंग क्या होगा, यह मैं नही जानता ।" इसके अलावा अन्य विकल्प यही हो सकता कि वे जहा है वही रहे और पाकिस्तानी अधिकारी उनपर जो भी अत्याचार करे, उनका मुकाबला करे ।

गांधीजी ने अन्त मे कहा, "कुछ लोग मानते है कि अहिसा सभ्य या अगत सभ्य समाजो मे ही चलाई जा सकती है। यह मै नही मानता। अहिसा की ऐसी कोई सीमा नही है।"

बादशाह खान ऐसी किसी अग्निपरीक्षा से भाग जाने-वालो मे नही थे। जवाव मे उन्होने गाधीजी को खवर भिजवाई कि वह उनके वारे मे फिक्र न करे। उन्हे और उनके साथियो को अपना आशीर्वाद दे और उनके लिए भगवान से प्रार्थना भर करे। अपने गुरु की सीख के प्रति सच्चे सावित होने, उनकी श्रद्धा के साक्षी वनकर, अपने भाई डा० खान-साहव के साथ वह वही रहे और सिर पर मडरा रही विपत्तियो की कोई परवा नही की।

भाग तीन

गांधीजी के बाद

१ .

अकेले रह गये

जनवरी १९४८ मे गाधीजी, जिन्होने बादशाह खान को प्रेरणा दी थी और जो अहिसा के उनके पथ-प्रदर्शक थे, एक हत्यारे की गोली के शिकार हो गये । तब अहिसा के महान और सकटपूर्ण प्रयोग मे, जोकि दोनो ने एक साथ आयोजित और सचालित किया था, सरहदी गाधी अकेले पड गये । लेकिन गाधीजी की शहादत के बाद वह ऐसे चमके और इतने ऊचे उठे, जैसा इससे पहले शायद ही कभी हुआ हो ।

फरवरी १९४८ मे उन्होने कराची मे जाकर डोमिनियन पार्लमेंट मे शामिल होने का निश्चय किया । स्पष्ट ही ऐसा उन्होने पाकिस्तान के मुसलमानो मे उनके खिलाफ बाकायदा प्रचार द्वारा जो गलतफहमिया पैदा की जा रही थी उन्हे दूर करने के लिए किया था । एक के बाद एक अखबारी बयानो के द्वारा वहा उन्होने पठानिस्तान-सबधी अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया ।

पठानिस्तान की माग प्रातीयतावादी है और इस्लाम की भ्रातृभाव की भावना के खिलाफ है, इस इलजाम का जोरो से खडन करते हुए बादशाह खान ने कहा

"इस्लाम की मूल भावना समानता मे है, न कि एक पर दूसरे के आधिपत्य मे। हम पठान दूसरो के हक छीनना नही चाहते, मगर यह भी नही चाहते कि दूसरे हमारे हक छीने। पाकिस्तान मे चार जमाते है—पठान, वगाली, पजावी और सिधी। हम सब भाई-भाई है। हम सिर्फ यही चाहते है कि इनमे से कोई एक-दूसरे के मामले मे दखल न दे। सबको पूरी-पूरी आजादी हो। अगर कोई दूसरे से मदद मागे तो वह उसे दी जाय।"

क्या इस तरह पाकिस्तान कमजोर नही हो जायगा ? यह पूछा जाने पर बादशाह खान ने कहा कि इससे उलटे अलग-अलग हिस्सो मे सहज मेल और सहयोग वढेगा। उन्होने यह भी कहा, "कायदे आजम जिन्ना से मैने कहा कि पठानो को खुद अपनी और पाकिस्तान के मुसलमानो की रक्षा तथा सारी मानवजाति की भलाई के लिए एक मजबूत राष्ट्र बनने दे। मै तो मानव-जाति का एक विनम्र सेवक हू।"

गाधीजी की मृत्यु के बाद क्या भारत मे मुसलमानो की हालत और खराब नही होगी ? इस सवाल के जवाब मे उन्होने कहा, "जबतक गाधीजी के आदर्शो पर चलनेवाले प० जवाहरलाल, बाबू राजेन्द्रप्रसाद तथा कई अन्य नेता जिन्दा है, भारत के मुसलमानो को किसीसे डर नही है। उनकी हालत और बुरी नही होगी।"

सम्पूर्ण और शुद्ध अहिसा मे अपनी श्रद्धा दोहराते हुए उन्होने अन्त मे कहा था, "मै तो व्यावहारिक आदमी हू और हर बात को उसके नतीजे से परखता हू। अभी कुछ वक्त के

लिए तो मेरा काम होगा सिर्फ राह देखना और निगाह रखना। अपने सारे कामो मे मै अहिंसा से बधा रहूंगा, जो कि मेरे जीवन का मूल आधार है।"

६ मार्च, १९४८ को पाकिस्तान डोमिनियम पार्लमिण्ट में पहली वार बोलते हुए जब उन्होने पठानिस्तान की हलचल का अर्थ स्पष्ट किया और पाकिस्तान को मजबूत और खुश-हाल बनाने के लिए सहिष्णुता तथा इस्लाम की भाईचारे और समानता की सीख को व्यवहार मे लाने की जोरदार अपील की, तब सबकी निगाह उनकी ओर मुड गई।

सामान्य प्रशासन की बहस पर कटौती-प्रस्ताव रखते हुए उन्होने कहा कि आजादी के छह महीनो मे पाकिस्तान शासन ब्रिटिश राज्य के सबसे खराब दिनो से भी "ज्यादा विदेशी और नौकरशाही से जकडा हुआ रहा है। हिन्दुस्तान की हालत से स्पष्ट ही यह बिल्कुल विपरीत स्थिति है, जहा भारत सरकार ने अपने शासन का लगभग पूरी तरह राष्ट्रीय-करण कर लिया है। पाकिस्तान की सरकार को जनता की सेवक बनना चाहिए और तकनीकी विशेषज्ञो के सिवा किसी भी विदेशी को नही रखना चाहिए।"

मन्त्रियो की टोका-टाकी पर उन्होने कहा कि प्रान्तीयता की भावना के लिए मुस्लिम लीग और खासतौर से पजाबी ही जिम्मेदार है। मै न तो पाकिस्तान के टुकडे करना चाहता हू और न उसे नष्ट करना। "मै पठानिस्तान जरूर चाहता हू, पर पठानिस्तान मै पाकिस्तान के भीतर ही चाहता हू,—जैसे कि सिन्धियो को सिन्ध और पजाबियो को

चाहिए ।"

वादशाह खान ने आगे कहा, "पाकिस्तान वन जाने से मुस्लिम लीग का काम पूरा हो गया। उसे अव तोड देना चाहिए और उसके वदले अवाम की खिदमत करनेवाली कोई गैर-फिरकापरस्त नई सस्था वनानी चाहिए। मुस्लिन लीग, जो फिरकापरस्ती पर चल रही है, उसे अव सुधरना चाहिए और पाकिस्तान के सव नागरिको के लिए उसका दरवाजा खुलना चाहिए। मुल्क की वहतरी मे वह इसी तरह कुछ मदद कर सकती है। ब्रिटिश और अमरीकी तकनीकी विशेषज्ञो को औद्योगिक विकास के लिए रखा जा सकता है, पर शासन से उन्हे हटाना ही चाहिए, नही तो शासन से पाकिस्तानियो का विश्वास उठ जायगा।"

एक अखवारी वक्तव्य मे उन्होने अपने ऊपर और खुदाई खिदमतगारो पर हुए जुल्मो की मिसाले दी। पाकिस्तान सरकार ने इन्कार किया था कि उनके अखवार 'पख्तून' का गला घोट दिया गया, पर जिला मजिस्ट्रेट ने पहले प्रकाशक के इस्तीफे पर उसे फिर से चलाने की इजाजत तक नही दी थी। उन्होने कहा, "किसी अखवार के प्रकाशन के लिए अनुमतिपत्र नामजूर करना और उसकी वजह से उसका वन्द हो जाना, उसका गला घोटना नही तो क्या है?"

फिर उन्होने कहा, "विरोधी पार्टियो की खवरो पर पूरी तरह पावन्दी लगाने के लिए सरकार ने क्या तरीके अख्तियार किये है, उनकी पूरी खवर उन्हे नही है। पर

सचाई यह है कि लाल कुर्तीवालो के दो अहम जलसों में अखबारी नुमाइन्दे मौजूद थे, फिर भी उनकी कार्रवाई किसी भी अखबार मे कही नही छापी गई। आखिर अखबारी नुमाइन्दो ने यह सारी तकलीफ योही नही उठाई थी।"

नागरिक स्वतत्रता को दबाया गया था। मर्दान जिले में उन्हे सामाजिक सम्पर्क रखने और दोस्तो के यहा मिलने-जुलने जाने की भी इजाजत नही दी गई। जब उन्हे अदालत मे जाना पडा, तो सारे प्रदेश पर जाव्ते फौजदारी की दफा १४४ लगा दी।

जब देश मे विदेशी शासन था तब ऐसी बातो का होना समझ मे आ सकता था, मगर जब पाकिस्तान मे एक अवामी इस्लामी हुकूमत थी, तब उनकी प्रादेशिक सरकार वही पुराने नौकरशाही तरीके, जो विदेशी साम्राज्यवादी काम में लाते थे, क्यो काम मे लाती है, यह उनकी कल्पना से परे था।

जब वह कराची जा रहे थे तो करीव तीस खुदाई खिद-मतगारो ने उनके साथ जाने का आग्रह किया। गरीब होने पर भी वे अपने खर्चे पर वहा गये और उनके अगरक्षक की तरह रहे। उतमनजाई गाव मे या दूसरी जगह जहां भी बादशाह खान जाते, वे उनकी रक्षा के लिए सशस्त्र पहरा देते रहते थे। गाधीजी के उतमनजाई आने पर उनकी हिफा-जत के लिए रात को पहरा रखा गया था और गाधीजी ने इस पर उन्हे डाटा था। दस साल पहले की उस घटना की याद आने पर बादशाह खान ने उन्हे ऐसा करने से रोका। पर कई वार डाटे जाने पर भी जिसे वे अपना कर्तव्य मानते

थे उससे पीछे नही हटे। एक अखवार ने इस सवध मे लिखा, "अपने प्रिय नेता के जीवन के लिए उन्हे वहुत चिन्ता है और उसके प्रति उनकी श्रद्धा वहुत ही हृदय-स्पर्शी है। उन्हे वहुत मुसीवते उठानी पडती है, पर वे एक मिनट के लिए भी अपना पहरा कम नही करते।"

२

सर्वोत्तम समय

वादशाह खान पाकिस्तान मे सव पददलित और शोपित तबको की निगाह मे मशहूर तो पहले ही हो चुके थे, गाधीजी के महाप्रयाण के बाद सारे प्रगतिशील और उदार तत्वो के केन्द्र भी वही वन गये। कराची मे उनके सम्मान मे दी गई एक चाय-पार्टी मे सिन्ध की अल्पसख्यक जमात के एक प्रतिनिधि ने कहा कि महात्मा गाधी जवतक जिन्दा थे तवतक अपनी कठिनाइयो के समय समाधान के लिए हम हमेशा उनके पास जाया करते थे। मगर अव आपके पास आया करेगे, क्योकि "महात्माजी के वाद हम आपको ही मानते है।" यह कहकर जो कठिन समय आगे आ रहा है, उसमे अपनी रहनुमाई के लिए उन्होने वादशाह खान से प्रार्थना की। जवाव मे वादशाह खान ने कहा कि पश्चिमी पाकिस्तान के अल्पसख्यको के दुख की कहानिया मैंने वहुत ध्यान से सुनी है। यह सवकी परीक्षा और कसौटी

का समय है। परमात्मा ऐसे कसौटी के प्रसग मानव-जाति को भेजते रहे है, लेकिन कामयाब सिर्फ वही मुल्क, जमात और व्यक्ति होते है, जो धीरज, बर्दाश्त, हिम्मत और श्रद्धा के साथ कष्टो का सामना करते है।

उन्होने आगे कहा कि खुदाई खिदमतगारो को उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त मे मन्त्रित्व मिला, परन्तु वह टिक नही सका, क्योकि उन्होने जनता और गरीबो की जैसी चाहिए वैसी सेवा नही की। उन्होने जनता को दिये हुए वचन पूरे नही किये। अपने सरहदी प्रान्त मे काग्रेस-मन्त्रिमडल की इस कमजोरी की ओर उन्होने काग्रेस कार्यकारिणी को सचेत किया था, परतु न तो कार्यकारिणी ने और न मन्त्रिमडल ने ही इस ओर ध्यान दिया। नैतिक नियमो के बन्धनो से कोई भी मुक्त नही है। "सत्य और न्याय ही अतत इस दुनिया मे जीतते है। सिर्फ नि स्वार्थी और लगनवाले नेता, देश की तरक्की ला सकेगे, स्वार्थी और खुदगर्ज लोग नही। जब ये गुण भारत और पाकिस्तान के नेताओ में दिखाई देगे तभी समृद्धि और प्रगति का रास्ता खुलेगा।"

उन्होने कहा कि पठान और देश के दूसरे प्रगतिशील तबको के लम्बे स्वातत्र्य सग्राम के परिणामस्वरूप पाकिस्तान बना। अगर उन्होने अग्रेजो को सत्ता छोडने पर मजबूर न किया होता तो, पाकिस्तान का निर्माण ही नही होता। पर देश छोडते हुए अग्रेज शासको ने सत्ता सौपते समय स्वतन्त्रता के लिए सघर्ष करनेवालो के हाथ मे सत्ता न देकर ऐसे लोगो को दी, जिन्होने उसके लिए कुछ नही किया था। यही हमारी

आज की दुर्दशा का मुख्य कारण है।

तकरीर पूरी करते हुए उन्होने कहा, "मै तो असल मे धर्म का साधक हू। आपको अपने गुस्से को नियन्त्रित करना सीखना चाहिए। सारे सकटो मे अपने नैतिक सिद्धान्तो पर आपको अटल रहना चाहिए और यह देखना चाहिए कि सरकारी शासन चलाने मे भी नैतिकता न छोडी जाय।"

पठानो के एक समूह मे बोलते हुए, जिसमे मजदूर वर्ग के लोग खासतौर पर थे उन्होने कहा कि पठान एक-चौथाई शताब्दी तक आजादी की जग मे मुब्तिला रहे है और उन्ही के कारण पाकिस्तान का बनना सभव हुआ है। पाकिस्तानी शासन मे जिस पूजीवादी वर्ग की प्रमुखता है, वह तो पठानो से डरता था, क्योकि पठान नि.स्वार्थ थे और वतन के लिए कुरबानी करने को हमेशा तैयार थे।

उन्होने आगे कहा कि मुल्क के बंटवारे के मै सख्त खिलाफ था। पर जब पाकिस्तान बन गया, तो पाकिस्तान के अच्छे-बुरे को ही मैं अपना अच्छा-बुरा मानता हू। पठानो को पाकिस्तान मे अपना भविष्य खतरे मे लगा। वे जानना चाहते थे कि उनकी ठीक-ठीक जगह क्या होगी ? क्या उन्हे बराबर के हक मिलेंगे ? अगर उन्हे वाकई भाई-बिरादर समझा जाता है, तो फिर पाकिस्तान की शासन-व्यवस्था के बारे मे उनसे सलाह-मशविरा क्यो नही किया जाता ? हिन्दुस्तान मे तो सूबाई हुकूमतो से मशविरा किया गया कि कौन-सा गवर्नर कहा रखा जाय, जबकि यहा सरहदी सूबे मे एक ऐसे अग्रेज नौकरशाह को गवर्नर के रूप मे लाद दिया गया, जो पठानो

को सख्त नापसन्द था ।

यह बात उन्होने फिर दोहराई कि खुदाई खिदमतगार हुकूमत में कोई हिस्सा नही चाहते, न कोई जाती फायदे ही चाहते है । उनका तो सिर्फ यह मकसद है कि पाकिस्तान के अवाम की मदद करके उन्हे किसी तरह गरीबी और पिछडेपन से निजात दिला सके ।

मुस्लिम लीग अपनी मजहबी नीति छोडने को राजी नही हुई, इसलिए खानसाहब को मजबूरन जमीअत-उल-अवाम के नाम से एक अलहदा असाप्रदायिक जमात बनानी पडी, जिसमे पाकिस्तान-भर के उदार और प्रजातन्त्रवादी लोग शामिल हुए । इस जमात का मकसद पाकिस्तान को मजबूत और स्थायी बनाने की दृष्टि से उसे सोशलिस्ट जमहूरियतो के सघ का रूप देना था । कहा गया कि उसका आधार आम लोगो की राय पर हो, उसमे सब लोगो की स्वतन्त्रता बर-करार रहे और पडोसी मुल्को, खासतौर से हिन्दुस्तान के साथ सास्कृतिक सबध कायम किये जाय ।

जमीअत-उल-अवाम के सम्मेलन मे सरहदी हुकूमत की इस दमननीति के खिलाफ प्रस्ताव पास किये गए और हजारो खुदाई खिदमतगारो को जेलो मे ठूसने की निन्दा की गई । साथ ही बिलोचिस्तान के कौमी नेता खान अब्दुल समद खान की रिहाई के लिए भी पुरजोर अपील की गई ।

यह भी ऐलान किया गया कि नई हुकूमत को मजबूत बनाने और इसकी बेहतरी और तरक्की के लिए मिलकर बनाये गए किसी भी कार्यक्रम की बिना पर हुकूमत के अन्दर

या वाहर की किसी भी पार्टी के साथ मिलकर काम करने के लिए अवाम की यह पार्टी हमेशा तैयार रहेगी।

यह भी फैसला किया गया कि अगर किसी और पार्टी के साथ कोई समझौता न हो सका, तो फिर यह पार्टी पाकिस्तान की मौजूदा हुकूमत की पूरी मदद करेगी।

. ३ .

जिन्दा ही दफनाये गए

सरहदी सूबे मे लौटने पर वादशाह खान ने लोगो के सामने जमीअत-उल-अवाम का कार्यक्रम रखते हुए बताया .

"मै पाकिस्तान की (सविधान सभा) का तमाशा देखकर आया हू। मुझे इन पाकिस्तानी लीडरो और उन पुराने वरतानवी नौकरशाहो मे कतई कोई फर्क नजर नही आया।

"सबसे वडी दलील ये लोग अपने हक मे यह देते हैं कि हमारी तो अभी नई-नई हुकूमत है। मै कहता हू कि ये हिन्दुस्तान की तरफ नजर उठाकर देखे जहा के लीडर कैसे-कैसे तूफानो के वीच से अपने मुल्क की किश्ती को सही-सलामत निकाल ले आये हैं। उन्होंने तो नया आईन (सविधान) वना लिया है और वे आगे वढ रहे हैं, मगर हम पाकिस्तान मे अभीतक कुछ भी नही कर पाये।"

१५ अप्रैल १९४८ को वादशाह खान कायदेआजम जिन्ना

से मिले। कायदेआजम ने कहा कि खुदाई खिदमतगार मुस्लिम लीग मे मिल जाय। बादशाह खान ने पाकिस्तान के प्रति अपनी वफादारी को दोहराते हुए साफ-साफ अपनी मजबूरी जाहिर कर दी कि ऐसा नही हो सकता। उसके बाद कायदे-आजम ने एक बडे जलसे मे यह ऐलान कर दिया कि बाद-शाह खान के साथ उनकी बातचीत नाकाम रही। उन्होने पठानो से कहा, "उन लोगो से कोई ताल्लुक मत रखो, जो जाहिर तो यह कहते है कि वे पाकिस्तान के वफादार है मगर हरकते ऐसी करते है, जो मुल्क को कमजोर करने वाली हो।"

१३ मई को बादशाह खान ने ऐलान कर दिया कि खुदाई खिदमतगारो का आन्दोलन पाकिस्तान के तमाम सूबो में फैला दिया जायगा। उन्होने बताया कि खुदाई खिदमत-गार जमीअत-उल-अवाम के वालटियरो के तौर पर अवाम की खिदमत करेगे, जिसके कि वह पहले सदर चुने गये है।

इसपर उन्हे 'तोडफोड करनेवाला' कहा गया और सरहदी सूबे के बडे वजीर खान अब्दुल कयूम ने बादशाह खान के लिए यहातक कहा कि "वह दुश्मन है और पाकि-स्तान की हुकूमत की जड खोखली करने की बेतरह कोशिश कर रहे है। इन्होने पाकिस्तान के प्रति वफादारी का जो हलफ उठाया है वह भी महज एक स्वांग है। लिहाजा हम अपने अमन-पसन्द अवाम की हिफाजत के लिए, बादशाह खान के खिलाफ, सख्त-से-सख्त कार्रवाई करने मे भी गुरेज नही करेगे।"

वादशाह खान ने अपने एक वयान मे कहा, "जितना मै सोचता हू उतनी ही हैरत होती है कि आखिर यह हुकूमत किधर जा रही है ! ये लोग एक तरफ तो इस्लाम के नाम पर मुल्क को एक और मजवूत वनाने की वाते करते है और दूसरी तरफ हम लोगो के साथ ऐसी तगदिली और अदूर-दर्शिता का सवूत देते है जवकि हम भी इनमे से ही है और पाकिस्तान को मजवूत और खुशहाल वनाने के वुनियादी उसूलो के लिए इनके साथ सहमत है। फर्क सिर्फ इतना है कि उस मजिल तक पहुचने के उनके साधनो और दृष्टिकोण से हम सच्चे दिल से भिन्नता रखते है।"

उन्होने आगे कहा, "बटवारे से पहले हिन्दू महासभा और डाक्टर अम्वेडकर की अनुसूचित जाति सघ काग्रेस के सख्त खिलाफ थे, लेकिन हिन्दुस्तान के आजाद होते ही वहा की तमाम मुखालिफ पार्टिया एक हो गई, यहातक कि डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी और डाक्टर अम्बेडकर अव नेहरूजी और सरदार पटेल के साथी है, हालाकि उन्होने अपनी पार्टियो को काग्रेस मे नही मिलाया। इस सवके वर-अक्स यहा पाकिस्तान मे जो कुछ हो रहा है वह हमारी वद-किस्मती का सवूत है और अगर वह सव जारी रहा तो सिर्फ मुस्लिम लीग के नेताओ को ही नही, वल्कि पूरे मुल्क को इसका खमियाजा उठाना पडेगा। मैने कितनी वार अपने वयानो और तकरीरो मे पाकिस्तान के प्रति अपनी वफादारी का हलफ उठाया है, लेकिन फिर भी हुकूमत मुसलमानो के वीच फूट डालने पर तुली हुई है और खुदाई खिदमतगारो के

साथ दुश्मनी का सलूक कर रही है। मैने तो हुकूमत से यहा-तक कह दिया है कि हमे तुम्हारी गद्दिया नही चाहिए। तुम सभी वजारते अपने पास रखो, हमें तो सिर्फ रचनात्मक तरीके से अपने मुल्कवालो की खिदमत करने दो। मगर ये हमें इतना भी नही करने देते।"

कायदे-आजम को भी उन्होने नही छोडा। कहा, "पाकिस्तान के गवर्नर जनरल के तौर पर मिस्टर जिन्ना मुस्लिम लीग के नुमाइदे नही है। उन्हे तो बरतानिया के बादशाह ने मुकर्रर किया था, लिहाजा वह बादशाह के प्रति ही जिम्मेदार और जवाबदेह है, हमारी कौम के प्रति नही।"

अपने साथी पठानो को भी उन्होने चेतावनी दी, "मेरे भाइयो, मै तुम लोगो को यह बात खोलकर समझा देना चाहता हू कि जिस इस्लाम और कुरान की शरह के लिए तुम लोगो ने अपनी जान की बाजी लगाई और जो वाकई तुम्हे बहुत अजीज भी है, वह पाकिस्तान मे हर्गिज-हर्गिज लागू नही होनी है।"

अपनी तकरीर खत्म करते हुए बादशाह खान ने कहा, "मेरे पठान भाइयो, मै तुम्हे बताना चाहता हू कि तुम भी पाकिस्तान के हिस्सेदार हो और इसके एक-चौथाई हिस्से पर तुम्हारा पूरा-पूरा हक है। अब यह तुमपर है कि उठो, एक हो जाओ और हलफ उठाओ कि अपना हक लेकर रहोगे। मिलकर चलो और इरादो की मजबूती के साथ कदम उठाओ और उस रेत की दीवार को नेस्तनाबूद कर दो, जो पाकिस्तान के नेताओ ने तुम्हारे गिर्द खडी कर रखी है। हम

इन मौजूदा हालात को ज्यादा देर तक वर्दाश्त नही कर सकते। वस, अब कमर कस लो और वढ चलो अपनी मजिल की तरफ। पठानो की आजादी ही तुम्हारी मजिल है। हमने पहले भी बहुत कुरवानिया की है और बेपनाह मुसीवते सही है। जवतक हम पठानिस्तान नही बना लेते, हम चैन से नही बैठ सकते। पठानिस्तान यानी पठानो की हुकूमत, पठानो के जरिये और पठानो के वास्ते।"

इसके तीन महीने बाद बादशाह खान को गिरफ्तार कर लिया गया और इसी दिन उनके बेटे अब्दुल वली खान को भी उनके गाव मे अपने घर से कैद कर लिया। बन्नूवाली सडक पर वादा दाऊद शाह नाम के एक गाव के एक छोटे-से लिपे हुए डाकघर मे उनपर मुकदमा चलाया गया। बगावत का इल्जाम लगाया। साथ ही यह भी कि इन्होने इपी के बागी फकीर के साथ मिलकर साजिश की है। बादशाह खान ने वेकसूरी जाहिर की। इसके सिवा मुकदमे की कार्रवाई मे कोई भी हिस्सा लेने से साफ इन्कार कर दिया। उनसे कहा गया कि सरहदी अपराध कानून की धारा ४० के अधीन वह तीन साल तक अपनी नेकचलनी की जमानत दिलाये। उसके जवाब मे इन्होने कहा कि न मैने अवतक इस तरह की जमानत दी है और न अब देने को तैयार हू। नतीजा यह हुआ कि उन्हे तीन साल की सपरिश्रम सख्त कैद की सजा सुना दी गई।

बादशाह खान की गिरफ्तारी के फौरन बाद सरहदी सूबे की सरकार ने एक सरकारी बयान जारी किया, जिसमे

अपनी सफाई पेश करते हुए कहा गया कि इसके बावजूद कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनो ने मिलकर मुल्क का बटवारा मजूर किया था, अब्दुल गफ्फार खान पाकिस्तान बनने के सख्त खिलाफ है। उन्होने अपने अनुयायियो को १५ अगस्त (आजादी के दिन) के जश्न मे शरीक होने और पाकिस्तानी हुकूमत के प्रति वफादारी की हलफ उठाने से भी रोका। इसीके फलस्वरूप सूबे मे इन्हींके भाई की वजारत को गैर-वफादारी के इल्जाम पर बर्खास्त कर देना पड़ा। इसके अलावा इन्होने जमीअत-उल-अवाम नाम से एक पार्टी बनाई, जिसमे पुराने कांग्रेसी इकट्ठे किये गए। कराची के दूसरे दौरे के बाद बादशाह खान जब सूबे में लौटे तो इनका साफ-साफ इरादा यही था कि सूबे मे उस समय बदअमनी फैलाई जाय जबकि सूबे की तरफ बढती हुई हिन्दुस्तानी फौजों के पहुचने की आशा की जाती थी। गढी हबीबुल्ला पर बम गिरने से बादशाह खान के हौसले और बढ गये।"

इतने थोडे में इससे ज्यादा झूठ और गलतबयानी करना शायद मुश्किल होगा। १६ मई, १६४८ को बादशाह खान ने अपने बयान मे कहा, "मुझे यह जानकर बेहद तकलीफ हुई है कि मेरे बयानो और तकरीरो मे मुखालफ पार्टी के अपने दोस्तों से बार-बार की गई पुरजोर अपीलों के बावजूद जमीअत-उल-अवाम के साथ हमदर्दी के बजाय वे लोग हमारी नीयत पर शक कर रहे है, सिर्फ इसलिए कि हम कभी कांग्रेस के साथ थे। जबकि हम अपनी वफादारी का ऐलान कर चुके हैं, तब तो यह और भी दुर्भाग्य की बात है। मगर शायद हमारे

मुखालिफो की निगाह मे वफादारी की कसौटी सिर्फ एक पार्टी की हुकूमत के आगे बिना शर्त झुक जाना ही है ।"[1]

बादशाह खान की गिरफ्तारी के बाद खुदाई खिदमतगारो से गिन-गिनकर बदले लिये गए, उनपर अनगिनत जुल्म ढाये गए। सबसे बडा कहर तो उनपर १२ अगस्त-१९४८ को बरपा किया गया। उस दिन को सरहदी सूबे के इतिहास मे कभी भुलाया नही जा सकेगा। चारसद्दा तहसील के बाबरा नामक गाव मे खुदाई खिदमतगारो ने एक मुजाहरा किया, तो उनपर अधाधुध गोलिया चलानी शुरू कर दी। देखते-ही-देखते पूरा मैदान खून से रग गया। सरकारी तौर पर लाशो की तादाद पन्द्रह और जख्मियो की पचास बताई गई, लेकिन हकीकत मे सैकडो जाने गई। एक चश्मदीद गवाह ने तो कुरान की कसम खाकर यह बताया कि मरने-वालो की तादाद दो हजार थी। उस इलाके मे सबसे बडा कब्रिस्तान इसी गाव के पास आज भी मौजूद है।

[1]इस इलजाम और बादशाह खान के पूरे जवाब की तफसील जानने के लिए लेखक की किताब 'ए पिलग्रिमेज फार पीस' (नव-जीवन प्रकाशन, अहमदाबाद) देखे; पृ० १८७-१८९

भाग चार

उन्नीस साल बाद

: १ :

घुटी हुई चीख

बादशाह खान से बिछुडे अठारह बरस बीत गये । बीच-बीच में उनकी कारावास-यातनाओं के समाचार जरूर मिलते रहे । लेकिन हम कुछ भी नही कर सकते थे । उनके साथ पत्र-व्यवहार तक पर पाबन्दी थी । बीच में पाकिस्तान की अपनी एक सद्भावना-यात्रा के दौरान जयप्रकाश नारायण ने एक बार उनसे मिलने की कोशिश भी की, लेकिन पाकिस्तानी अफसरो ने उस्तादी से टाल दिया ।

दिसम्बर १९६४ मे अचानक मुझे लन्दन से एक पत्र मिला, जो बादशाह खान का था । वह उर्दू मे उनके हाथ का लिखा हुआ था । उसमे लिखा था :

"शायद आप हम लोगो को भूल गये है, लेकिन हम आपको नही भूले, सुख के दिनो मे आदमी अपने मित्रो को भूल जाता है, लेकिन मुसीबतजदा ऐसा नही कर सकते । अपनी मुसीबत मे आप लोग याद आते ही है । अगर महात्माजी जिन्दा होते तो वह जरूर हमे कभी नही भूलते और इस मुसीबत मे वह जरूर हमारी मदद करते । लेकिन हमारी बदकिस्मती कि वह नही रहे और बाकी लोगो ने हमे भुला दिया ।

"आपको शायद मालूम हो कि मै इग्लैड इलाज के लिए आया हुआ हू। यहा आकर मेरी सेहत कुछ अच्छी हो रही है। लेकिन अब यहा सर्दी का मौसम शुरू हो गया है और डाक्टर का कहना है कि यहा का सर्दी का मौसम मेरे लिए ठीक नही है। उसने मुझे अमरीका जाने और सर्दियो मे वहा की यहा से कम सर्दीवाली आवोहवा मे रहने को कहा है। पासपोर्ट के लिए अपने हाई कमिश्नर को लिखा है। अगर पासपोर्ट मिल गया, तो अमरीका जाने का इरादा है।

"सुशीला (लेखक की बहन, डाक्टर सुशीला नैयर) आजकल कहा है? उसे मेरी तरफ से बहुत-बहुत दुआ और प्यार। आप भी अपनी प्रार्थना के समय मुझे याद किया करे और खुदा से मनाये कि उसकी बनाई खिलकत की खिदमत के लिए मुझे सेहत दे।"

इसके जवाब मे मैने यह लिखा कि मैने इस बीच कई पत्र भेजे, मगर किसी की पहुच तक नही मिली। हमे बताया गया कि हमारी तरफ से आपको मिलने या लिखने की कोई भी कोशिश की गई, तो आप और ज्यादा मुसीबत मे पड जायगे। हमारी हुकूमत भी आपके पाकिस्तानी हुकमरानो के जालिम पजे मे जकडे होने से कुछ भी करने मे असमर्थ थी। नेहरूजी ने एक बार कहा भी था कि पाकिस्तान की सरकार बादशाह खान के साथ जिस तरह का सलूक कर रही है, वह हमारे दिल मे काटे की तरह चुभता है। मगर जैसा कि उन्होने कहा, सब्र और प्रार्थना के सिवा हम कर भी क्या

सकते थे ?

सुशीला ने भी उन्ही दिनो उन्हे एक पत्र लिखा था।

हमारे पत्रो का एक महीने तक कोई जवाव नही आया। लेकिन अपने अगले खत मे बादशाह खान ने देरी की वजह बताई। ६ जनवरी, १९६५ को दारुल-अमान, काबुल से भेजे पत्र में उन्होने मुझे 'जान से अजीज' कहकर संबोधित किया और लिखा, "मैं अमरीका जाकर फुरसत से तुम्हे खत लिखना चाहता था, मगर वहा पहुच ही नहीं सका, क्योकि लन्दन के अमरीकी दूतावास ने मुझे वहा जाने का वीसा (अनुमतिपत्र) ही नही दिया। लिहाजा मुझे अब अफगानिस्तान आना पडा है। यहा आने के बाद से लगातार अस्पताल मे ही पडा रहा, जहा से अभी-अभी छुट्टी मिली है।" हमने उन्हे पाकिस्तान के पते पर जो पत्र भेजे थे, वे उन्हे नही मिले, न हमारी भेजी हुई कोई किताब ही उन्हे मिली।

अपने पत्र मे आगे उन्होने लिखा

"आप जो कहते हैं वह ठीक है, लेकिन जो मुसीबत हम उठा चुके है और उठा रहे है, उससे ज्यादा मुसीबत और क्या हो सकती है ? जाती नुकसान मेरी नजर मे कोई माने नहीं रखता। जो चीज मुझे गमगीन करती है वह यह कि हिन्दुस्तान की आजादी की खातिर हमने कष्ट उठाने मे हील-हुज्जत नही की, मगर कांग्रेस ने आजादी मिलते ही हमे छोड दिया। कांग्रेसवाले तो मौज करने लगे और हम तकलीफ भुगतने के लिए अकेले पड गये। हमे तो यहा (पाकिस्तान मे) अभी भी 'हिन्दू' कहकर हिकारत की निगाह से देखा जाता है। कांग्रेस ने

हमारे साथ जो किया वह अच्छा नही किया ।

"जब मै लन्दन मे था तब आपकी किताब 'पिलग्रिमेज फार पीस' मिली थो । शुक्रिया कि आप मुझे भूले नही है । खुदा आपको इसका सिला देगा । हम मजलूम है और मजलूमो की मदद करना सही मानो मे मजहब का निचोड है । मुझे ताज्जुब है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान मे इसी मजहब के नाम पर मासूम मजलूमो के खून की नदिया वहाई गई । असल मजहब यह नही, यह तो खुदगर्ज लोगो के हाथो मजहब की बिगाडी हुई भद्दी सूरत थी, जो हमारे सामने आई । सच्चा मजहव कभी भी नफरत नही सिखा सकता, वह तो सच्चाई और मुहब्बत का अलम-बरदार होता है ।"

यह पत्र पाने पर मै बडे धर्मसकट मे पड गया कि मुझे क्या करना चाहिए । इतने मे सर्व सेवा सघ के मत्री ने मुझे लिखा कि विनोबाजी तथा सर्वोदय के दूसरे लोग चाहते है कि उनकी तरफ से मै जाकर बादशाह खान से मिलू और उनकी तरफ से प्रेम, सहानुभूति तथा सम्मान का सदेश उन्हे पहुचाऊ मैने खानसाहब को सारी स्थिति लिख भेजी । जवाब मे उन्होने लिखा कि वह भी मुझसे मिलना चाहते है । इसके लिए उन्होने तारीख भी सुझाई और लिखा कि वह अपना दौरे का कार्यक्रम इस मुलाकात के लिए मुल्तवी कर रहे है ।

मगर जितनी जल्दी मै काबुल के लिए रवाना होने को उतावला था उतनी ही रुकावटे रास्ते मे आ पडी । उन्हीं दिनो कच्छ मे लडाई हो गई, जिससे पासपोर्ट मिलना दुश्वार हो गया । आखिर २२ जुलाई, १९६५ को मै

भीतर आ सके। दिन के दो वजे हवाई जहाज ने उड़ान भरी। फौरन ही कागज के नैपकिन और ठडा शरवत मुसाफिरो मे वाटे गये। थोडी देर वाद दोपहर का खाना आ गया। मगर मेरी खाने की इच्छा नही हुई। मुझे कुछ परहेज भी था, क्योकि मुझे शक हुआ कि कही अडे की मिलावट है। कॉफी के प्याले मे पूरा पैकेट चीनी और दूव का पाउडर मिलने के वाद कॉफी अच्छी हो गई, लेकिन दूसरा प्याला फिर विना चीनी और दूध के ही पीना पडा।

करीब आध घटे वाद लगा, मानो हम उथले पानी के विस्तृत मैदान के ऊपर से गुजर रहे है। मेरे सामनेवाली सीट पर बैठी हुई एक अग्रेज औरत ने पूछा, "क्या यह कच्छ की खाडी है?" कच्छ की खाडी का उन दिनो अखबारो मे काफी जिक्र था और अग्रेजो की नजरो मे भारत की कोई भी चीज, चाहे वह मौसम या आबहवा ही क्यो न हो, हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के झगडे से ताल्लुक न रखे, सो कैसे हो सकता है? जव मैने उसे वताया कि यह कच्छ की खाडी नही, वल्कि पजाब की एक वाढ आई हुई नदी है, तो वेचारी काफी निराश हो गई। इसके वाद हम मिट्टी के कई पहाडो पर से गुजरे। मैदान के वीच खडे प्रलयपूर्व के दानवो के पिजरे जैसे वे लग रहे थे। उन्हे लाघकर हम गुलाबी रग के पथरीले मैदान पर उडने लगे। यह मैदान कुछ इस तरह का दीख रहा था, जैसे कोई पिघली हुई चट्टान अचानक लहरदार डिजाइन मे जम गई हो—एक व्यापक पथरीली निर्जनता, जहा न कोई पेड़ था, न पानी। दिन के चार बजने वाले थे। लहरो के

चले गये थे, मगर वह १९४७ से १९५७ तक भारत मे ही रहे। १९५७ मे किसी विभागीय झगडे की वजह से उन्होंने नौकरी छोड दी और काबुल चले गये। खानसाहब के काबुल आने के समय से गनी बराबर उनके साथ उनकी हाजिरी मे है।

हवाई अड्डे की औपचारिकताओ से निपटकर हम एक शानदार सफेद कार मे दारुलअमन की ओर चल दिये। शहर से पाच मील दूर बादशाह खान सरकारी मेहमान के तौर पर रह रहे थे। गनी ने रास्ते मे मुझे बताया कि खानसाहब ने पिछले कई दिनो से बिलकुल आराम नही किया और उन्हे इधर-उधर जाने-आने से रोक पाना भी मुश्किल है। दारुल-अमन से पहले उनके ठहरने का इन्तजाम शहर मे किया गया था, मगर लोग एक मिनट को भी उन्हे चैन नही लेने देते थे। हर वक्त मिलनेवालो का ताता लगा रहता था। तब दूर का यह स्थान उनके लिए चुना गया। फिर गनी ने शिकायत के लहजे मे कहा, "अब्बाजान को इस कार पर भी ऐतराज है। कहते है, यह बहुत शानदार है। वह तो जीप मे सफर करना चाहते है।"

जिस वक्त हम दारुलअमन पहुचे, सूरज लगभग डूब चुका था। चारो तरफ दीवारो से घिरे हुए मकान के बडे-से लोहे के फाटक के बाहर दो हथियारबन्द दरबान चौकस खडे थे। हमारी कार को रास्ता देने के लिए दरवाजा आहिस्ता से खुला और हमारे अन्दर जाने के बाद बन्द हो गया। खान-साहब अपने निवास के बाहर लान मे कुर्सिया डाले बीसियो लोगो से घिरे बैठे थे। मुसा हुआ भूरे रग का लम्बा कुर्ता और

पाजामा पहन रखा था। मुझे देखते ही वह उठ पडे और दो बार गले लगकर मिले। फिर वहा वैठे तमाम लोगो से मेरा परिचय कराया। उनमे से हरेक ने पठानी ढग से हाथ मिलाया। फिर जब वे लोग विदा हुए तव भी सबने उसी तरह मुझसे हाथ मिलाये। इस पठानी हाथ-मिलाई ने मेरा सारा जिस्म झकझोर डाला। पठानी हाथ-मिलाई अविस्मरणीय अनुभव है। पठान प्रकृति की पूरी गर्मजोशी उनके हाथ मिलाने के अदाज से ही जाहिर हो जाती है और इसे आप लाख भूल जाना चाहे, मगर आपका दुखता हुआ कधा और फडकती कलाई हर्गिज भूलने नही देगी।

मैंने उन्हे उसी रूप मे पाया, जिस रूप मे कि हम उन्हे पहले से जानते थे। वीच मे वीते इतने वरस उनपर अपना कोई असर नही डाल पाये थे। चेहरा अलवत्ता जरा सूख गया था और वाल कुछ ज्यादा सफेद हो गये थे, वरना और कोई तब्दीली नही आई थी। ज्यादा उम्र की वजह से कधो मे कुछ झुकाव जरूर लग रहा था। मगर कमर से अभी कोई खम नही आया था। शरीर के सब अग पूरी तरह काम कर रहे है। आखो मे पूरी तरह चमक है। यकीन ही नही आता था कि हम उन्नीस वरस वाद मिल रहे है। उन उन्नीस वरसो वाद जिनमे से पन्द्रह साल उन्होने जेल मे गुजारे थे। इससे भी वढकर वात यह है कि उनमे रत्ती-भर भी कडुवाहट मुझे नही लगी, हालाकि मुल्क के वटवारे के कारण उन्होने और उनके साथियो ने बेहद तकलीफे सही थी। वटवारा भी उनकी राय लिये विना मान लिया गया था और

बाद मे भी हमने उनकी अवहेलना की थी। इस सबके बावजूद उनके दिल मे अपने पुराने दोस्तो, कांग्रेसी साथियो और हिन्दुस्तान के लोगो के लिए इज्जत और मुहब्बत है। यह उनके हृदय की महान उदारता की ही सूचक है।

उस वक्त अपने मिलनेवालो के साथ उनकी जो बातचीत चल रही थी वह सब पश्तो मे थी। एक-आध लफ्ज को छोडकर मेरे पल्ले कुछ नही पड रहा था, लेकिन उन लोगो के चेहरो पर खानसाहब के प्रति जो श्रद्धा-भाव प्रकट हो रहा था और उनके एक-एक शब्द को वे ध्यान से सुन रहे थे, वह मुझसे छिपा न रहा। उनको देखते वे मानो थकते ही नही थे और उनकी हर हरकत पर उनकी उत्सुक नजर थी।

मुलाकातियो के चले जाने के बाद हम लोग अन्दर गये और रात के साढ़े नौ बजे तक रेडियो पर खबरे सुनते रहे। उसके बाद हम खाना खाने बैठे। खाने मे उबली हुई सब्जिया, पके हुए टमाटर और प्याज का सलाद, नान, दही और फल थे। अपने पुराने मित्रो के बारे मे जानकर खानसाहब को बहुत खुशी हुई और हरेक के बारे मे उन्होंने अच्छी तरह पूछताछ की। खा-पीकर हम करीब पौन घण्टे तक टहलते रहे। रात के साढे ग्यारह बजे के लगभग जाकर सोये।

अफगान सरकार ने उनके लिए यह सजा-सजाया मकान मय नौकर-चाकरो के दे रखा है। एक कार और ड्राइवर भी उनकी सेवा मे रहता है। मकान मे बिजली लगी हुई है। गुसलखानो मे ठण्डे-गरम पानी के फव्वारे का इतजाम और फ्लश

तथा गावर वाथ भी है। नीचे-ऊपर मिलाकर पाच कमरे है। वहा के प्रधानमत्री ने अपने उप-सचिव को उनके ओर सरकार के वीच सम्पर्क-अधिकारी का काम सौप रखा है। साथ ही उप-सचिव को यह हिदायत दे रखी है कि वादशाह खान की हर जरूरत का ध्यान रखे। मगर उनकी जरूरते वहुत कम है, क्योकि प्राचीन खलीफो, अवूवकर और उमर की तरह सीधे-सादे तरीके से जिन्दगी गुजारने पर उनका आग्रह है। इन खलीफो का वह अक्सर उल्लेख भी किया करते है। मुझे यह भी पता चला कि सरकारी मेहमानखाने मे अफगान स्वागत-सत्कार के स्तर का वढिया खाना हर रोज उनके लिए तैयार किया जाता है, मगर खानसाहव उसे खाते नही। कहते है कि उस तरह का खाना खाकर मैं जनता के खजाने पर वोझ वनना नही चाहता।

३ .

मौत के मुंह में

२३ जुलाई, १९६५

पिछली दो रात देर तक जागते रहने की थकान की वजह से सुवह मेरी आख साढे छह वजे खुली। मुझे पता चला कि वादशाह खान अलस्सुवह साढे चार वजे उठ जाते है, जवकि आसपास की पहाडी चोटियो पर अभी पौ ही फूट रही होती है। उठने के वाद वह एक प्याला चाय पीकर

टहलने निकल पडते है। साढे सात बजे नाश्ते पर ही उनसे मेरी भेट हुई। उनके नाश्ते मे चाय के साथ अण्डे और दो टोस्ट आये। उसके बाद हम साढे बारह बजे तक बातचीत करते रहे।

मुझे उनकी तन्दुरुस्ती की फिक्र थी। उन्होने बताया कि काबुल आने के बाद उसमे काफी सुधार हुआ है। जेल से निकले तब तो एकदम टूट चुके थे। पाकिस्तानी हुकूमत ने उन पर सख्ती करने मे कोई कसर नही छोडी थी। बस मार ही नही डाला, यही गनीमत थी और रिहा भी तब किया, जब लगा कि अब तो मरने ही वाले है।

हैदराबाद (सिन्ध) की जेल मे उन्हे नजरबन्द किया गया था। वहा की आबोहवा उन्हे माफिक नही आई। कुछ ही दिन बाद पैरो मे सूजन शुरू हो गई। उन्हे गुर्दे की तक-लीफ का शक हुआ। जेलर पजाबी मुसलमान था। उसने कोई ध्यान न दिया और खानसाहब को वक्त पर अस्पताल मे दाखिल नही कराया गया। उनका डाक्टरी मुआइना तब कराया गया जबकि उनका गुर्दा करीब-करीब बेकार हो चुका था। यह तो उनकी मजबूत काया का ही करिश्मा था कि अपने-आप ठीक हो गये।

हैदराबाद से उन्हे लाहौर भेज दिया गया। जाहिरा तो इलाज के लिए ही वहा भेजा गया, मगर हकीकत यह थी कि उन्हे लाहौर डिस्ट्रिक्ट जेल मे नजरबन्द के रूप मे रखने की व्यवस्था की गई थी। उनकी तन्दुरुस्ती पर किसीने कोई ध्यान नही दिया। न कोई डाक्टर उन्हे देखने आया, न

इलाज हुआ। पूरे एक साल तक वह चुपचाप यह सब सहते रहे। आखिर जब बर्दाश्त से बाहर हो गया, तब उन्होने जेल के सुपरिटेडेट को लिखा कि उनका डाक्टरी मुआइना कराकर मुनासिब इलाज कराया जाय, नही तो वह खाना-पीना बन्द कर देगे। इसपर भी कुछ नही हुआ तो उन्होने भूख-हडताल शुरू कर दी। जब चार दिन तक उन्होने कुछ भी नही खाया, तब कही जाकर उन्हे निरन्तर अस्पताल मे इलाज के लिए मुलतान भेजा गया। मुलतान मे भून डालनेवाली गर्मी पड रही थी, जुलाई-अगस्त का महीना था। साफ अन्दाजा लगाया जा सकता है कि उनकी क्या हालत हुई होगी, जबकि छाया मे भी तापमान ११७ डिग्री रहता था।

फिर भी डाक्टरी इलाज की वजह से मुलतान मे हालत कुछ सुधार पर आ गई, लेकिन गर्मी मे उनका दम घुटने लगा था। उन्होने अफसरो से कहा कि मेरा कही और तबादला कर दिया जाय, तब उन्हे फिर से लाहौर भेज दिया गया, मगर तब जबकि वह फिर बीमार पड चुके थे।

लाहौर-जेल मे उन्हे पेचिश की गलत दवा दे दी गई। उससे उन्हे बेहद तकलीफ भोगनी पडी। मगर जेल के डाक्टर ने बिल्कुल परवा न की, उल्टे बत्तिया बुझा दी गई और जिस जगह वह नजरबन्द थे वहा ताला डलवा दिया। इस तरह छत्तीस घण्टे तक वह बिना किसी देखभाल के रहे। इसका नतीजा यह हुआ कि उनका ब्लड प्रेशर बढ गया, जब कि इससे पहले उनका ब्लड प्रेशर नार्मल से नीचे था। दिल, जिगर और गुर्दे सब कमजोर हो रहे थे और पैरो की सूजन

भी फिर से उभर आई थी, यहातक कि उनके लिए चलना-फिरना भी मुश्किल हो गया। इसके अलावा और भी बहुत-से तकलीफदेह आसार दिखाई दिये। तब उन्हे वहा से हरिपुरा भेज दिया गया। फिर जबतक उन्हे अपने इलाज के लिए इग्लैड जाने की इजाजत नही मिली तबतक उन्हे बराबर या तो जेल मे रखा गया या नजरबन्दी मे।

इग्लैड का जलवायु भी उन्हे माफिक नही आया और डाक्टरो ने अमरीका जाकर इलाज कराने की राय दी, जहा की जलवायु उनके अनुकूल हो सकती थी। मगर पाकिस्तानी अधिकारियो ने अमरीकी सरकार को सलाह दी कि उन्हे अमरीका जाने की इजाजत न दी जाय। इसपर खानसाहब ने अफगानिस्तान जाने का फैसला किया। पाकिस्तान के राजदूत ने उन्हे अफगानिस्तान जाने से भी रोकने की कोशिश की। कहा कि वह बेरूत, ईरान या काहिरा जहा चाहे चले जाय, वहा उनके इलाज का भी इन्तजाम किया जा सकता है, मगर हिन्दुस्तान या अफगानिस्तान का नाम न ले। काहिरा पहुचने पर उन्हे पता चला कि पाकिस्तान सरकार ने मिश्र स्थित अपने राजदूत की मार्फत अफगान दूतावास को यह कहलवा दिया है कि उन्हे अफगानिस्तान न जाने दिया जाय, मगर अफगान सरकार इससे पहले ही उन्हे इजाजत दे चुकी थी। इस तरह वह अफगानिस्तान पहुचे।

खानसाहब जबसे अफगानिस्तान आये है पाकिस्तानी राजदूत तरह-तरह के जाल फैला रहे है कि किसी तरह वह पाकिस्तान वापस लौट जाने को राजी हो जाय। इसके लिए

उन्हें तरह-तरह के लालच भी दिये जा रहे है। मगर खान-साहब अब उनके जाल मे आनेवाले नही, क्योकि वह जानते है कि वहा जेल में सड-सडकर मरने के सिवा उनका और कोई भविष्य नही।

हैलसिकी मे हुई पीस काग्रेस के अधिवेशन से लौटते हुए भारतीय प्रतिनिधि-मडल के लोग साढे बारह बजे दोपहर को बादशाह खान से मिलने आये। उनकी सख्या लगभग ८० थी। इनमें कई ससद-सदस्य, सामाजिक कार्यकर्त्ता और काग्रेसी थे। राज्य-सभा के एक सदस्य श्री अली अकबर खा ने अपने प्रतिनिधि-मण्डल का परिचय देते हुए खानसाहब को बताया कि वे सब उन्हे याद करते रहते है और उनकी उस कुरबानी के लिए अहसानमन्द भी है, जो उन्होने मुल्क को आजादी के लिए की थी। नेहरू और गाधी के आदर्शों पर हम अब भी चल रहे है, यह बताकर आगे अपनी तकरीर में अली अकबर खा ने खानसाहब से कहा कि यह प्रतिनिधिमण्डल उनके प्रति भारत की जनता के प्रेम और सम्मान का इजहार करने आया है। साथ ही यकीन दिलाया कि सारे हिन्दुस्तान की जनता इसमें साथ है।

जवाब मे बादशाह खान ने कहा कि जहांतक भारत की जनता के प्रेम और सम्मान का सबध है, वह तहेदिल से उसके लिए शुक्रगुजार है, मगर यह कहे बिना नही रहा जाता कि खुदाई खिदमतगारो ने भारत की आजादी के लिए कुरबानियां देने में कोई कसर नही रखी थी, लेकिन आजादी पाने के बाद भारत ने हमें भुला दिया और भेड़ियो के आगे डाल

दिया। उन्होने पूछा कि हिन्दुस्तान ने आजादी का उपभोग करते हुए कभी यह भी सोचा है कि उसे हासिल करने मे जिन्होने उनके साथ कधे-से-कधा मिलाकर लडाई की थी, वे उससे वचित है ? वे बुरी तरह पिस रहे है और उनपर तरह-तरह के जुल्म ढाये जा रहे है। लेकिन पुरानी कहावत है कि सुबह का भूला शाम को घर लौट आये तो वह भूला हुआ नही कहलाता। इसके मुताविक क्या मै अव भी हिन्दुस्तान और अपने पुराने काग्रेसी साथियो से कुछ उम्मीद कर सकता हू ?

खानसाहव ने अनुरोध किया कि मेरी इन बातो का अग्रेजी मे अनुवाद करके सुना दिया जाय, ताकि प्रतिनिधि-मण्डल के सभी सदस्य समझ सके। अरुणा आसफ अली के एक सोशलिस्ट साथी रमेशचन्द्र ने अग्रेजी अनुवाद करके सुनाया। मगर आखिरी वाक्य को खा गये। इसके लिए बादशाह खान ने उन्हे आडे हाथो लिया। तब रमेश ने इस वाक्य का अग्रेजी अनुवाद किया, मगर वह अनुवाद वहुत कमजोर और टूटा-फूटा था। इसपर बादशाह खान ने खुद उस वाक्य को अग्रेजी मे बोला।

बाद मे इसी प्रतिनिधि-मण्डल का एक सदस्य बादशाह खान के पास जाकर कहने लगा कि आपने जो कुछ कहा वह बिलकुल सही है। असल मे तो आप यह भी कह सकते थे कि भारत ने आपको घोखा दिया है और खदक मे डाल दिया है। आपने ऐसा नही कहा, इसे आपके हृदय की उदारता ही कहा जा सकता है।

दोपहर डेढ वजे हमने खाना खाया। खाना रात जैसा ही था। खाने के वाद रोजमर्रा की तरह कुछ घण्टे आराम किया। तीन या साढे तीन वजे फिर मुलाकातियो का ताता शुरू हो गया। उनमें पख्नून यूनिवर्सिटी के विद्यार्थियो का एक दल भी था, जिनमे गर्मजोशी थी और खानसाहव से प्रेरणा पाने और कुछ सीखने की ख्वाहिश भी।

रात को खानसाहव मुझे खाना खिलाने के लिए कही वाहर ले गये। अफगानिस्तान और कवायली इलाको के भाषी लोगो के यहा इस तरह रात के खाने पर मिलना वही स्थान रखता है जो कि राजनैतिक जीवन मे रखती है। भोज के निमन्त्रण से जा सकता। इसे ठुकराना पठान नैतिकता मे मेजबान का अपमान समझा जाता है।

देशभक्ति के थे, जिनमे आजादी, फखरे अफगान (जैसाकि अफगानिस्तान मे खान अब्दुल गफ्फार को कहा जाता है) पाकिस्तानी जेल मे सड रहे निडर बलूच नेता खान अब्दुल समद खा का विशेप उल्लेख था। इन गानो मे से कुछ तो गनी ने ही लिखे थे। गाने सुनकर लोग झूम-झूम उठते थे। यह देखकर मुझे स्वतन्त्रता-सग्राम के दिन याद हो आये। खाने से पहले, बीच मे और बाद तक लम्बी-लम्बी बहसे भी चलती रही। पख्तूनिस्तान के आन्दोलन और आनेवाले आम चुनाव से लेकर शिक्षा, आर्थिक विकास, समाज-सुधार और धर्म सभी विषयो पर विचार-विनिमय हुआ। खाने के बाद जब मेहमान लोग चले गये तब परदेवाली औरते खानसाहब की जियारत करने आई। जब हम वापस लौटे तो आधी रात से ज्यादा हो चुकी थी।

२४ जुलाई १९६५

नाश्ते मे खानसाहब के लिए अण्डे नही थे। यह देखकर मुझे हैरानी हुई। नौकर अण्डे रखना भूल गया होगा, लेकिन खानसाहब ने कुछ नही कहा। नौकर घबराकर अण्डे लेने भागा। जबतक वह लेकर आया तबतक खानसाहब आधा नाश्ता कर चुके थे। हमारी बातचीत सामान्य विषयो पर हो रही थी। खानसाहब सर्वधर्म-समन्वय मे विश्वास करते है। उनकी नजर मे धर्म का तो सिर्फ यह मकसद है कि इसान मे भाईचारे की भावना जगाई जा सके और दुनिया मे अमन और इसाफ का आदर्श स्थापित किया जा सके। परन्तु निहित स्वार्थो ने धर्म को कुठित करके रख दिया है, नफरत और

उनकी सेहत ग्रब पहले से वहुत सुधर गई है। उनकी सहन-शक्ति, उनके ग्रडिग विश्वास ग्रौर उनके सयमपूर्ण नियमित जीवन ने ही तमाम मुसीबतो से उन्हे बचाया है। लेकिन उन्हे लम्बे इलाज, ग्राराम ग्रौर देखभाल की जरूरत है। यह ग्रलग बात है कि पहले जैसी सेहत उनकी फिर कभी बनेगी या नही, मगर जहातक मै देख सका, कई कडी लडाइया लडने का साहस ग्रब भी उनमे मौजूद है।

उनकी खूराक मे मुनासिब तब्दीलिया करने पर भी हम बातचीत करते रहे। मेरे खयाल मे उनकी खूराक नाकाफी है। लेकिन उन्हे इस बात पर सख्त ऐतराज है कि जनता के खर्च से उनकी जरूरते बढाई जाय, जबकि बेशुमार गरीबो को तालीम ग्रौर इलाज की जिन्दगी की बुनियादी सहूलते भी मयस्सर नही है।

: ४

ग्राध्यात्मिक चर्चा

मेरी बडी इच्छा थी कि मै खानसाहब के मुह से मुल्क के बटवारे की बाते जानू, खासतौर पर वे बाते, जो सरहदी सूबे से ताल्लुक रखती है ग्रौर जिन्हे मैने ग्रपनी किताब 'महात्मा गाधी—दि लास्ट फेज' मे लिखा भी है। मै यह भी जानना चाहता था कि बटवारे के बाद उनपर क्या-क्या बीता। साथ ही मै मौलाना ग्रबुल कलाम ग्राजाद की किताब 'इडिया-विन्स फ्रीडम' के कुछ बयानो की तसदीक भी करना चाहता था।

गुजरे हुए जमाने के बारे मे वह बातचीत नही करना चाहते थे और बडी मुश्किल से मै उन्हे उसके लिए राजी कर सका। उन्हे तो आध्यात्मिक बातो मे ही ज्यादा दिलचस्पी थी। सबसे ज्यादा तकलीफ उन्हे इस बात से है कि कुछ लोग मजहब को नफरत फैलाने के लिए इस्तेमाल कर रहे है। उनका कहना है कि यह धर्म नही, अधर्म है। हर मजहब का निचोड एक ही है—सब इसानो के साथ भाइयो की तरह प्रेम करना और दुनिया मे अमन और इसाफ कायम करना। "मै तो अपने लोगो से यही कहता हू कि खुदा की खिदमत खुदा के बदो की खिदमत करके ही की जा सकती है। लिहाजा हर खुदाई खिदमतगार को दिलोजान से दुनियाभर के इसानो की खिदमत करनी चाहिए।"

पहले और दूसरे खलीफा अबूबकर और उमर की परपरा में इस्लाम के स्वर्णयुग का जिक्र करते हुए उन्हे बडी खुशी होती थी। उमर ने खिलाफत मजूर करने से इकार कर दिया था और बडी मुश्किल से उन्हे अपना फैसला बदलने के लिए राजी किया गया। लेकिन खलीफा बनकर भी उन्होने अपने लिए उतनी ही तनख्वा मुकर्रर की, जितनी औरो को मिलती थी। एक बडे अफसर ने इस बात पर एतराज उठाया कि खलीफा अपनेको आम लोगो मे शुमार कैसे कर सकता है। 'क्या खुदा ने खुद ही बडे-छोटे पैदा नही किये है?" उसने कहा, "फिर उनकी तनख्वाओ मे फर्क क्यो न रहे?" उमर ने जवाब दिया, "इसमे कोई शक नही कि बडे-छोटे लोग खुदा ने ही पैदा किये है, मगर उसने पेट तो सबको

एक-जैसा ही दिया है।" वह घर बुने मोटे कपडे का चोगा पहना करते थे और खजूर के पत्तो की चटाई पर सोया करते थे। एक बार उनकी पत्नी ने बच्चो के लिए ईद पर थोडी मिठाई मगाने के लिए कुछ पैसे मागे। खलीफा ने कहा कि यह तो आत्म-परिग्रह के उस पैमाने के खिलाफ है, जिसकी खलीफा से आशा की जाती है। उनकी पत्नी ने जैसे-तैसे घर के खर्चे मे से ही कुछ पैसे बचाकर बच्चो के लिए मिठाई मगा दी। इसपर खलीफा को लगा कि वह बेतुलमाल (शाही खजाना) से अपने खर्च के लिए जो कुछ ले रहे है वह उनके जरूरी खर्चो से ज्यादा है। इसलिए उन्होने अपनी तनख्वा मे और भी कटौती कर दी।

यह थी उमर की कर्त्तव्यपरायणता और ईमानदारी। एक बार कुछ दरबारियो ने उन्हे सलाह दी कि वह अपने बेटे को वली अहद (उत्तराधिकारी) मुकर्रर कर दे। उमर ने साफ इकार करके कहा कि मै तो अवाम का चौकीदार हू। उन्होने मुझे चौकीदार मुकर्रर किया है। मुझ चौकीदार को अपना लडका अपनी जगह लगाने का क्या हक है?

उनका हृदय मानवता के असीम प्रेम से ओत-प्रोत था। जब मदीना मे अकाल पडा तो उन्होने खुद भी खाना खाना बन्द कर दिया। कहने लगे कि जब आम लोग भूख से परेशान है तो मै खाना कैसे खा सकता हू? फिर जब मिस्र से मक्का का भण्डार आ गया और उसे गरीबो मे बाटा जा चुका, तब कही जाकर उमर ने खाना शुरू किया था। सिर्फ फरमान जारी करके ही उनकी तसल्ली नही हो जाती थी, बल्कि

भेस बदलकर देखने निकला करते थे कि गरीबो को कोई तकलीफ या अभाव तो नही सता रहा। इसी तरह एक बार वह किसी गरीब औरत की झोपडी के पास से गुजर रहे थ। औरत अन्दर फर्श पर बीमार पडी थी। चूल्हे पर एक हडिया में कुछ पक रहा था, लेकिन बच्चे भूख के मारे रो रहे थे।

"तुम इन्हे कुछ खाने को क्यो नही देती ?" उमर ने झोपडी मे प्रवेश करते हुए पूछा।

"मेरे पास है क्या, जो दू ?" वह बोली।

"इस बर्तन में क्या पक रह है ?"

"अपने-आप देख लो।"

खलीफा ने ढक्कन उठाकर देखा तो खाली पानी उबल रहा था। बच्चो को बहलाने के लिए उसने 'यह युक्ति की थी।

"अगर तुम्हारे पास बच्चो को खिलाने के लिए कुछ नही था, तो तुम खलीफा के पास क्यो नही गई ?" उन्होने पूछा।

"मै क्यो जाती ? क्या यह खलीफा का फर्ज नही कि खुद जाने ?"

"लेकिन खलीफा के पास तो और बहुत-से कामकाज हैं, वह हर चीज को और हर किसीको कैसे देख सकता है ?"

"अगर वह बिना पूछे मेरे पति और बच्चो को लडाई पर भेज सकता है, तो उसके बीवी-बच्चो की रोटी का इन्तजाम भी क्या खलीफा को खुद नही करना चाहिए ?"

इसपर उमर लाजवाब हो गये। फौरन एक दरबारी

को भेजकर वेतुलमाल से खाने का सारा सामान मगवाया। फिर अपनी मौजूदगी मे उस परिवार के लिए खाना वनवाया और सवको खिलाकर गये।

खानसाहव ने कहा, "हमारे पुराने खलीफाओ की यही परपरा थी। हुकूमत तो वेशक खर्च कर सकती है, मगर मै कैसे उतना खर्च अपने आपपर होने दू ?"

खानसाहव के दिल मे गरीवो के लिए तडप है। उनका कहना है कि हम कोई-सी भी सामाजिक व्यवस्था अपनाये, इसमे कोई खास फर्क नही पडता। असल वात तो यह है कि समाज के नेताओ ने व्यक्तिगत तौर पर कौन-सी मिसाल कायम की है और शासन मे उसपर कितनी शुद्धता तथा ईमानदारी के साथ अमल होता है। 'समाजवादी ढग का समाज' भी महज एक मजाक बनकर रह जाता है, अगर हुकूमत करनेवाले खुद तो मौज उडाते रहे और जनता को आनेवाले खयाली कल के नाम पर कुरबानिया करते रहने का उपदेश दे।

अपनी इस वात को साफ करने के लिए उन्होने खलीफा उमर की जिन्दगी मे से ही एक घटना सुनाई। एक वार खलीफा खुतवा (नमाज के वाद की तकरीर) फरमा रहे थे। वीच मे ही उन्होने पूछा, "अगर मै तुम लोगो को कोई हुक्म दू तो क्या उसे सव मानेगे ?"

"नही," एक औरत वोली, "हम कैसे मान सकते है ?"

"क्यो ?" खलीफा ने पूछा।

जवाव मे उस औरत ने खलीफा के चोगे की तरफ

इशारा करके कहा, "मेरे पति का चोगा तो मुश्किल से घुटनो तक ही आता है, जबकि आप इतना वडा पहने हुए है। क्या इस वात से यह जाहिर नही होता कि आपने बेतुल-माल में से अपने हिस्से से ज्यादा कपडा लिया है ?"

इतना कहकर वह जवाब के लिए रुक गई।

"मेरे बेटे से पूछ लो।" उमर ने जवाव दिया और लडके को इशारा किया कि खुद आगे आकर बताये। लड़के ने बताया कि मैंने अपने हिस्से का कपडा अपने पिता को दे दिय। था, इस तरह खलीफा का चोगा लम्बा वन सका है।

खलीफा की ईमानदारी और न्यायप्रियता से सभी स्तब्ध हो गये। खलीफा पर इल्जाम लगानेवाली औरत तो डर के मारे थर-थर कापने लगी। मगर खलीफा ने इसपर गुस्सा नही किया, उलटे कहा, "जबतक इस औरत की तरह के ईमानदार लोग मौजूद हैं, जो खलीफा को सीधे रास्ते पर चला सके, तबतक इस्लाम का भविष्य पूरी तरह उज्ज्वल है।"

मै कोशिश करके बातचीत को मौलाना आजाद की किताब पर ले आया। उनका ध्यान मैंने मौलाना के उस इल्जाम की तरफ दिलाया, जिसमें उन्होने कहा है कि कांग्रेस के पैसों के इस्तेमाल में कमी करने से सरहदी सूबे में खान भाइयो की लोकप्रियता कम हो गई थी। मिसाल के तौर पर मौलाना ने लिखा है कि कुछ पठान मौलाना से मिलने कल-कत्ता आये। मौलानासाहव ने उन्हे चाय के साथ बिस्कुट खाने को दिये। इसपर उन पठानो ने बताया कि डॉ० खान-

साहव तो ऐसा कभी नही करते थे ।

यह सुनकर वादशाह खान ताव मे आ गये । कहने लगे कि यह सरासर झूठ और अपमानजनक है । पठान जो खुद खाता हो वही दूसरे को न खिलाये, ऐसा कहना पठानो के चरित्र पर कलक लगाना है । ऐसा कभी हो ही नही सकता, न हुआ ही है । पठान तो अपने मेहमान के साथ अपनी रोटी का आखिरी टुकडा भी वाटकर खाने मे यकीन रखता है । अलबत्ता वह अपने साथ काम करने वालो को लालच देकर खराव नही करना चाहता । हो सकता है कि मौलानासाहव को भी मुस्लिम लीग के लोगो ने ऐसी झूठी वात कहकर बरगला दिया हो ।

खानसाहव कहने लगे कि मौलानासाहब तो बडे होशियार आदमी थे । उन्हे कम-से-कम यह तो सोच लेना चाहिए था कि अगर हम लोकप्रिय नही रह गये थे, तो फिर पाकिस्तानी हुकूमत को क्या जरूरत पडी थी कि मुझे पन्द्रह वरसो तक जेल मे डाले रखती ? खुदाई खिदमतगारो पर पावदिया क्यो लगाई जाती और उनपर जुल्म क्यो ढाये जाते ? और क्या पाकिस्तान सरकार आज भी इस बात के लिए तैयार है कि पख्तूनिस्तान के सवाल पर आम जनता की खुली रायशुमारी की जाय ?

उन्होने बताया कि जहातक काग्रेस के पैसे को खुले दिल से खर्च करने का सवाल था, मै और गाधीजी दोनो ही उसूलन इसके खिलाफ थे और अमल मे भी । उन्होने बडी पुरानी १९३१ की एक मिसाल दी। जब खुदाई खिदमतगारो और

काग्रेस का गठजोड हुआ था तब काग्रेस ने सरहदी सूबे के कागेस दफ्तर के किराये के तौर पर दोसौ के वजाय पाच-सौ रुपये मजूर करने की वात की थी। डॉक्टर ग्रसारी के घर पर नेहरूजी ने ही काग्रेस कार्यसमिति की वैठक मे यह वात कही थी। वादशाह खान ने साफ मना करते हुए कहा था कि उस पैसे से कोई स्कूल या जनाना ग्रस्पताल वनाया जाय तो ज्यादा ग्रच्छा होगा। इसके वाद शीघ्र ही दोनो खान भाइयो को गिरफ्तार कर लिया गया। डॉ० खानसाहव को नैनी जेल मे भेज दिया गया ग्रौर वादशाह खान को हजारी-वाग। "नजरवन्दी मे मुझे ग्रकेले ही रखा गया। मेरी वैरक के पास किसीको फटकने की भी इजाजत नही थी। उसी जेल में डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद भी थे, मगर मुझे पता तक नही था। काजी ग्रताउल्ला को गया मे रखा गया था, जहा वेहद गर्मी की वजह से वह सो भी नही सकते थे। हजारीवाग मे जेल सुपरिन्टेडेट एक नामधारी सिख था, जो डॉक्टर खान-साहव के साथ फौज मे भी रह चुका था, मगर वह था वडा डरपोक। जेलो का इन्स्पेक्टर जनरल ग्रगेज होते हुए भी वहुत भला था। हालाकि मैंने कभी शिकायत नही की, मगर उसने भाप लिया कि मेरा वजन कम होता जा रहा है। मेरे चेहरे पर पीलापन था ग्रोर नजरवन्दी का ग्रकेलापन मेरी तन्दुरस्ती पर वुरा ग्रसर डाल रहा था। मैंने कहा कि काजी को मेरे पास रहने को भेज दिया जाय तो ग्रच्छा हो, मगर उन्होने उसके वदले डॉक्टर खानसाहव को ही भेज दिया। डॉ० खानसाहव ने मुझे वताया कि नेहरूजी हम दोनो

भाइयो से इस वजह से नाराज है कि हमने पडितजी की मददवाली वात नामजूर कर दी थी। उन्होने डाक्टर असारी से यहातक हमारी शिकायत की कि हम मगरूर है। लेकिन मेरा तो यह पक्का यकीन था कि अगर हम काग्रेस की उस मदद को मजूर कर लेते तो सख्त गलती करते। वैसे भी लाखो खुदाई खिदमतगारो की जमात के लिए वह मामूली-सी मदद समदर मे वूद के वरावर होती। इसके अलावा काग्रेस की मदद का भरोसा हमारी जमात को कमजोर कर सकता था, जवकि इस जमात को मजवूत वनाने के लिए हमे रुपये से ज्यादा मनुष्य के ऊचे चरित्र की जरूरत थी। रुपया तो जल्दी ही चुक जाता, लेकिन चरित्र की दौलत का खजाना कभी खाली नही हो सकता। जव आचार्य कृपालानी रिहा होकर आये, तो हमने उनको सारी स्थिति वताकर नेहरूजी को सवकुछ समझा देने के लिए कहा। पडितजी की तसल्ली हो गई और गलतफहमी दूर हो गई।

आज खानसाहव से मिलने आनेवालो मे प्रधान सेना-पति और हवाई फौजो के सदर थे।

शाम के वक्त मैंने वाहर घूम आने की इच्छा प्रकट की। लेकिन खानसाहव मुझे अकेले वाहर जाने देना नही चाहते थे। अफगानिस्तान मे या तो पश्तो वोली जाती है या फारसी। कुछ पढे-लिखे लोग अग्रेजी भी वोल लेते है, मगर उनमे से भी ज्यादातर फ्रासीसी जुवान ही वोलते है। लडक-पन मे मैंने स्कूल मे थोडी फारसी पढी थी। यहा दो-एक मौको पर वह कुछ-कुछ काम भी आई। मगर पश्तो तो मुझे

बिल्कुल ही नही आती थी। लिहाजा खानसाहव ने नग यूसुफ-जई को मेरे साथ जाने के लिए कह दिया। नग भी गरान की तरह कभी आल इडिया रेडियो में काम कर चुका था। उर्दू बोलता है। मुझे अमीर अमानुल्ला के पुराने पार्लमेंट हाउस मे ले गया। यह खासी खूबसूरत इमारत है। इसमे सलीके से कटे-छटे बगीचे भी है। नग को यकीन हो चुका है कि पाकिस्तान कभी सुधर नही सकता। उसे तो सिर्फ ताकत के वल पर ही ठीक किया जा सकता है, क्योकि लातो के भूत वातों से नही मानते। "मै जानता हू, आपको अपनी बात मनवा नही सकूगा।" उसने कहा। मैने जवाव में कहा, "तुम्हारा कहना शायद ठीक ही है। पर इसलिए नही कि अहिसा मेरे लिए धार्मिक श्रद्धा की चीज है, बल्कि इसलिए कि मैने युद्ध-क्षेत्र मे भी इसके करिश्मे देखे है।" उसने यह स्वीकार किया कि वादशाह खान ने अहिसा से कई कमाल कर दिखाये है। लेकिन कहा कि पठानी सब्र की अब हद हो गई है, क्योकि हिन्दुस्तान ने भी पठानों की कोई मदद नही की। इस वात का मै कोई जवाव न दे सका, क्योकि वटवारे के वक्त जिस ढग से सरहदी सूबे और खुदाई खिदमतगारो का साथ हमने छोड दिया था उससे पठानो का दिल खट्टा होना स्वाभाविक था।

रात को खानसाहव ने मुझे मूसा शफीक से मिलाया जो वहां कानून के उपमत्री है और साथ ही मिस्टर पकतियानी से भी, जो कवायली मामलो के विभाग में है। मैने शफीक-साहव के साथ सार्वजनिक स्वास्थ्य, प्रसूति-कल्याण और शिक्षा के बारे मे वातचीत की। उन्होने मुझे सलाह दी कि मै

स्वास्थ्य और शिक्षा के अफसरो से भी मिलू । उनसे मुलाकात तय करा देने को भी उन्होने कहा । उन्होने ही यह भी सुझाया कि मुझे काबुल के अजायबघर में लाजमी तौर पर जाना चाहिए । प्रधानमत्री के उपसचिव सिद्दीकी ने कहा कि वह मुझे वहा की कुछ चीजो के फोटो लेने की इजाजत दिला देंगे।

. ५ .

अन्तराल

२५, जुलाई, १९६५

खानसाहब को फिर से इलाज के लिए अस्पताल जाना पडा । वह करीब डेढ घटे बाद लौटे ।

उनके जाने के थोडी ही देर बाद जनरल थापर का टेली-फोन आया कि वह पौने ग्यारह बजे मुझे लिवाने को अपनी कार भेज रहे है । वह कुछ बातचीत करना चाहते थे ।

ठीक वक्त पर कार आकर मुझे दूतावास ले गई। जनरल ने याद दिलाया कि सन् १९४६ मे जब हम नोआ-खाली गये हुए थे तब वह वही थे । असल मे उन्हीके सिख सैनिको के खिलाफ शहीद सुहरावर्दी ने मुस्लिम औरतो की बेइज्जती करने का इल्जाम लगाया था और गाधीजी से इस बात की शिकायत की थी । गाधीजी ने इस बात की तसदीक के लिए उन औरतो का डाक्टरी मुआइना मेरी बहन (डाक्टर सुशीला नायर) से कराने का सुझाव रखा, जिसपर बहुत-सी औरतो ने तो अपने बयान ही वापस ले लिये थे ।

१ पेशावर मे गाधीजी तथा खानसाहव के साथ

२ खुदाई खिदमतगार अफसरो के वीच
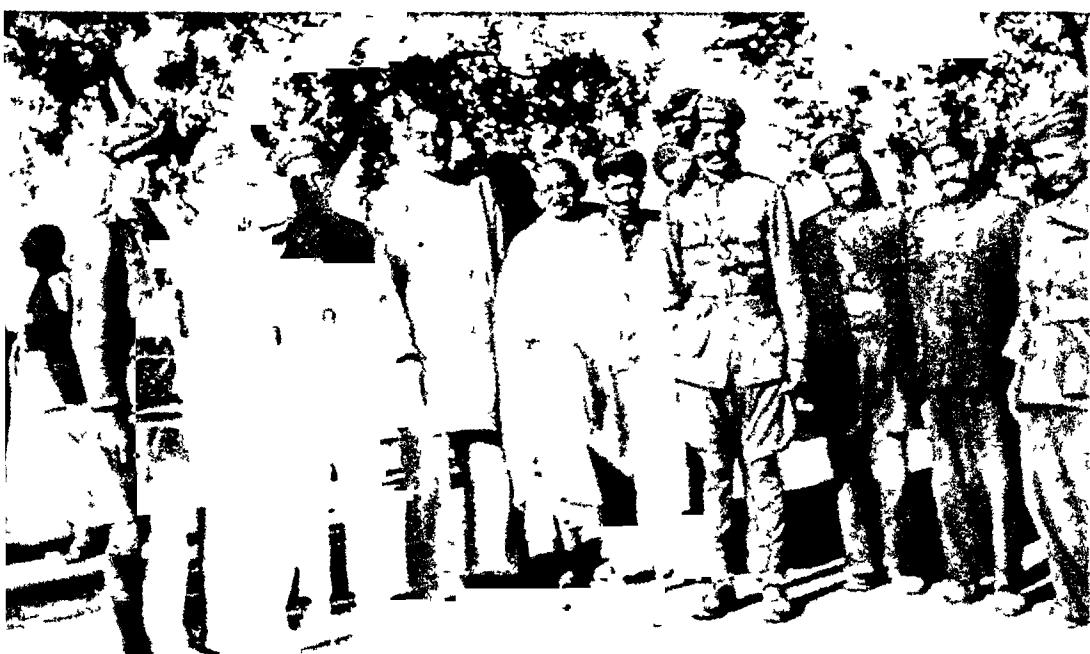
३. सरहदी पठानों के मध्य पं० नेहरू के साथ

४ दो गांधी
और
लेखक

५
भंगी बस्ती की
प्रार्थना-सभा में

प० नेहरू के साथ

प्र ५ ११०५

६ काबुल हवाई अड्डे पर पहुचे

७ अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री द्वारा स्वागत

८ काबुल के सरकारी अस्पताल मे

...ान के प्रधानमंत्री द्वारा स्वागत

९ पठान-बच्चो के साथ

५३ ॥०९

१० पख्तून महिलाओं के बीच

११ अपने परिवार के साथ

१२ दारुल अमान मे
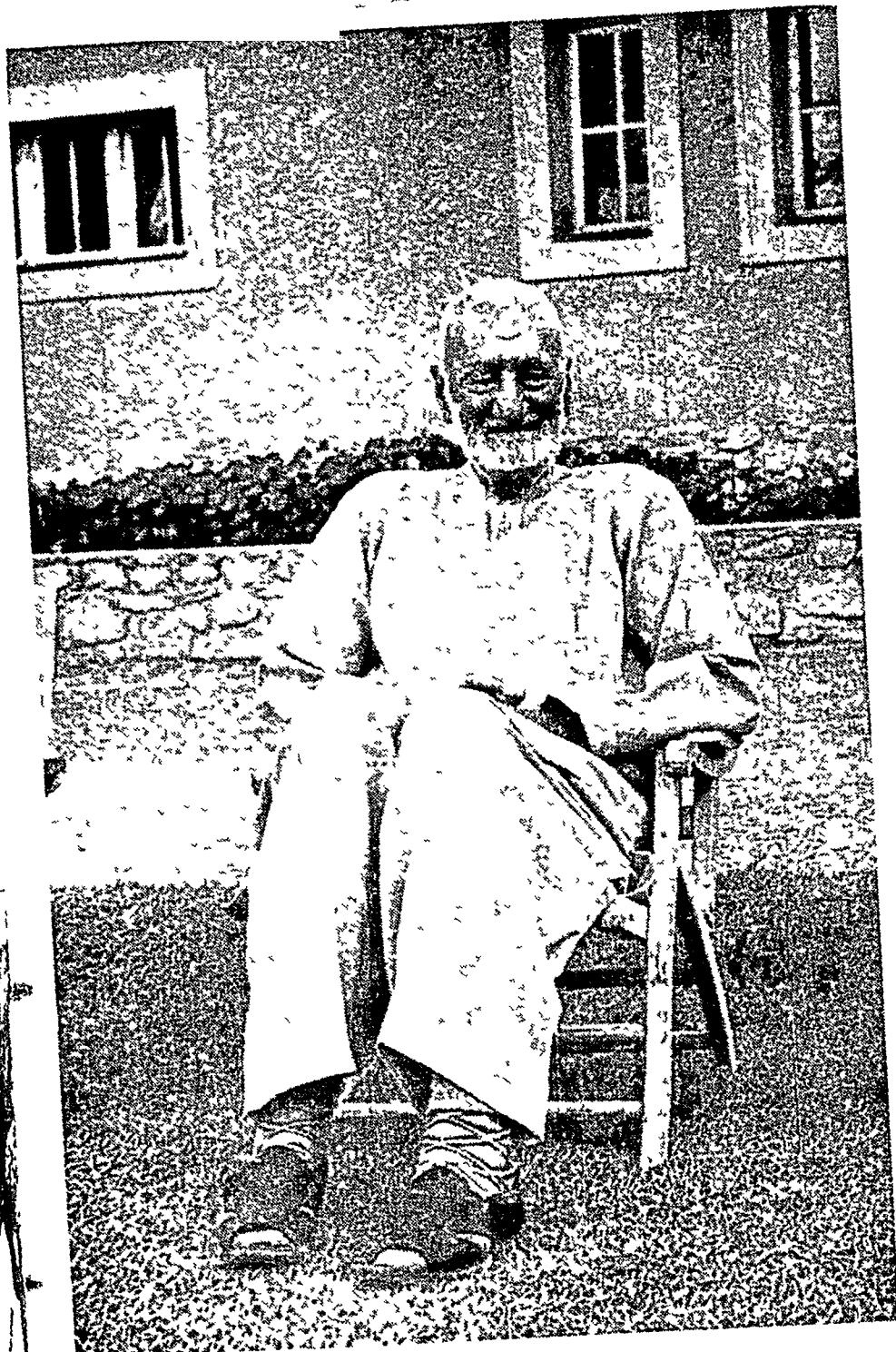
११ अपने परिवार के साथ

१३
दारुल अमान मे
मुलाकातियो के बीच

१४
काबुल स्थित
भारतीय दूतावास मे
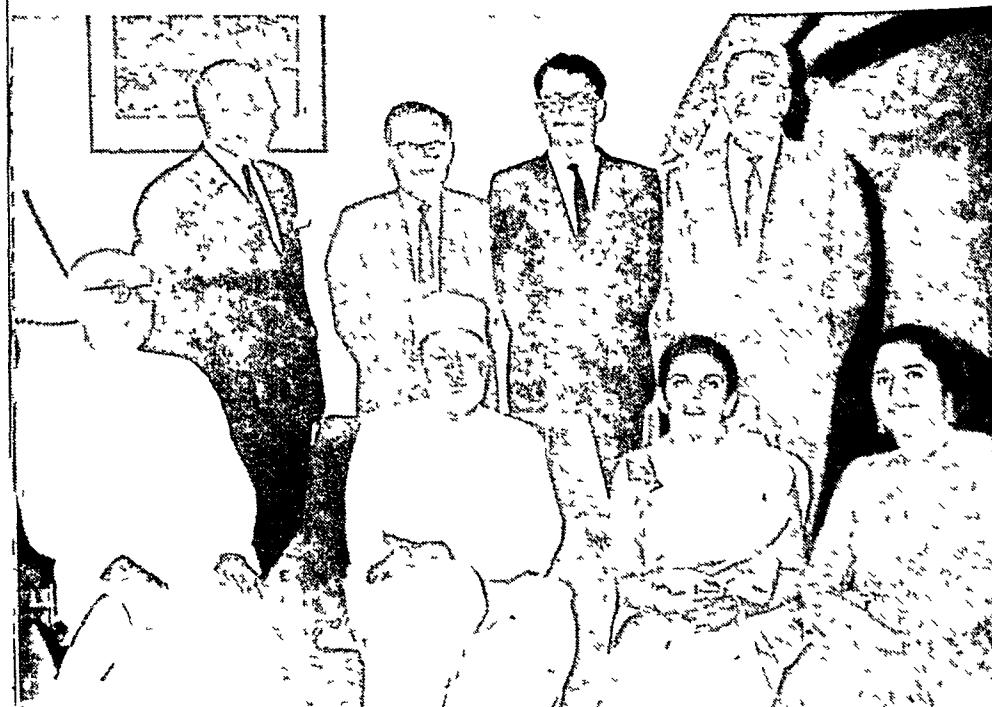
१५ मोहमदजई कवीले के सरदार के परिवार के साथ

१६
कबीले के सरदार की बहन
जोहरा

१७. शिशु-प्रेम

१८. फिर दारुल अमान मे

१६ राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसेन के साथ

२०
जलालाबाद मे

२१.
बाकर अली मिर्जा
और लेखक के साथ

२२ आखिर हिन्दुस्तान पहुचे
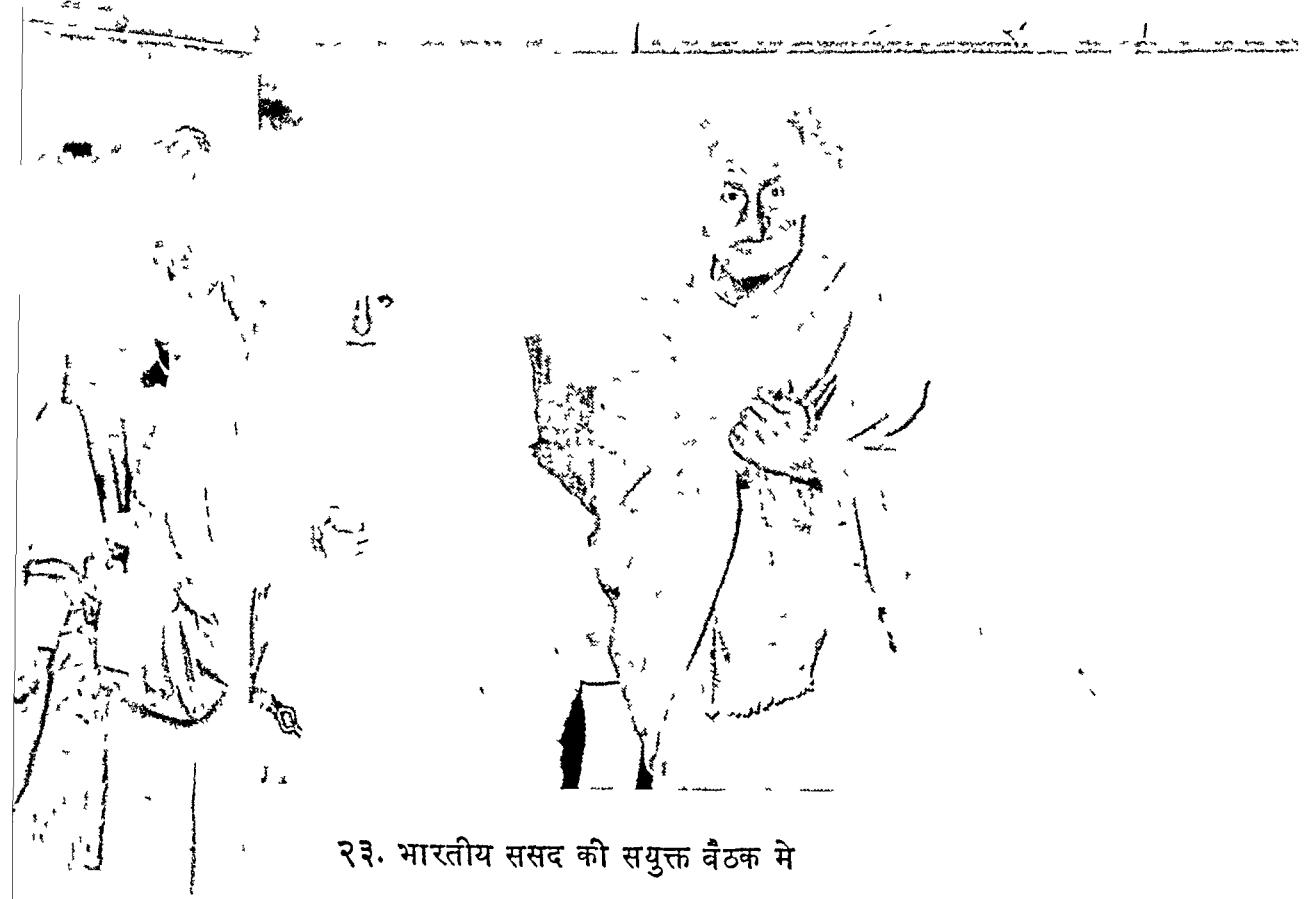
२३. भारतीय ससद की सयुक्त वैठक मे

२४ गाधी-जयन्ती के दिन राजघाट से लौटते हुए

२५ भारत से विदाई

और वाकी औरतो का जो डाक्टरी मुआयना किया गया, उससे वह इल्जाम सही सावित नही हो सका था। इस घटना को लेकर एक और प्रसग की बात निकल पडी, जिसका जनरल थापर ने वडे मजे के साथ वर्णन किया। डाक्टरी रिपोर्ट को लेकर, वाद मे, उसमें और सुहरावर्दी मे नोकझोक हो गई थी। सुहरावर्दी ने वकील की तरह रिपोर्ट की नुक्ताचीनी करनी शुरू की तो जनरल ने (तव वह व्रिग्रेडियर थे) उसका फौजी ढग से ऐसा मुहतोड जवाव दिया था कि सुहरावर्दी चारो खाने चित हो गये थे और अग्रेज जनरल और उनका सारा स्टाफ हँसी से लोटपोट हुए विना न रहा।

जनरल थापर ने कावुल के दर्शनीय स्थानो के नाम भी मुझे वताये। लेकिन वदकिस्मती से मैं वामियान और वदिया-मीर नही जा सका, क्योकि वक्त वहुत कम था। जनरल ने यह भी कहा कि अगर खानसाहव किसी दिन रात का खाना उनके यहा दूतावास मे खाने का निमत्रण मजूर कर ले, तो उन्हे तथा उनके साथियो को वडी खुशी होगी। उनके साथी और परिवार के लोग भी खानसाहव से मिलने को उत्सुक है। जव मैने खानसाहव से यह वात कही तो वह फौरन राजी हो गये।

दोपहर वाद गरान, नग और अपने दूतावास के कर्नल रामचन्द्र के साथ मैं कावुल और उसके आसपास की जगहे देखने के लिए गया। रास्ते मे हमे मजदूरो की कई टोलिया और गधे हाकनेवाले मिले। वे वहुत गरीव थे, मगर उनके दिल उतने ही वडे थे जितने कि जिस्म। उनमें आजादी की

चमक और उनका शाइस्ता गर्वीला आत्म-सम्मानपूर्ण रूप देख-कर मै बहुत खुश हुआ। मैने उनकी तसवीरे खीचनी चाही, तो वे फौरन राजी हो गये। आखिर मे उन्होने हमसे हाथ मिलाये और आग्रह किया कि हम उनके घर चलकर खाना खाये। मगर वक्त कम होने की वजह से हमे उनसे माफी मागनी पडी।

थोडी देर बाद हमने एक खानाबदोश परिवार देखा। उन्होने सडक के किनारे ही एक कट चुके खेत मे तम्बू गाड़ रखे थे। एक औरत आग पर रोटी सेक रही थी और बच्चे उत्सुकता से ताक रहे थे। "इन लोगो से ज्यादा होशियार चोर दुनिया मे नही मिल सकते।" मेरे एक साथी ने कहा, "ये लोग तो हजारो की भीड़ मे से भी आदमी को उडा ले जाते है।" नग ने आधे मजाक और आधी गभीरता मे कर्नल रामचन्द्रन से पूछा कि भारतीय फौज की तादाद कितनी है? लेकिन उसे लगा कि उसने ऐसी बात कह दी है, जो उसे नही कहनी चाहिए थी, इसलिए फौरन उसने कहा, "माफ कीजिए। शायद मुझे यह सवाल नही करना चाहिए था।" इसपर कर्नल रामचन्द्रन हँस पडे और काश्मीर का अपना एक अनु-भव सुनाने लगे, "हमारी फौजो की नई नाकेबदी की जा रही थी। मै जानना चाहता था कि इसका हमपर क्या असर पडेगा। मैने अपने अफसर को फोन करके कुछ जानकारी लेनी चाही, तो जवाब मिला कि फोन पर इस तरह की बात नही हो सकती। मुझे खुद वहा जाकर मालूम करना पडेगा। मगर मुसीबत यह थी कि वहा पहुचने के लिए डेढ दिन का

रास्ता था और मै उस वक्त काम छोडकर जा नही सकता था। इत्तफाक से तभी मैंने रेडियो खोला, तो वही जानकारी रेडियो पर प्रसारित की जा रही थी, जो मैंने अपने अफसर से लेनी चाही थी। पार्लमेंट मे उठाये गए एक सवाल के जवाब में वह दी जा रही थी।"

मैंने भी अपना इसी तरह का एक तजुरबा सुनाया। आजादी के बाद की बात है। मै भगो बस्ती के वाल्मीकि मदिर मे रह रहा था। एक शाम मैंने रेडियो खोला, तो सुना, एक खुफिया सन्देश काठमाडू से नई दिल्ली को भेजा जा रहा है। न सिर्फ यह कि सन्देश का एक-एक शब्द साफ सुनाई दे रहा था, बल्कि टाइप की आवाज और स्टेनो की हँसी तक सुनाई दे रही थी।

"यही पर वह निर्णायक लडाई लडी गई थी, जिसके बाद नादिरशाह तख्त पर बैठे," नग ने सामनेवाली पहाडी के नीचे के एक मैदान की तरफ इशारा करते हुए कहा। साथ ही यह भी बताया कि अफगानिस्तान के मौजूदा शासक जहीरशाह के पिता नादिरशाह को बादशाह खान के पख्तूनो की मदद की बदौलत ही तख्त मिल सका था। मुझे एक विश्वस्त सूत्र से मालूम हुआ कि अब की बार जब बादशाह खान काबुल आये तो बादशाह जहीरशाह के एक बहुत बडे अधिकारी ने उनसे पूछा था, "आप हमसे किस किस्म की मदद चाहते है।" इसपर बादशाह खान ने जवाब दिया, "जब आप मुसीबत मे थे, तब हमने तो यह नही पूछा कि आप हमसे किस किस्म की मदद चाहते है ? हमने तो अपना सभी कुछ

दाव पर लगाकर हर तरह से आपकी मदद की थी और आप अब हमसे यह पूछते है कि हम बताये, हमे किस किस्म की मदद चाहिए ?"

उस बडे अधिकारी की आखे आसुओ से डबडबा आई और उसने बादशाह खान को अपने सीने से लगा लिया। फिर कभी ऐसा सवाल उनसे नही पूछा गया।

दोपहर बाद मैने कुछ वक्त काबुल के राष्ट्रीय अजायबघर मे बिताया। वहा हाथीदात के काम के कुछ ऐसे बेशकीमती नमूने देखे जो चतुराई से मथुरा-शैली के काम के ढग पर बने हुए थे। उन्हीके जरिये से शाही हरम की जिन्दगी का पूरा नक्शा चित्रित था औरतो को पारदर्शी रेशम की लिबास ओढा रखी थी, मानो ये चित्र अजता के भित्तिचित्रो के पूर्व-गामी हो। लक्ष्मियो (जलदेवियो) की तराशी हुई मूर्तिया, हैलेनिक चित्रकारी किये हुए रगबिरगे काच के कटोरो के लाजवाब नमूने, और पहली या दूसरी सदी के एलेग्जेड्रियन काच के बर्तन, जो रह-रहकर रग बदल रहे थे—ये सारी चीजे बेगराम कमरे मे रखी हुई थी। इनके अलावा शोतोरक कमरे मे पडी लगभग उसी युग को यक्षी (वृक्षदेवी) की मूर्तिया थी। ये सब मुझे बेहद पसन्द आई। अत मे हमने कला का एक अद्भुत नमूना देखा, जिसमे एक साधिका भक्ति-भाव मे डूबी हुई स्वर्ग की ओर निहार रही थी। उसे देखकर गरान वही जमकर रह गया और टकटकी लगाये देखने लगा। फिर धीरे-धीरे उसने अजायबघर के अध्यक्ष से कहा, "अगर किसी दिन यह यहा से गायब हो जाय तो सबसे पहले

मेरे घर की तलाशी लीजियेगा ।"

मैने कई चीजो के फोटो लिये । लेकिन बदकिस्मती यह हुई कि स्टुडियो मे पता नही क्या गडबडी हो गई कि एक चित्र को छोडकर बाकी पूरी-की-पूरी रील ही खराब हो गई ।

६

भेड़ियों के आगे डाल दिया

"वह सब जाने दो, बीती बाते है अब तो । जो गया सो गया । अब तो हमे वही सब सोचना चाहिए जो आज है ।' रात को जब मै खानसाहब से बिछडने के बाद के अनुभव बताने का आग्रह कर रहा था तो मुझे टोककर उन्होने कहा ।

"जहातक आज का ताल्लुक है, मै आपसे पूरी तरह सहमत हू," मैने जवाब दिया और कहा, "मगर अतीत भी तो अभी मरा नही । वह तो बराबर आपके साथ लगा हुआ है । नही तो हम और आप आज ऐसी अजीब परिस्थितियो में क्यो मिलते ? बापू (गाधीजी) अगर जिन्दा होते तो मै उन घटनाओ की सचाई की तसदीक उनसे कर सकता था, जिनका जिक्र मैने अपनी किताब 'महात्मा गाधी दी लास्ट फेज' में किया है । इधर-उधर से जानकारी हासिल करके मैने उसे लिखा है । अब उन्ही सब बातो की सचाई मुझे आपसे जाननी है, क्योकि आप उस सबमे से गुजरे है और

उनका हिस्सा है।"

गाधीजी का जिक्र खानसाहव को भीतर कही बहुत गहरे मे छू गया। क्षण-भर के लिए तो वह अपने अन्दर ही सिमट गये और एकदम खामोश हो गये। फिर मानो गुजरे जमाने पर दूर तक निगाह डालकर कहने लगे

"हमसे न तो वटवारे के वक्त कोई मशविरा किया गया, न सरहदी सूवे मे राय-शुमारी के लिए। रायशुमारी का जब हमसे जिक्र किया गया तो हमने खुलकर मुखालिफत की थी, क्योकि १६४६ का चुनाव तो वहा खास तौर से इसी विना पर लडा गया था—यानी हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के सवाल पर। गाधीजी ने हमारी हिमायत की थी और वटवारे की मुखालिफत। लेकिन सरदार पटेल और राजाजी इसपर जोर दे रहे थे। सरदार ने तो मुझसे वडे ही तैश मे आकर कहा था, 'आप खामख्वाह फिक्र कर रहे है।'

"हम तो यह जानकर सन्नाटे मे आ गये थे कि दोनो मामलो पर काग्रेस के नेता पहले से ही फैसला कर चुके है। काग्रेस कार्यकारिणी की वैठक के वाद मैने गाधीजी से कहा, 'आपने हमे भेडियो के आगे डाल दिया है।' इसपर गाधीजी ने कहा कि फिक्र न करो। आपको इन्साफ दिलाने मे मै कोई कसर वाकी नही रखूगा। अगर आपपर जुल्म होगा, तो हिन्दुस्तान आपका साथ देगा।

"उस वक्त मौलाना आजाद भी मेरे पास बैठे थे। मुझे मायूस देखकर वह कहने लगे, 'आपको अब मुस्लिम लीग मे शामिल हो जाना चाहिए।' यह देखकर मुझे वडी तकलीफ

हुई कि हमारे ये साथी हमें और हमारी सरी जद्दोजहद को रत्ती-भर नहीं समझ सके। क्या वे यह समझते थे कि हम सत्ता की खातिर अपने उसूलों को बेच देंगे ?

"दिल्ली से लौटकर हमने कांग्रेस के फैसले को सूबे के जिरगा के आगे पेश किया। सभीको मायूसी हुई। तब हमने फैसला किया कि क्योंकि सन् छियालीस के चुनाव में सरहदी सूबा अपनी राय पहले ही बतला चुका है, इसलिए अब दोबारा राय-शुमारी बेमानी है। अब अगर फिर से हमें वोट देने को कहा जायगा तो हम पठानिस्तान बनाम पाकिस्तान के सवाल पर वोट देंगे। जिरगा ने पठानिस्तान की व्याख्या की कि वह खुदमुख्तार सूबा होगा, जिसमें पश्तो बोलनेवाले सब लोग शामिल होंगे।

उसके बाद मेरी और गांधीजी की माउंटबैटन के साथ एक मुलाकात हुई। उस मुलाकात में चर्चिल के युद्ध के समय के एक सहायक लार्ड इस्मे और वाइसराय के मंत्री जार्ज एबेल भी मौजूद थे। लार्ड माउंटबैटन ने कहा कि सरहदी सूबे में नये हालात पैदा हो गये हैं, जिनकी वजह से नया चुनाव जरूरी हो गया है। हमने जवाब दिया कि अगर 'नये हालात' का मतलब मौजूदा बदअमनी से है, तो इसके लिए ब्रिटिश हुकूमत ही खुद जिम्मेदार है। जब-जब भी बरतानवी हुकूमत को कोई उल्लू सीधा करना होता है, तभी यह बदअमनी होती है। जब कबायली इलाके में से कोई सड़क निकालनी होती है, या फिर कोई चौकी-छावनी बनानी होती है तब अफसर लोग जनता को भड़का कर हंगामा करवा देते हैं और उसे अपना

मकसद पूरा करने का वहाना बना लेते है । और अक्सर तो ब्रिटिश फौजो को महज अभ्यास कराने के लिए ही गडबडी पैदा करा दी जाती थी ।

"मैने लार्ड माउटबैटन से पूछा कि इपी के फकीर दूसरे विश्वयुद्ध के समय तो एकदम खामोश रहे, क्योकि उन दिनो अग्रेज मुसीबत मे थे, मगर जैसे ही वह लडाई खत्म हुई, अग्रेज खतरे से मुक्त हो गये कि फकीर ने जहाद का शोर मचाना शुरू कर दिया ? क्या इन बातो से जाहिर नही होता कि इस तरह की सारी गडबडिया पैदा करना भी वरतानवी पालिसी का एक हिस्सा है ?

"गाधीजी ने मेरा साथ देते हुए कहा कि मैने किसी अग्रेज को ही लिखी हुई एक ऐसी किताव देखी है जिसमे साफ कहा गया है कि अग्रेजो को जव-जब जरूरत पडती है, वे तव-तव इस-तरह के हगामो को हवा देते रहते है । इसपर लार्ड माउटबेटन ने उनसे उस किताव का नाम पूछा । गाधीजी ने बता दिया और यहातक कहा कि वह किताब लेकर उन्हे भेज देंगे । लिहाजा असल बात तो यही थी कि सरहदी सूबे मे सारी खुराफात की जड वहा का गवर्नर सर ओलाफ कैरो ही था । इसी वजह से उसे बाद मे हटाना भी पडा, लेकिन उससे कोई खास फर्क नही पडा, क्योकि ब्रिटिश नीति नही वदली । इसीलिए सूवे की आम हालत भी नही वदली । सूबे की वजारत का न तो हुकूमत के सियासी महकमे पर कोई कट्रोल था, न गवर्नर पर, और गर्वनर ही वाइसराय का नुमाइदा होने की हैसियत से सिविल सर्विस पर कट्रोल करता था ।

मिल जाते और जो चाहते है वह हासिल नही कर लेते ?

"बटवारे के वाद भी अयूव खान के भाई ने मुझसे कहा कि चलिये पार्लमिट मे चलकर देखे कि क्या कुछ हो सकता है। वह उन दिनो सविधान सभा के मेम्वर थे। यह मुझे वाद मे पता चला कि मुझे साथ ले जाकर वह अपना उल्लू सीधा करना चाहते थे। वाद मे उसी शख्स को हमारे खिलाफ एक हथियार के तौर पर इस्तेमाल करने के लिए उसे व्हिप (चेतक) वनाया गया। और उसकी इन खिदमतो के इनाम के तौर पर उसे मार्शल लॉ के वाद वनाई गई पार्लमिट मे नायव वजीर की कुर्सी भी दी गई।

"लियाकत अली ने पार्लमिट मे अपनी एक तकरीर मे हमे हिन्दू कहकर वागी करार दे दिया था। जवाव मे मैने दोहराया कि हम मुसलमान है और शरीयत के कानून के मुताविक रहते है और अगर वे हमे समझे तो हम भी उनके भाई है, पाकिस्तानी है और हमने पाकिस्तानी झडे के प्रति वफा-की हलफ उठाई हुई है। मैने लियाकत से पूछा कि क्या यह अजीव नही है कि जो लोग नमाज तक पढना नही जानते और महाजरीन के तौर पर पाकिस्तान मे आये है, वे हमारे मुसलमान होने और पाकिस्तानी होने पर शक करे ? इसपर लियाकत ने खीसे निपोरकर कहा था कि इसीका नाम इन्कलाव है।

"गुलाम मुहम्मद हमे डॉक्टर असारी के जरिये जानते थे। उन्होने हमे पैगाम भिजवाया कि अगर हम उनके साथ मिल ‹ तो मरकजी हुकूमत मे भी हमारे नुमाइदे लिये जा

सकते है और हमें सफारतखानो में भी मुनासिब हिस्सा मिल सकता है। हमने नजरियो के फर्क की वजह से उनकी वह पेशकश ठुकरा दी। इस फर्क की बिना यह थी कि मुस्लिम लीग की पालिसी विध्वसात्मक थी, जबकि हम एकता और रचनात्मक काम के लिए वचनबद्ध थे। दूसरा फर्क यह कि लीगी लोग ऊचे ओहदो के पीछे दीवाने थे और वे अवाम पर हुकूमत करना चहते थे, जबकि हमारा काम अवाम की खिदमत करना था।

"कराची में जिन्ना ने मुझे खाने पर बुलाया। खाने के बाद उन्होने मुझे रोक लिया और एक कमरे मे ले गये। कहने लगे, 'आप हमारे साथ काम क्यो नही करते?' मैने उन्हे बताया कि हमारी जमात तो सिर्फ समाज-सुधार करने के लिए है। यही बात एक बार केन्द्रीय असेबली में वह खुद भी हमारी हिमायत मे कह चुके थे, जबकि ब्रिटिश हुकूमत ने खुदाई खिदमतगारो के आन्दोलन को राजनीतिक कहा था। जिन्ना ने ही तब यह भी कहा था कि अग्रेजो ने ही मजबूर करके खुदाई खिदमतगारो को राजनीति में धकेला है, क्योकि समाज-सुधार की हलचल इन्हे आराम से करने नही दी गई। मैने जिन्ना से कहा कि लियाकत तो हमे हिन्दू और बागी कहते फिरते है, तो फिर हमारे साथ काम करने की गुजाइश कहा है? उसपर जिन्ना ने माफी मागकर कहा कि लियाकत को इस तरह की नाजायज बात नही कहनी चाहिए थी।

"हमने अपने सामाजिक कार्यों के लिए लीग की मदद

मागी थी, मगर नाउम्मीद होकर ही हम काग्रेस के साथ हुए थे। मैने जिन्ना से कहा था—मेरा खयाल है कि सामाजिक रूप मे पिछडे हुए लोगो मे राजनैतिक भावना सुदृढ नही हो सकती और सुदृढ राजनीतिक भावना के विना लोकतत्र का कोई मतलव नही रह जाता। इसी वजह से मै सामाजिक पहलू पर इतना जोर देता हू। मेरी इस वात ने जिन्ना को हिलाकर रख दिया। वह अपनी जगह से उठे और उठकर मुझे सीने से लगा लिया। फिर उन्होने वादा किया कि हर मुमकिन मदद हमे दी जायगी। मैने उन्हे बताया 'मुझे मदद नही, वल्कि आपका विश्वास चाहिए।' उन्होने कहा, 'मै तो पहले से ही दो लाख चर्खो के लिए आर्डर दे चुका हू। सरहदी सूवे का दौरा मै अनकरीब ही करनेवाला हू। उस वक्त खुदाई खिदमतगारो से मिलूगा। आप तबतक चर्खो से काम चालू करवाये। मैने उन्हे कहा कि चर्खे बनवा लेना आसान है, पर उन्हे चालू कराना उतना आसान नही।

"आईनसाज असेम्बली का इजलास अभी चल ही रहा था कि मै सरहदी सूबे के लिए रवाना हो गया। वहा मैने अपने लोगो को जिन्ना के साथ हुई अपनी मुलाकात की बात वताते हुए कहा कि अब हमे रचनात्मक कार्यक्रम को जोरो से शुरू करने के लिए कमर कस लेनी चाहिए।"

७

कूटनीति की पराकाष्ठा

"ओलाफ कैरो के वाद डण्डास गवर्नर वनकर आये। ऊचे ओहदे सव अग्रेजो और उनके पिट्टुओ के पास ही थे। जव उन्हे यह पता चला कि हमारा जिन्ना से समझौता हो गया है तो वे लोग डर गये। वडे वजीर अब्दुल कयूम और उसके हिमायतियो के तो पैरोतले से जमीन ही सरक गई। उन्हे लगा कि अगर कुछ किया न गया, तो वस दिन गये समझो।

"जव जिन्ना सरहदी सूबे में आये और खुदाई खिदमतगारो से मिलने का सवाल उठा तव वहा के सरकारी हलको ने जिन्ना से कहा कि खुदाई खिदमतगारो को मुह लगाना अक्लमदी न होगी। अग्रेज अफसरो ने कहा कि खुदाई खिदमतगारो को चार माह की मोहलत दी गई थी और नतीजा यह हुआ कि अव उन्हे वस में करना ही मुश्किल हो गया है और उन्हे कावू करने का एक ही तरीका रह गया है कि उन्हे लीग मे मिला लिया जाय, वरना ये लोग वेहद खतरनाक सावित हो सकते है। अगर आप इनकी मीटिग मे गये तो हो सकता है कि ये आपका कत्ल कर दे।

"हमने जिन्ना से मिलने का वक्त मागा, तो उन्होने माफी मागकर टाल दिया। वजह यह वताई गई कि अगर मै एक गैर-सरकारी मीटिगो मे शामिल होता हू, तो वाकी लोग नाराज होगे, क्योकि यह तो मुमकिन नही कि मै सभी गैर-सरकारी

मीटिगो मे शामिल हो सकू। यह सिर्फ बहानेबाजी थी, क्योकि बाद मे वह कई गैर-सरकारी मीटिगो मे गये।

"इस झूठ को समझकर हमने जिन्ना के किसी जलसे मे न जाने का फैसला किया। इसके बाद भी गवर्नमेट हाउस आने का निमन्त्रण पाकर मै वहा गया और जिन्ना से मिला। उन्होने शिकायती लहजे मे कहा, 'क्या बात है, किसी भी जलसे या पार्टी मे आपसे मुलाकात का मौका नही मिल सका?' जिस तरह यह बात कही गई उसका मतलब था कि हम जानबूझकर नही गये, और उनके समारोहों का बहिष्कार करके उनकी तौहीन की। मैने जवाब मे कहा, 'मै तो स्वभावत फकीर हू। जलसे-पार्टिया अमीरो की चीजे है। मेरा इनसे क्या ताल्लुक?' जिन्ना ने कहा कि आप लोगो की बेहतरी और मुल्क की बहबूदी भी इसीमे है कि आप मुस्लिम लीग मे शामिल हो जाय। मैने पूछा, 'क्या आप हमारी खिदमत का इस्तेमाल करना चाहते है या हमे खिदमत के लिए बेकार करके रख देना चाहते है?'

"जिन्ना—यकीनन, मै आपकी खिदमत का इस्तेमाल करना चाहता हू।

"अब्दुल गफ्फार खान—तो फिर खुदाई खिदमतगारो के सदर आप बन जाय। मै तो ऐसी जमातो के मार्फत ही काम कर सकूगा।

"जि०—लेकिन मै तो आपसे कह चुका हू कि मै आपके साथ हू, आप जो कुछ भी तजवीज करेगे, वह मुझे मजूर होगी। तब आप काम क्यो नही कर सकेगे?

"अ० ग० खा०—मै इन मुस्लिम लीगियो के साथ काम नही कर सकता।

"जि०—क्यो ?

"अ० ग० खा०—क्योकि वे ईमानदार नही हैं। वे खुद-गर्ज है और लूट मचा रहे है।

"जि०—सबूत क्या है ?

"अ० ग० खा०—हिन्दुओ की छोडी हुई करोडो रुपयों की जायदाद वे हडप किये बैठे है। क्या किसीने भी माल-ए-गनीमत (लडाई में मिले लूट के माल) का अपना हिस्सा शरीअत के कानून के मुताबित सरकारी खजाने मे जमा कराया है।

"जि०—लेकिन सभी तो ऐसे नही है। कुछ तो ईमानदार होते है।

"अ० ग० खा०—हा, वही जिन्हे मौका नही मिला। उनके हाथ भी अगर लगता तो वे भी वैसा ही करते।

"अब्दुल कय्यूम और उसके पिट्ठुओ ने बाद मे हमारे खिलाफ जिन्ना के कान भरने शुरू किये और जिन्ना भी आंख मूदकर उनकी हर बात पर यकीन करने लगे।

"और आखिर वे लोग मक्कारीभरी सियासी साजिशों पर उतर आये। जिन्ना को एक जलसे मे भाषण करना था। अब्दुल कय्यूम ने अपने एजेंट जलसे मे जगह-जगह तैनात कर दिये और उन्हे हिदायत दी कि भाषण के बीच गडबड़ी करके सभा-त्याग करे। इस योजना के अनुसार उन्होने भाषण के बीच गड़बड़ी की और जब भी कोई शख्स उठता तो कय्यूम

चिल्ला पडता 'वदमाश खुदाई खिदमतगारो, तुम अपनी हर-कतो से वाज क्यो नही ग्राते ?'. यह चाल काम कर गई। जिन्ना को यकीन हो गया कि खुदाई खिदमतगार खतरनाक है ग्रौर उन्हे जान से मारने पर तुले हुए है। फलत सरहदी सूवा छोडने से पहले वह हिदायत दे गये कि खुदाई खिदमत-गारो को कुचल डाला जाय। लियाकत अली को इसके लिए खुली छूट दे दी गई कि वह किसी भी डिप्टी कमिश्नर को मुग्रत्तल या वरतरफ कर सकते है।

"जिन्ना के चले जाने के वाद गनी ने डॉक्टर खान को इत्तला दी कि खुदाई खिदमतगारो को कुचलने के लिए कनि-घम को फिर से गवर्नर वनाकर बुलाया जा रहा है। कनिघम ने आते ही तमाम ग्रफसरो को हिदायत दे दी कि खुदाई खिदमतगारो का विरोध मोल न ले। फिर उन्होने गनी को बुलवाकर उसे मनाने की कोशिश की कि खुदाई खिदमतगार सरहदी मुस्लिम लीग के साथ मिलकर काम करे। मैने गनी की मार्फत कहलवा दिया कि ऐसा नही हो सकता, क्योकि लीग के साथ हमारा दृष्टिकोण नही मिलता, हमारा दृष्टि-कोण रचनात्मक है और उनका विध्वसात्मक। ऐसे मे हम साथ-साथ काम कैसे कर सकते है।

"तव मुझे गिरफ्तार कर लिया गया और इल्जाम यह लगाया कि मै कवायलियो को वलवे के लिए भडकाने के वास्ते इपी के फकीर को रुपये देता हू। इल्जाम एकदम वेबुनियाद था, लेकिन ऐन उसी वक्त मेरे वेटे वली को भी गाव मे गिरफ्तार कर लिया गया।

"हमारी गिरफ्तारी के कोई डेढ महीने बाद, जबकि डाक्टर खानसाहब अभी जेल से बाहर ही थे, चारसद्दा में जुमे की नमाज पढने के लिए खुदाई खिदमतगार इकट्ठे हो रहे थे। अपने गिरफ्तारशुदा साथियो के लिए खुदा से दुआ करने और उनकी रिहाई की माग करने का भी इरादा था। जिस मस्जिद मे उन्हे जाना था वह कुछ ऊचाई पर थी, जहा एक बुजुर्ग के पीछे-पीछे सब जलूस की शक्ल मे जा रहे थे। जलूस पूरी तरह व्यवस्थित था और औरतो ने सिर पर कुरानशरीफ उठा रखे थे। अब्दुल कय्यूम ने चढाई पर मस्जिद में फौजे तैनात कर रखी थी। जैसे ही जलूस मस्जिद की चढाई पर पहुचा कि लोगो पर दनादन गोलिया बरसनी शुरू हो गई। गोलियो की बौछार से कुरानशरीफ के भी चीथडे हवा मे उडने लगे। खिदमतगारो के कमाण्डर ने खुदाई खिदमतगारों को हुक्म दिया कि वे जमीन पर लेट जाय। वे जमीन पर उल्टे लेट गये, तो मशीनगनों के मुह उनकी तरफ कर दिये गए। गोलियों से जो बचे उनपर नमाज पढते वक्त हमला किया गया। उनसे कहा गया कि उन्हे नमाज पढने का कोई हक नही, क्योकि वे 'हिन्दू' है। जिस मस्जिद में उन्होने नमाज पढी, उसे 'हिन्दुओं की मस्जिद' कहा गया। उन्हे नगा करके गन्दे तालावो में फेक दिया गया। एक तरफ की दाढी-मूछ काटकर उन्हे गधो पर बिठाकर शहर में घुमाया गया। उसके अलावा उन्हे और भी कई वीभत्स तरीको से सताया गया और उन्हीकी औरतो के सामने उन्हे बेइज्जत और जलील किया गया।

"इसके फौरन ही बाद डा० खानसाहब और मेरे बेटे अब्दुल गनी को भी गिरफ्तार कर लिया गया।

"जब मुझे जेल मे रहते तीन साल हो गये, एक दिन लियाकत अली की हिदायत के मुताबिक जेल-सुपरिटेडेट मुझसे पूछने आया कि हम अब भी मुस्लिम लीग मे शामिल होने को तैयार है या नही ? बटवारे के बारे मे भी हमारे खयालात जानने चाहे कि क्या हम उसे जारी रखने के हक मे है या खत्म कर देने के। मैने जवाब दिया कि हम तो कैदी है, सियासी झगडो से हमारा क्या मतलब ? जहातक लीगी हुकूमत मे शामिल होने का ताल्लुक था, मैने कहा कि लीगियो के लिए हुकूमत का मकसद है जाती ताकत हासिल करना, जबकि हमारी निगाह मे अवाम की खिदमत करने का वह एक जरिया है, इसलिए हम दोनो किस तरह एकजुट हो सकते है ?

"सन् १९५३ मे, जबकि मै अभी जेल मे ही था, एक सरदार बहादुर खान मुझसे मिलने आये। उन्होने मुझे बताया कि केन्द्रीय सरकार मुझे बराबर जेल मे रखने के हक मे नही है और मुझे छोडना चाहती है। मगर उसे डर है कि हमारे साथ जो जुल्म हुए, उन्हे हम कभी नही भूलेगे और इसके लिए सरकार को माफ नही करेगे। मैने कहा कि खुदाई खिदमतगार के नाते मै तो अहिसा मे विश्वास रखता हू और बदला लेने की बात कभी सोच ही नही सकता। लेकिन अधिकारियो को मेरी रिहाई की तबतक चिन्ता नही करनी चाहिए जबतक कि उन्हे मेरी निर्दोषिता का यकीन न हो

जाय और उन्हे मुझसे कोई डर न रहे। इसके बाद सरदार बहादुर चले गये, लेकिन थोडी देर बाद फिर आये और कहा कि मेरी रिहाई का फैसला कर लिया गया है।

"मगर उसके बाद भी चार साल तक मुझे १८१८ के बगाल रेगूलेशन के मातहत नजरबन्द रखा गया। इन चार वर्षो मे एक साल मैने सर्किट हाउस मे बिताया। इस तरह सात साल वीत जाने पर भी वे मुझे छोडना नही चाहते थे। बगाल रेगूलेशन के मातहत मेरी नजरबन्दी खत्म करके उन्होने मुझे सुरक्षा अध्यादेश के मातहत पजाब मे बन्द कर दिया। पहले मुझे वाह मे रखा गया, फिर छछ मे। एक दिन अखबार के कुछ लोग मुझसे मिलने आये। उन्होने मुझे वताया कि इस्कन्दर मिर्जा ने कहा है कि वह मुझे फिर से गिरफ्तार करना चाहते है। पहले तो हमारे खिलाफ इलजाम यह था कि हम 'हिन्दू' और हिन्दुस्तानी जासूस है, मगर वह बहाना अब पुराना हो चुका था। अब यह इलजाम लगाया जायगा कि मै अफगानिस्तान के साथ मिलकर साजिश कर रहा हू।

"इसी बीच अब्दुल कय्यूम की जगह अब्दुल रशीद सरहदी सूबे के बडे वजीर होकर आ गये। १२ जुलाई, १९५५ को उन्होने मरी मे 'एक इकाई' पर भाषण करते हुए कहा कि इस वक्त बगाल रेगूलेशन के या डिफेस आर्डिनेस के मातहत कोई भी नजरबन्द हमारे यहा नही है। उनके इस कथन को पूर्वी बगाल के एक बगाली प्रतिनिधि प्रो० राजकुमार चक्रवर्ती ने चुनौती दी और मेरा नाम नजरवन्दी मे लेकर उनका खण्डन

किया। पर अब्दुल रशीद ने कहा कि खानसाहब के लिए लगातार केन्द्रीय सरकार जिम्मेवार है। जहातक हमारा (अब्दुल रशीद का) ताल्लुक है, हम तो सरहदी सूबे मे उनका स्वागत ही करेगे।

"इस्कन्दर मिर्जा को लगा कि अब्दुल रशीद के इस बयान से स्थिति बिगड गई है। इसलिए जब केन्द्रीय सरकार के पास कोई बहाना न रहा, तो उसने ऐलान किया कि सरहदी सूबे की हुकूमत खानसाहब को जलावतन नही करना चाहती, तो हमे भी उन्हे जेल से बाहर रखने मे कोई ऐतराज नही है। इसके बाद मेरे खिलाफ सारी पाबन्दिया हटा दी गई।

इसके बाद अब्दुल रशीद को भी शीघ्र ही पदच्युत कर दिया गया।"

बाद की कहानी बहुत मुख्तसिर है। पाकिस्तान के शासक अपनी 'एक इकाई' की योजना को अमल मे लाने पर तुले हुए थे। इसका मकसद यह था कि पश्चिमी पाकिस्तान के चार सूबो और दस छोटी रियासतो को मिलाकर एक कर दिया जाय और इस तरह पश्चिम पाकिस्तान के ४२९ लाख निवासियो को पूर्वी पाकिस्तान के ५०८ लाख निवासियो के बराबर बना दिया जाय। पूर्वी पाकिस्तानियो ने तो इस बेइन्साफी की सख्त मुखालिफत की है, मगर पश्तो बोलने वालो की एक अलग इकाईवाली माग की तो जड पर ही इससे प्रहार होता था। बादशाह खान ने इस बिना पर इसकी मुखालिफत की कि यह सबद्ध लोगो के हित मे नही है। न तो सिन्ध इसे चाहता है, न बिलोचिस्तान और न

सरहदी सूवा ही ।

इसके वजाय उन्होने दो इकाइयोवाली एक तजवीज पेश की। कहा कि एक मे तो पश्चिमी पजाववाले रहे और दूसरी मे पश्चिमी पाकिस्तान के सभी वाकी हिस्से, वशर्ते कि वे उसके लिए तैयार हो। लेकिन चौधरी मोहम्मद अली इस वात पर दृढ थे कि पूरे पाकिस्तान की या तो एक इकाई वने या फिर कुछ भी नही।

पूर्वी वगाल ने भी इस एक इकाईवाली तजवीज की जोरदार मुखालिफत की, क्योकि इसके अमल मे आने के वाद पजावी मुसलमानो का पूरे पाकिस्तान पर वोलवाला हो जाता, जिसे न तो वंगाल सहन करता, न सिध और विलोचिस्तान और न सरहदी सूवा। इस तरह यह तजवीज पार्लमेण्ट मे आगे नही वढ पाई।

उन दिनो गुलाममुहम्मद पाकिस्तान के गवर्नर जनरल थे। उन्होने वादशाह खान के भाई डा० खानसाहव के साथ समझौते की वातचीत शुरु की। उन्होने यह भी तसलीम किया कि खुदाई खिदमतगारो के साथ वाकई वहुत वडी ज्यादती हुई है और उनके लिए यह सव भूल जाना भी वडा मुश्किल है। वादशाह खान ने गुलाम मुहम्मद को इस वात का भी यकीन दिलाया कि उनके दिल मे वदले की कोई भावना नही है। हालाकि न सिर्फ खुदाई खिदमतगारो के साथ वल्कि पूरे पख्तून अवाम के साथ वेइन्साफी की गई है, मगर हम तो वहुत पहले ही जुल्म करनेवालो को माफ कर चुके है।

अधिकारियो की तरफ से दलील दी गई कि पश्चिमी पाकिस्तान को एक इकाई बनाना जरूरी है, क्योकि आवपाशी, यातायात और बडी औद्योगिक योजनाओ के लिए एक ही कट्रोल होना वाछनीय है। वादशाह खान ने कहा, यह सव खुदमुख्त्यार इकाइयो का सघ बनाने से भी हो सकता है। उन्होने जनता का जीवन-स्तर ऊचा उठाने के कार्यक्रम पर जोर दिया।

इस्कन्दर मिर्जा यह जानते थे कि वादशाह खान को ग्राम-सुधार के कार्य मे वडी दिलचस्पी है, इसलिए चौ० मुहम्मदअली ने ग्राम-सुधार की जो योजना वनाई थी, उसे प्रस्तुत कर यह काम सम्हालने के लिए उनसे कहा। बादशाह खान ने कहा कि मै यह जिम्मेदारी लेने को तैयार हू, पर पहले एक इकाईवाले मामले का तसल्लीबख्श फैसला हो जाना चाहिए।

इस्कन्दर मिर्जा ने कहा कि एक इकाईवाला सवाल तो अव हुकूमत की इज्जत का सवाल वन चुकी है, अगर इससे पीछे हटते है तो दुनिया के सामने नाक कटती है। बादशाह खान ने जवाब दिया कि मुल्क की अदरूनी मजबूती और पाकिस्तान के तमाम तबको का पूरे दिल से आपस मे मिलकर काम करना ज्यादा अहमियत रखता है। अगर वे सव घर मे मिलकर एक दिमाग से सोचते है तो दूसरे मुल्को की निगाह मे उनकी इज्जत अपने-आप वढेगी। इस सवके लिए पख्तूनो की हमदर्दी और मदद हासिल करना वहुत जरूरी है और वह तभी हो सकता है जवकि उनकी जायज मागो

को जम्हूरी तरीको से पूरा किया जाय। उन्होंने पूछा कि मुझे अवाम के सामने अपना नजरिया रखने का मौका क्यो नही दिया जाता, जबकि हुकुमरान लोग अपनी एक इकाई-वाली तजवीज का अपने हक में बदस्तूर प्रचार किये जाते है ?

इस्कन्दर मिर्जा ने माना कि बादशाह खान को अपना नजरिया रखने का पूरा हक है, मगर जैसे ही उन्होने ऐसा किया कि उन्हे दफा १२३ए, १२४ए और १५३ए के मातहत गिरफ्तार कर लिया गया। इलजाम यह लगाया गया कि वह पाकिस्तान के लोगो को भड़काते है और दिलों में नफरत पैदा करके बगावत के लिए उन्हे आमादा करते है। जून १९५६ से जनवरी १९५७ तक लाहौर-जेल में विचाराधीन कैदी की तरह रहने के बाद उन्हे अदालत के उठने तक की कैद और १४,००० रु० जुर्माना की सजा दी गई। उन्होने जुर्माना देने से इन्कार किया तो उनकी जायदाद जब्त कर ली गई। लाहौर से हटाकर उन्हे हरिपुर-जेल मे भेजा गया और तभी छोड़ा गया जबकि पाकिस्तान में मार्शल ला लगने वाला था।

अक्तूबर १९५८ में उन्हे फिर गिरफ्तार कर लिया गया और १९६० के आखिर तक वह जेल में ही रहे। फिर अप्रैल १९६१ में गिरफ्तार किया गया और ३० जनवरी, १९६४ को तब जाकर छोड़ा जबकि उनकी तन्दुरुस्ती पूरी तरह से गिर चुकी थी। पाकिस्तानी शासक यह नहीं चाहते थे कि उनकी मौत जेल में हो और उससे मुल्क मे उनकी बदनामी हो।

इसलिए उन्हे घर मे नजरबन्द रखा गया। अधिकारियो ने शायद समझ लिया था कि अब यह बचेगे नही, लेकिन ऐसा नही हुआ।

बादशाह खान के इस तरह लगातार जेल मे रहने की वजह से दुनियाभर की निगाह उनपर गई। एमनेस्टी इण्टर-नेशनल ने तो उन्हे उस 'साल के महान बन्दी' के रूप मे चुनकर इस तथ्य को और उजागर किया। आखिर अक्तूबर १९६४ मे जब उनकी तन्दुरुस्ती बिल्कुल बेकार हो चुकी थी तब उन्हे इलाज के लिए इग्लैड जाने की इजाजत दी गई।

: ८ :

हिन्दुस्तान का वादा

२६ जुलाई, १९६५

पिछले कुछ दिनो मे खानसाहब यह बात कई बार कह चुके है कि अगर वह बटवारे की योजना को मान लेते तो उन्हे पख्तूनिस्तान भी मिल गया होता और पख्तूनो के लिए वे सबकुछ हासिल कर चुके होते। उन्होने यह भी बताया कि बटवारे के वक्त गाधीजी ने उनसे कहा था, अगर उन्हे सताया गया तो आजाद हिन्दुस्तान उनकी मदद किये बगैर नही रहेगा। मगर वह वादा पूरा नही किया गया। गांधीजी अगर जिन्दा होते, तो ऐसा हर्गिज न होने देते। हिन्दुस्तान को इस वादाखिलाफी के लिए प्रायश्चित्त करना

चाहिए।

पुरानी बातों को याद करते हुए उन्होंने बताया कि कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में जब बंटवारे का फैसला किया गया उस वक्त गांधीजी ने उनसे ऐलानिया कहा था कि अगर पख्तूनों के साथ कभी भी ज्यादती की गई तो हिन्दुस्तान इनके लिए लड़ेगा और पाकिस्तान अगर सीधे रास्ते से नहीं मानेगा तो उसपर तो जंग भी छिड़ सकता है। गांधीजी ने यही बात बाद में खानसाहब के एक नजदीकी रिश्तेदार से भी। वही जब आजादी के बाद यह उनसे मिलने दिल्ली गये थे उन्होंने गांधीजी से पूछा था कि उस सूरत में आपकी अहिंसा का क्या होगा? उनके यह पूछने पर गांधीजी ने हँसकर जवाब दिया था, "मेरी अहिंसा की बात फिर न करें, उसको मैं सम्हाल लूंगा।"

कर उन्हे इखलाक से गिरा रही है। सिन्ध मे गुलाम मुहम्मद बैरेज पर शरणार्थियो के लिए रखी गई जमीन मे छब्बीस फीसदी पर अवकाश प्राप्त पजाबी फौजी सिपाहियो को बसा दिया गया है। थारक्षेत्र मे भी यही सब किया गया है, ताकि सरहदी इलाको मे पजाबी और गैरपजावी आबादी का अनुपात बदलकर सीमा के आसपास के इलाको पर अपना शासन और भी मजबूत किया जा सके। मगर खानसाहब को यकीन था कि इससे कुछ होना-जाना नही।

मैने खानसाहब से पूछा कि अब आपका तात्कालिक कार्यक्रम क्या है ? उन्होने कहा कि मै अफगान हुकूमत की स्वीकृति और मदद से खुदाई खिदमतगार आन्दोलन फिर से शुरू करना चाहता हू।

"क्या यह आन्दोलन पहले जैसा ही होगा या उससे कुछ अलग ढग का ?" मैने उनसे पूछा, क्योकि उनके आसपास के कुछ लोगो को मैने हथियार और लडाई के साज-सामान की बात करते सुना था।

वह बोले, "हमारा सब काम अहिसात्मक ही होगा, क्योकि मै अहिसा के लिए वचनबद्ध हू। पठानो मे आपसी जगोजहद दूर करने की मेरी हमेशा कोशिश रही है।"

"मै जानता हू कि इस किस्म का आन्दोलन शुरू करना खतरे से खाली नही", उन्होने कहा, "मगर मै कर भी क्या सकता हू ? अगर मैं हलचल शुरू नही करता, या उसमे नाकामयाबी होती है, तो इस बात का बडा खतरा है कि पठान काबू से निकल जाय और हताश होकर चाहे जो कर

बैठे। यह बहुत दु खदायी बात होगी। इस सभावना को टाल-ने के लिए ही मैने खुदाई खिदमतगार सगठन को फिर से शुरू करने का काम उठाया है। ऐसा न किया गया, तो कौम के रूप मे पठानो की हस्ती ही खत्म हो जायगी, जिसे हम कभी बर्दाश्त नही कर सकते। पठान आत्मसमर्पण करके कुचल डाले जाय और उनके हौसले हमेशा के लिए पस्त हो जाय, यह मैं नही होने दे सकता।

"पठान भीषण योद्धाओ को अहिसा के व्रतधारी वह कैसे बना सके ?" यह पूछने पर उन्होने बताया कि उनके जीवन मे घुल-मिलकर और अपने उदाहरण से मै उनके जीवन को घड रहा हू। ज्यादातर वक्त मै आम लोगो की तरह गावो मे उन्हीके घरो मे रहता हू। हमने उन्हो रोजमर्रा की बुनियादी बाते सिखाई—मसलन साफ और स्वस्थ रहना, आपस में शान्ति से रहना, सामाजिक कुरीतियो और गलत परपराओ को छोडना आदि। हमने खुदाई खिदमतगारो को समझाया कि खुदा की खिदमत वे खुदा के बदो की खिदमत करके ही कर सकेगे।

मैने पूछा कि इस आन्दोलन को फिर से शुरू करने मे दिक्कते क्या है ? उन्होने जवाब दिया कि खुदगर्ज लोग जमहूरियत से डरते थे और इसलिए मुझसे भी घबराते थे। उन्होने यह डर आम लोगो मे बराबर फैलाया। मगर अब लोगो मे विश्वास लौट रहा है। हम खानो को बताते है कि हम यह नही चाहते कि वे खान न रहे, हम तो इतना ही चाहते है कि और लोग भी खान बन जाय। इस बात का

तो आपको डर नही न ? वे जवाब देते है कि "हर्गिज नही ।"

खानसाहब ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, "लोग बहुत बडी तादाद मे हमारे साथ हैं। जब मै हेरात के दौरे पर गया तब आप अगर साथ होते तो देखते कि कैसे लडके-लडकिया और मर्द-औरते मकानो की छतो और पेडो की शाखो पर लदे पडे थे। लोग मेरे पास आते है, तो मै उनसे कहता हू—आप मेरे दीदार के लिए, मेरे हाथ चूमने या मुझे शुकराना देने इसलिए आते है कि आपको कहा गया है, इससे आपको सवाब मिलेगा। लेकिन यह सब झूठ है। ये गलत बाते आपको उन लोगो ने बतलाई है जो अपने जाती फायदे के लिए लोगो को बेवकूफ बना रहे है। मुझे इनमे से कुछ भी नही चाहिए। मै तो सिर्फ आप लोगो की खिदमत करना चाहता हू, आप लोगो को खुदाई खिदमतगार बनाना चाहता हू, क्योकि खुदा की खिदमत करने का खुदा के बन्दो की खिदमत करने के सिवा और कोई रास्ता ही नही है।"

मैने यह भी जानना चाहा कि अबकी बार शुरू किया गया आन्दोलन भी उतना ही लोकप्रिय हो रहा है या नही जितना कि सरहदी सूबे मे हुआ था ? उन्होने कहा कि पहले से बहुत फर्क है। अबकी बार पहले की बनिस्वत ज्यादा जोश है। पहले तो मुझे उन लोगो से निपटना पडता था जिन्हे ब्रिटिश हुकूमत ने इखलाक से गिराया हुआ था और वे गुलाम जहनियत के थे। अबकी बार जिन लोगो के बीच

मै काम कर रहा हू वे सीधे-सादे है और उनकी तरह गिरे हुए नही है। वे आजादी मे ही वडे हुए है। इसलिए वे स्वतः ही आगे आते है और मेरा काम आसान हो गया है।

मैंने पूछा कि पठानों मे अनुशासन पैदा करना क्या मुश्किल काम नही ? इसपर उन्होने कहा कि सिपाहियाना कौम होने के नाते यह खूवी तो इनमे पहले से ही मौजूद थी, मुझे तो सिर्फ उस खूबी को अहिसा की तरफ मोड देने का ही काम करना पड़ा। अपनी वात साफ करने के लिए उन्होने गाधीजी की एक वात याद दिलाई। 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के वाद वह वम्बई के विरला-भवन मे गांधीजी के साथ रहे थे। एक दिन वातो-ही-वातो मे उन्होने गाधीजी से कहा, "महात्माजी, क्या यह हैरानी की वात नही कि इस आन्दोलन के दौरान मुल्क के अनेक हिस्सो मे हिसा फूटी, लेकिन पठान विल्कुल शान्त रहे ?" गांधीजी ने जवाव मे कहा, "खानसाहव, क्या मैंने आपको अक्सर यह वात नही कही कि अहिसा वहादुरो का हथियार है ? पठानो ने जो हिसा छोड़ी है, वह किसी कमजोरी की वजह से नही वल्कि अपनी ताकत महसूस करके छोडी है। मुझे तो इसमे रत्तीभर भी हैरानी नही हुई कि उन्होने वहादुरो की अहिसा की मिसाल कायम की है।"

मैंने डरते-डरते यह वात पूछी कि अगर हिन्दुस्तान उनकी मदद को आगे आये तो क्या उससे उन्हे जाती तौर पर नुकसान न होगा ? और क्या उससे उनमें और पाकिस्तान के वीच किसी समझौते की रही-सही उम्मीद भी न जाती रहेगी ? उन्होने जवाव मे कहा कि जहातक मेरा जाती सवाल है, मै

तो हर उम्मीद से हाथ धो चुका हू और अब हर्गिज पाकिस्तान नही लौटूगा। बाकी रही वात पाकिस्तान के साथ किसी समझौते की, सो उसका सवाल ही नही उठता।

उन्होने वताया कि वह हर मुमकिन कोशिश करके हार चुके और अब मजबूरन इस नतीजे पर पहुचे है कि पाकिस्तान कभी सुधरनेवाला नही। मिसाल के तौर पर उन्होने कहा कि हिन्दुस्तान अगर एक नही आधा दर्जन कश्मीर भी उसे दे दे तव भी पाकिस्तान के साथ उसकी दोस्ती नही होगी। मेरा तो यकीन बेतरह हिल चुका है, अब पाकिस्तान से मुझे कुछ लेना-देना नही। मै 'करूगा या मरूगा' पर आगया हू या तो पख्तूनिस्तान लेकर रहूगा या उसे हासिल करने की कोशिश करते हुए मर जाऊगा।

मैने पूछा कि क्या कभी हिन्दुस्तान आने का प्रोग्राम भी वनायेंगे, तो उन्होने कहा—हा, आ सकता हू, वशर्ते कि हिन्दुस्तान मुझे मदद का वादा दे और पख्तूनिस्तान के सवाल को अपना बना ले। फिर मैने पूछा कि आप अवाम की राय को अपने हक मे करने की खातिर क्या हिन्दुस्तान आने की नही सोच सकते ? इसपर भी उन्होने यही कहा कि यह भी इसपर निर्भर है कि भारत की सरकार क्या रवैया इख्तयार करती है। इसके अलावा इस वात का उन्हे बडा खयाल है कि पहले अफगानिस्तान मे तो उन्हे कुछ ठोस काम कर ही लेना चाहिए।

खानसाहव ने बताया कि जव गाधीजी को अमरीका या यूरोप की दावत दी गई, तो उन्होने कहा था. कि दूसरे मुल्को

पर असर डालने की मै तबतक कोई उम्मीद नही रख सकता जबतक अपने ही मुल्क मे मैने पहले कुछ न कर दिखाया हो। यही जवाब मेरा उन लोगो को है, जो मुझे अमरीका या और देशो से मदद लेने को जाने के लिए कहते है।

खानसाहब महसूस करते है कि अगर हिन्दुस्तान और अफगानिस्तान उनकी पूरी मदद करे तो पख्तूनिस्तान का मसला विना किसी बाहरी मदद के और विना जग के ही हल हो सकता है। मैने पूछा कि हिन्दुस्तान किस रूप मे मदद कर सकता है? उन्होने जवाब दिया—सबद्ध पक्षो पर अपनी पूरी नैतिक, आर्थिक और राजनैतिक शक्ति का दवाव डालकर। बटवारे के वक्त गाधीजी ने हमे जो मदद का वचन दिया था, उसके कारण हिन्दुस्तान एक तरह से नैतिक रूप मे इस वात के लिए बधा हुआ है कि वह हमारे लिए भी वह सब करे जो अपने लिए जिन्दगी और मौत का सवाल पैदा होने पर करेगा।

जब मै उनकी वाते सुन रहा था, तो जो बात मेरे मन मे सबसे ज्यादा महसूस हो रही थी और मुझे हैरत मे डाल रही थी वह थी इस खुदा के वन्दे की अजेय भावना। वह जेल के सीखचो के पीछे से दुखे दिल के साथ सबकुछ मटियामेट होता देखते रहे जिसकी खातिर उन्होने पूरी जिन्दगी दाव पर लगा दी थी, फिर भी हिम्मत नही हारी। बल्कि अपने जीवन की ढलती हुई साझ मे जबकि हर तरफ विरोध-ही-विरोध दिखाई दे रहा है अब भी, अपने-पुराने औजारो के सहारे गिरे हुए महल को फिर से वैसा

ही बनाने के महान कार्य मे कमर कसके तैयार हैं।

मेरे कानो मे उनके वे शब्द गूज रहे थे जो कि उन्होंने गुस्से से नही मगर दर्द से भरकर कहे थे कि हिन्दुस्तान आज़ादी के मजे लूट रहा है और उन लोगो को भुला बैठा है, जिन्होंने आजादी को हासिल करने मे उसकी मदद की थी लेकिन खुद आजादी से वचित रह गये। मेरी गर्दन शर्म से झुक गई और मैंने यह स्वीकार कर लिया कि हिन्दुस्तान को उस मित्रद्रोह से मुक्ति नही मिल सकती, जिसे गीता की भाषा मे विनोबाजी ने 'मित्रद्रोहे च पातकम्' कहा है।

मैंने उन्हे यह भी बताया कि हिन्दुस्तान अगर अबतक इस दिशा मे कुछ नही कर सका, तो इसके कारण थे। मगर अब हालात बदल चुके है और मुझे यकीन है कि अब वह अपनी जिम्मेदारी के प्रति जागरूक हो जायगा और हर मुमकिन तरीके से अपना वादा पूरा करेगा।

२७ जुलाई, १६६५

खानसाहब ने मुझे बताया कि आज हमे उनके साथी कलीमुल्ला मतीन के साथ खाना खाना होगा। कलीमुल्ला असदउल्ला खान मतीन के भाई और बजौर के उन उमरा खान मतीन के पोते हैं जिनका नाम अफगानिस्तान के इतिहास मे गर्व के साथ लिया जाता है। वह स्वभाव से शर्मीले और अत्यन्त नम्र हैं। उनके चेहरे से सस्कृति और सभ्यता टपकती है। खानसाहब ने कहा, "वह इस कदर सीधे-सादे और शर्मीले हैं कि मुझे अक्सर टोकना भी पड़ा है कि अपनी इस खूबी को इतनी इंतहा तक न पहुंचाओ।"

दोपहर को खानसाहब, गरान, गनी और मै उस गाव के लिए रवाना हुए जिसमें कलीमुल्ला के भाई रहते थे। रास्ते में खानसाहब ने मुझे बताया, "मैने उसे कहला दिया है कि हमारे लिए सिर्फ मसूर की दाल और नान ही पकाया जाय।" मौसम सुहावना था। कभी धूप निकल आती तो कभी बादल छा जाते। आसपास की पहाडियो से ठण्डी व ताजी हवा के झोके आ रहे थे। तग पहाडी रास्तो मे, पहाडी चोटियो की छाया में बर्फ की लकीरे चमक रही थी। शाही मेहमानखाने के बाग मे से होकर हम निकले, जो बडा बढिया था। पुराने ढग के पठानी घरो की तरह कलीमुल्ला के घर पहुचने पर देखा कि वह भी कच्ची दीवार से घिरा हुआ था। आगन मे सेब और शहतूत के दरख्त फलो से लदे हुए थे और चारो तरफ चारे के हरे-हरे खेत थे।

"मकान कच्चा है," खानसाहब ने कहा, "मगर अन्दर आप देखेगे कि आसाइश का सब सामान मौजूद है।"

और वह ठीक वैसा ही निकला भी। रेशम के गद्दों पर मखमली मसनदो के सहारे हम बैठ गये। नीचे एक निहायत आलीशान कालीन बिछा हुआ था। घर में बिजली थी, रेडियो भी। खाने से पहले पश्तो-गीत गाये गए, लेकिन खाना मसूर की दाल और नान की बजाय शानदार दावत जैसा ही परोसा गया। फिर जब बाकी के मेहमान चले गये तब घर की औरते खानसाहब से मिलने आई।

रात का खाना हमने जनरल थापर के यहां खाया। जनरल के खास साथी और परिवार के लोग भी वहा मौजूद

थे। खाने के बाद औरतो ने खानसाहब को घेर लिया और देर रात तक उलझाये रखा। आधी रात के बाद हम लोग लौट सके। जब मैंने खानसाहब को यह बताया कि इतना वक्त हो चुका है तो वह बोले, "हा, मगर यह शाम बहुत ही अच्छी बीती। मै तो हिन्दुस्तान को प्यार करता हू। लेकिन लोग हिन्दू-मुसलमान रूप मे बात करते है, यह क्या तमाशा है।"

९

आज का काबुल

२८ जुलाई, १९६५

जो कोई भी काबुल शहर मे से गुजरे, वह वहा की चौडी सडको के दोनो तरफ लगी रूपहली चिनार की पक्तियो और पाशाखाना के दरख्तो से प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। पाशाखाना की पत्तिया इस कदर चिपकनी होती है कि मच्छर उनसे छूकर फिर छूट ही नही सकते, वही ढेर हो जाते है। काबुल मे आधुनिक अस्पताल और ऐसे स्कूल है जहा ज्यादा-तर बच्चो को न सिर्फ मुफ्त तालीम और किताबे मिलती है बल्कि खाना और रहना भी मुफ्त है। बडे-बडे बाजार, जल-पानगृह, सिनेमा और होटल भी वहा है। जगह-जगह ऊची-ऊची आधुनिक इमारते उभरती चली आ रही है, हालाकि वहा इमारत बनाने का खर्च बेहद ज्यादा पडता है। अफगा-

निस्तान की स्थिति सामरिक महत्व की होने के कारण वहां पैसे की कमी नही पडती। इसी स्थिति के कारण शीत-युद्ध के समय यह अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति का अड्डा बना रहता है। चीन ने अभी हाल मे इसे १३ करोड रुपये का कर्ज दिया। इसपर अमरीकी राजदूत भागा हुआ अपने देश गया और उससे बडी रकम का कर्जा मजूर करा लाया। रूस अकेला ही ये सब मिलकर जितना खर्च करते है उससे ज्यादा यहा खर्च कर रहा है। अफगानिस्तान ने चीनी मदद तो ले ली, मगर ज्यादा बडी तादाद मे चीनी अमले को अपने यहा घुसने नही दिया। चीन ने जो सडक बनाने और बडे कारखाने लगाने का सुझाव दिया था उसे भी ठुकरा दिया। इसके बजाय उन्हे छोटे-मोटे काम सौंप दिये, जैसे फलो की खेती, शहद की मक्खिया पालना और मुर्गीखाना खोलना वगैरा।

कल और आज मैं वक्त तय कर महकमा तालीम के डिप्टी डायरेक्टर श्री अब्दुल रहमान और महकमा सेहत के डायरेक्टर डाक्टर हकमी से मिला। श्री रहमान ने जो आकडे मुझे बताये वे दिखाते है कि अफगानिस्तान शिक्षा के मामले मे तेजी से बीसवी सदी के करीब आने की कोशिश कर रहा है। सन् १९५१ से लेकर १९६३ तक यूनीवर्सिटी के ग्रेजुएटो की तादाद ७७ से बढकर ३२४ तक आ पहुची थी, जिनमे ३८ औरते थी।

जो पहले २८ थे अब ६० हो गये है। सरकारी स्कूलो की गिनती भी १९५० से १९६४ मे ३७३ से वढकर १३७० तक पहुच गई थी।

लडकियो के स्कूलो की सख्या वडी तेजी से वढी है। १९२० मे ५ स्कूल थे, १९६४ मे २३९ हो गये। १९५१ मे छात्र-सख्या ९८,७३८ थी, जिनमें ८६० लडकिया थी। १९६४ मे कुल छात्र ३,४७,८५४ हो गये, इनमे ५०,८३५ लडकिया थी।

जिस रफ्तार से औरतो की आजादी वढती जा रही है उसका अन्दाजा कामकाजी स्कूलो मे भर्ती होनेवाली औरतो की तादाद से लगाया जा सकता है। ऐसे स्कूलो की कुल छात्र-सख्या १०,२६३ मे से औरते १५२९ है। परदा भी तेजी से गायब हो रहा है। कॉफी हाउसो और जलपानगृहो मे और शहर मे जहा-तहा औरते आजादी के साथ घूमती-फिरती दिखाई पडती है। सब जगह पश्चिमी लिवास का जोर है। काम-धधो मे वे तेजी के साथ ऊचे-ऊचे ओहदो पर पहुचना चाहती है। यहातक कि छोटे पदो पर कोई काम ही करना नही चाहती। निस्सदेह इससे अच्छी-खासी समस्या ही पैदा हो गई है। स्वास्थ्य के बारे मे महकमा सेहत के डायरेक्टर ने शिकायतन बतलाया कि लोग समझते है, अस्पताल बनवा देने से ही सबकुछ हो जायगा, बाकी तो यह सोच लेते है कि डाक्टर लोग सब सम्हाल लेगे। "मगर डाक्टर बेचारे क्या करे, जब अस्पताल मे काफी नर्से ही न हो? मजा यह है कि हर लडकी डाक्टर ही बनना चाहती है,

नर्स या दाई बनना कोई पसद नही करती। और-तो-और अपनी लडकी को भी मै नर्सिग की तालीम पाने के लिए राजी नही कर पाया।"

तकनीकी ट्रेनिग पाये हुए लोगो की यहा बडी कमी है। मिसाल के तौर पर डाक्टर हकमी ने मुझे बताया कि तकरीबन सारी ही एक्स-रे मशोने खराब पडी है, क्योकि उन्हे ठीक करनेवाला कोई नही और यह हालत सिर्फ चिकित्सा के क्षेत्र मे ही नही है, अन्यत्र भी यही हाल है। मोटर कार की सर्विस कराने का कम-से-कम खर्च यहा चालीस रुपये आता है। 'टाइम्स ऑफ काबुल' नामक समाचार-पत्र के २५ जुलाई, १९६५ के अक मे इस प्रकार छपा था

"बहुत काफी मशीने गोदामो में और इधर-उधर पडी जग खा रही है, जबकि उनसे बीसियो खेत जोते, बोये और काटे जा सकते थे।

"ज्यादातर मशीने तो कभी इस्तेमाल ही नही की गई और अभीतक जहाज से उतरी बक्सो मे बद पडी है। बाकी भी बहुत कम इस्तेमाल की गई है और अभी तक खासी अच्छी हालत में है। कुछ मे जरूर मरम्मत की जरूरत है, जबकि कुछ काम लायक नही रही।

सब-की-सब जग खा रही है।

सब-की-सब बेकार पडी है।

दो बडे अहाते और कई शैड इनसे भरे पड़े है।

लकडी के दो लम्बे बक्से एक अहाते में छुटपुट सामान के बीच आधी-पानी से नष्ट हो रहे है। वे साल-भर पहले

आये थे।

अक्सर तो चालको द्वारा ठीक से तेल वगैरा न दिये जाने की वजह से छोटी-मोटी मरम्मत से ही ठीक हो जानेवाले कल एकदम ठप हो जाते है।

लेकिन हमेशा चालको का भी कसूर नही होता—उन्हे तेल, ग्रीज वगैरा मिलता ही नही।

स्टोर मैनेजर अक्सर इस बात मे शान समझते है कि उनकी दुकान माल से भरी हुई दिखाई दे, इसलिए वे उसे बेचते ही नही।

इस समस्या का सामना करने के लिए हाकिम लोग पूरी कोशिश कर रहे है। लेकिन वक्त तो लगेगा ही। मित्र-देशो से भी उन्हे हर तरह की मदद की जरूरत है। तकनीकी अमला वहा भेजा जाय और प्रशिक्षण का इतजाम किया जाय, तो उनकी काफी मदद हो सकती है। हिन्दुस्तान के साथ उनका व्यापार-सबध मजबूत हो और बढे तो वे लोग उनकी कद्र करेगे।

दूसरी चीज, जिसकी तरफ अफसरो का ध्यान गया, वह यह कि ऊची तालीम लेनेवालो की तादाद बडी तेजी से बढ रही है। अगर मुल्क की तरक्की भी उसी रफ्तार से न हुई और उन ऊची तालीमवालो को मुनासिब काम-धधो मे खपाया न जा सका, तो आनेवाले दस बरसो मे पढे-लिखे बेकारो की समस्या मुल्क के सामने पैदा हो जायगी, जिसके बडे ही खतरनाक नतीजे हो सकते है।

हमारा तकनीकी मदद का कार्यक्रम वहा बेहद पसन्द

किया गया है। दोनों मुल्को के बीच दोस्ताना ताल्लुकात और आपसी सद्भावना की भी वहा काफी सराहना की जाती है। वे लोग अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भी पूरे तौर पर हमारा साथ देना चाहते है। हर कही मैने इस बात की चर्चा सुनी कि हिन्दुस्तान और अफगानिस्तान के बीच आर्थिक और सांस्कृतिक गठबधन बडे गहरे है और वे लोग चाहते है कि यह रिश्ता और ज्यादा मजबूत हो।

नये जमाने के साथ कदम-से-कदम मिलाकर चलने की दिशा मे अफगानिस्तान के निश्चय और मजबूत इरादे ने कई पेचीदा मसले भी पैदा कर दिये है। अगर साथ-ही-साथ निचले तबके के लोगो का जीवन-स्तर ऊचा करके ऊच-नीच की खाई को बढने से न रोका गया और प्रजातत्र की बुनियाद को मजबूत न किया गया, तो जल्दी ही गभीर परिस्थिति भी पैदा हो सकती है। लगता है अधिकारी इसे अच्छी तरह समझते है। एक बडी तसल्ली की बात वहा यह है कि रोटी की समस्या फिलहाल नही है। नान की कीमत पर सख्त कन्ट्रोल किया हुआ है। इससे नान को छोटी करके या उनकी कीमत बढाकर गरीब आदमी की भूख से नाजायज फायदा उठाने की गुजाइश कम ही है। हां, कई किस्म के कारोबार की वहा गुजाइश है। मसलन ऊन, सूत बुनना, शहद की मक्खियां और रेशम के कीडे पालना, फलो को डिब्बो मे बन्द करके रखना, चीनी और मिट्टी के बर्तन बनाना, चमडे और पत्थर का कारोबार वगैरा। जमीन मे खनिज वहां बेहद मात्रा मे है और वहा बिजली की ताकत पैदा करने की

भी उतनी ही सुविधा है। जितनी वढिया वहा की जलवायु है और जैसे तगडे सीधे-सादे समझदार और आजादी-पसद वहा के लोग है, उसीके साथ-साथ अगर वहा ढग से सामूहिक आधार पर घरेलू उद्योग शुरू किये जाय तो यह देश अपने पडोसी देशो के लिए ईर्ष्यायोग्य वन सकता है।

१०

जुदाई का साया

२९ जुलाई, १९६५

काबुल मे मेरा आखिरी दिन था, इसलिए दोपहर वाद मै जनरल थापर के साथ वहा के दो दर्शनीय स्थान—पगमान और करघा—देखने चला गया। पगमान का बाग तो तरह-तरह के फूल-पत्तो से अद्भुत रगविरगी शोभा लिये हुए था। वहा के घास के मैदान, फव्वारे और हौज सभी कुछ चित्ताकर्पक थे। हजारो मर्द, औरत और वच्चे पिकनिक पर वहा आये हुए थे। मौजी लोग अपने रेडियो भी साथ लाये थे। कई हिन्दू और सिख-परिवारो को भी उनमे देख मुझे सुखद आश्चर्य हुआ। वाद मे मुझे पता चला कि हिन्दू-सिख परिवार वहा हजारो की तादाद मे है। उनके चेहरो से साफ लग रहा था कि उन्हे वहा हर तरह की पूरी आजादी है और वे वहा विल्कुल सुरक्षित है। खानसाहव ने मुझे वताया कि एक वार पाकिस्तान के राजदूत ने एक वहुत वडे अफगान अफसर से यह कहा था कि यहा इतने हिन्दू और सिख क्यो

वसे है, क्यो नही इन्हे खत्म कर दिया जाता ? इसपर अफ-गान अफसर हक्का-वक्का हो गया और जवाव दिया कि ऐसा कैसे हो सकता है, ये लोग भी आखिर अफगानिस्तान के नाग-रिक है और इन्हे भी वैसे ही हक हासिल है, जैसे कि वाकी सवको।

करघा की झील कुदरती नही, एक दरिया को वांधकर वनाई गई है। चलती हुई मोटर-नौकाओ ने झील को जिन्दगी-वख्श रखी थी। यहा एक आधुनिक जलपानगृह भी है, जिसमे ज्यादातर विदेशी और काबुल के ऊचे तवके के लोग ही आते है।

रात का खाना हमने फिर वाहर ही खाया। मेजमान एक मास्टर था। हमे एक छोटे कमरे मे ले जाया गया, जिसमे एक वहुत वडा पलग और सोफे-कुर्सिया अटे पडे थे। खानसाहव ने इशारा करके सारा सामान वाहर निकलवा दिया। लेकिन पलग इतना वडा था कि निकालना मुश्किल था। इसलिए उसे दीवार के साथ खडा करा दिया गया। पर तख्ते ढीले थे, इसलिए वे वाहर निकल गये और फ्रेम खाली रह गया। तकिये भी ठीक से टिकाये नही जा सके, मगर खानसाहव खुश थे कि किसी तरह सादा जिन्दगी की मिसाल तो इन लोगो के आगे कायम कर ही दी। चार प्यारी-प्यारी वच्चिया आकर उनकी गोद मे लेट गई—एक उनकी दाई जाघ पर एक वाई पर और दो सामने। चारो उनकी गर्दन, वाहो और कंधो से लिपट रही थी और खानसाहव उनके फरिश्ता जैसे चेहरो को दुलार-भरी निगाहो से देख रहे थे।

थोडी देर मे पास-पडोस के घरो से भी लोग आने लगे। वे अठाईस से कम नही थे। कमरा छोटा था, इसलिए जब और लोग आ गये तो पहलेवाले उठकर चले गये। खाना फर्श पर ही सजा दिया गया। एक प्लास्टिक का दस्तरखान बिछा हुआ था। खाने के बाद उसे बचे-खुचे टुकडो-समेत लपेटकर उठा दिया गया।

बातचीत प्राय जिन्दगी की छोटी-बडी समस्याओ पर ही होती रही, ऐसा मुझे बाद मे पता चला। हा, बीच-बीच मे पख्तूनिस्तान और पठानो की विशेषताओ पर भी बाते हुई। गनी ने मुझे बताया कि इस बातचीत मे खानसाहब ने तो पूरा अफगान विश्वकोश ही वहा उडेलकर रख दिया था।

वापसी के बाद खानसाहब ने सुझाया कि "चलो, रोज की तरह जरा टहल ले।" उस वक्त रात के ग्यारह बज चुके थे, फिर भी मै फौरन राजी हो गया। घूमते हुए हमने बापू के बारे मे बाते की, आश्रम और कई आश्रमवासियो की भी चर्चा हुई। आसमान मे मृगशिरा और कृत्तिका नक्षत्र चमक रहे थे और रास्ता वैसा ही था जैसा सेवाग्राम का। इस-ल ए स्वभावत मुझे सेवाग्राम-आश्रम की याद हो आई। बातो मे हम ऐसे निमग्न थे कि वक्त का ध्यान ही नही आया। अचानक मैने घडी देखी तो आधी रात होने को थी।

"वक्त कैसे गुजर जाता है।" मैने खानसाहब से कहा, "जिन चीजो की चर्चा हम कर रहे थे, लगता है मानो वे अभी कल की बाते है, न कि चौथाई सदी पहले की।"

"जबसे आपने अपने यहा से जाने की बात कही है, मै बेचैन

हो गया हूं।" खानसाहब ने जवाब में कहा।

"क्यों?"

"मुझे अकेलापन महसूस होने लगा है।"

मैंने उनसे कहा कि एक बार रास्ता खुल गया है, तो हम उन्हें अकेला नहीं छोडेंगे। खुदाई खिदमतगार आन्दोलन के बारे में एक सवाल के जवाब मे खानसाहब ने एक बड़ा दिलचस्प अनुभव सुनाया। 'भारत छोडो'-आन्दोलन के दिनों की को बात थी। वह हरिपुर-जेल मे भेजे गये थे। उनकी दो पसलियां टूटी हुई थीं और चेहरा तथा कपडे खून से लथपथ थे। पुलिस ने बेतरह पीटा था। खुदाई खिदमतगारो से निपटने के लिए कर्नल स्मिथ को खासतौर पर सरहदी सूबे की जेलो का इन्स्पेक्टर जनरल बनाकर भेजा गया था। वह बहुत ही गरममिजाज पक्का साहब था और खुदाई खिदमतगारों से तास्सुब रखता था। एक बार वह मुलाहजे के लिए हरिपुर जेल मे आया। मैंने अपने अहाते मे छोटा-सा मुर्गीखाना बना रखा था। मुर्गिया आकर मेरी गोद मे बैठ जाती। कभी वे मेरी पीठ पर फुदकती तो कभी सिर या कधों पर जा बैठती। पहले तो वह (कर्नल स्मिथ) पीछे से चुपचाप यह सब देखता रहा—फिर सामने आकर कहने लगा, "गुड मार्निंग खान, यह क्या माजरा है?"

"जो कुछ आप देख रहे है वही।" मैने जवाब दिया और कहा कि इसमे अग्रेजो के लिए एक बढिया सबक है। वह अचभे मे पड गया। मैंने उससे सिर्फ इतना कहा कि "जो कुछ भी आप देख रहे है, वह प्रेम की शक्ति की एक छोटी-सी

मिसाल है। पखोवाले ये दोस्त जानते है कि वे खाने के लिए पाले जाते है और इन्हे जिवह किया जायगा, इसलिए ये आम-तौर पर आदमी से डरते है। लेकिन देख लीजिए, जरा-सा भी प्यार मिलने पर ये किस कदर विछ जाते है।"

खानसाहव ने वताया, "मेरी वात उसे भीतर गहरे तक छू गई। कुछ देर तक वह विल्कुल खामोश रहा और वाद मे मानो वह एक दूसरा ही इन्सान हो गया। जेल से छूटने के वाद एक दिन मै किसी मीटिंग के सिलसिले मे गढीशवकदर गया था। वह अपनी वीवी और वच्चो के साथ वहा तफरीह कर रहा था। दूर से ही मुझे देखकर वह मेरे पास आ गया। अपने वच्चे को भी साथ लाया था। उसने आग्रह किया कि मै अपना हाथ वच्चे के सिर पर रखकर उसे दुआ दू। उसने मुझे यह भी बताया कि पाकिस्तान की नौकरी मे वह हर्गिज नही रहेगा। और उसने अपना कौल पूरा भी किया। पाकिस्तान बनते ही वह नौकरी छोडकर घर चला गया।"

इससे मुझे खानसाहव की एक वात याद आ गई। जव वह पहली वार हमसे वारडोली मे मिले थे, उनसे पूछा गया कि उनके सूबे मे अहिसा कवतक टिक सकेगी? उन्होने जवाव दिया था, "मुझे यकीन है कि हम गाधीजी के सच्चे चेले सावित होगे। अहिसा मेरा यकीन वन चुकी है। खुदा का फजल रहा तो मेरे सूवे मे कभी भी हिसा नही फूटेगी।"

उन्होने अपनी वात जारी रखते हुए कहा था, "पठान का अगर आप दिल जीत ले, तो वह आपके साथ जहन्नम मे भी जाने को तैयार हो जायगा, लेकिन उसे मजवूर करके आप

जन्नत मे भी नही ले जा सकते। पठानो की नजर मे प्रेम की इतनी बडी ताकत है।" फिर अपनी स्वाभाविक विनम्रता के साथ उन्होने कहा था, "यह भी हो सकता है कि मै नाकाम रहू और मेरा सूबा हिसा की लहर मे बह जाय। उस सूरत मे उसे मै अपने खिलाफ कुदरत का फैसला समझ लूगा। मगर फिर भी इस बात मे मेरा अहिसा मे यकीन नही डिगेगा, क्योकि और लोगो की बनिस्बत हमारे लोगो को उसकी कही ज्यादा जरूरत है।"

अठारह साल तक लगातार उन्होने बेइन्साफी के खिलाफ अपनी जद्दोजहद जारी रखी। जेल मे रहे या जेल से बाहर, उनके सामने सिर्फ एक ही मकसद रहा। वह था एक करोड पख्तूनो की आजादी हासिल करना, वह भी उन लोगो के खिलाफ नफरत भडकाकर नही, जिन्होने उन्हे हर तरह से तोड डालने मे कोई कसर नही उठा रखी और पख्तूनो को हर मुमकिन तरीके से कुचलने की कोशिश की। आज पचहत्तर साल की उम्र मे एक बार फिर से उन्होने अपना अहिसा का हथियार उठाकर 'करेगे या मरेगे' वाले इरादे के साथ पख्तूनिस्तान की जद्दोजहद को उठाया है।

११

वापसी

३० जुलाई, १९६५

मुझे एरियाना एयरलाइस से २९ जुलाई को भारत लौटना था, लेकिन खानसाहब के साथ अभी मेरी बातचीत पूरी नही हो सकी थी, इसलिए उनके कहने से मैंने २९ जुलाई की यात्रा रद्द कर ३० तारीख को इडियन एयरलाइस के हवाई जहाज से जाने का इन्तजाम कर लिया था। हवाई जहाज सुबह ९ बजे काबुल हवाई अड्डे से रवाना होता था। इससे पहले मुझे शहर मे कुछ काम था, इसलिए यह तय हुआ था कि हमारे दूतावास की कार मुझे साढे छ बजे सबेरे दारुल-अमन से लिवा ले जायगी। लेकिन उस दिन अफगान-दिवस की फौजी रिहर्सल होने की वजह से दूतावास की कार देर से पहुची। फिर भी किसी तरह हम हवाई अड्डे पर वक्त पर पहुच ही गये। मगर वहा आध घण्टा इन्तजार करने के बाद पता चला कि मौसम की गडबडी के कारण इडियन एयरलाइस का हवाई जहाज आज जा नही सकेगा। वक्त काफी हो चुका था, इसलिए श्री के०एस०जौहरी ने अपने ही साथ दोपहर का भोजन करने का आग्रह किया। खाने से निपट-कर करीब ढाई बजे मै दारुलअमन पहुच सका। उस समय खानसाहब आराम कर रहे थे। रात को मै जल्दी ही सो गया। खानसाहब देर तक जागते रहे और मेरे साथ भेजने के

लिए खत लिखते रहे।

३१ जुलाई, १९६५

सुबह जब मै खानसाहब से बिदा लेने गया, तो उन्होने कहा कि मैने आपको भेट देने के लिए एक चीज रखी थी, जिसे कल देना भूल गया था। यह उपहार था हाथ से काते हुए सूत का एक तौलिया और हरात मे उन्हे भेटस्वरूप मिला रेशम का रगीन टुकडा, जिसपर कढाई की हुई थी। विदा के वक्त हम दोनो के ही दिल भर आये थे।

उसी हवाई जहाज में चार अफगान छात्र भी सफर कर रहे थे। हमारी तकनीकी मदद के प्रोग्राम के मातहत वे हिन्दुस्तान जा रहे थे। एक को इजीनियरी की पढाई के लिए रुडकी जाना था, एक को पूना। हवाई जहाज वक्त पर रवाना हुआ। जहाज चलानेवाला पाइलट पश्चिमी पाकिस्तान के मेरे ही गाव का था और था भी हमारी बिरादरी का ही। उसने मुझे अपने ही पास बिठा लिया। रास्तेभर वह मुझे अपने हवाई जहाज की बाते समझाता गया। मौसम साफ था। तख्ते सुलेमान का साफ-साफ दृश्य देखने को मिला। लाहौर पर से गुजरे तो मुझे अपने आठ साल के स्कूल और कालेज की जिन्दगी याद हो आई। दाई ओर फासले पर फीरोजपुर छावनी और वहा का हवाई अड्डा दिखाई पड रहा था।

दोपहर एक बजे हम पालम हवाई अड्डे पर उतरे। उस वक्त तक खासी बारिश शुरू हो गई थी। हवाई जहाज से उतरकर कस्टम वगैरा से गुजरते वक्त छत से पानी के रेले

बह रहे थे।

दो बजनेवाले थे, जब मै घर पहुचा। दस दिन बाद लौटा था। हमारी कुतिया निक्की कधे-कधे तक उछल-उछलकर मुझसे लिपटने लगी। कही खुशी की मस्ती से उसकी कोई नस न फट जाय, इस खयाल से मैने उसे उठाकर गोद मे ले लिया।

१२

हमारी जिम्मेदारी

पिछले पन्नो मे जिन सम्पर्को का जिक्र किया गया है, उनके बाद घटनाओ ने जो रूप लिया वह भुलाया नही जा सकता। जलावतन हुए खानसाहब काबुल मे बैठे-बैठे ही हमे वक्त के तूफान मे थपेडे खाते देखते रहे। लहरे हमे उठाकर एक बार आकाश तक ले गई, फिर छिछले पानी की कीचड पर लाकर पटक दिया। खानसाहब चुपचाप हमारे इस ज्वार-भाटे को देखते रहे।

महात्मा गाधी के बाद जो एकमात्र गाधी जिन्दा बचे थे उनके दर्शनो के लिए हमारे प्यारे प्रधानमत्री लालबहादुर शास्त्री ताशकद से लौटते समय काबुल जानेवाले थे, मगर कुदरत ने उन्हे हमसे छीन लिया। ताशकद-समझौते की स्याही भी नही सूख पाई थी कि हमारे प्रिय नेता चल बसे। बादशाह खान ने मुझे खत लिखा, जिसमे उन्होने अपना और

अपने साथियो का मन उंडेल दिया था, "हमे जो सदमा लगा, उसका मै बयान नही कर सकता। बहुत-सी पख्तून औरते मेरे पास रोते हुए आई और कहने लगी, "हमारे दुख-दर्द का साथी हमसे जुदा हो गया।"

मगर दुख और सताप उनके मन को कमजोर नही कर सका, न उनके इरादों को ही डगमगा पाया। आखो मे एक भी आसू लाये बिना अपने काम मे जुटे रहे और दारुल-अमान की तमाम सुख-सुविधाओ को त्यागकर उन्होने अपने आन्दोलन का सदर मुकाम जलालाबाद मे बदल लिया। वहा से उन्होने मुझे एक खत मे लिखा—"खुदाई खिदमतगार आन्दोलन ने कबाइलयो के दिलो मे किस कदर घर कर लिया है, यह जानकर आपको खुशी होगी। वे अपने अन्दर नई जिन्दगी महसूस करने लगे है।" अपने दो पुराने साथियो, के० बी० नारग और रामसरन नगीना को उन्होने लिखा कि उनकी यह इच्छा है कि यह आन्दोलन हिन्दुस्तान में भी फैले।

उनका खयाल है कि पख्तूनिस्तान लफ्ज को कुछ ऐसी पार्टिया अपना उल्लू सीधा करने के लिए इस्तेमाल कर रही है, जिनका इस आन्दोलन के उद्देश्य से कोई तालमेल नही। खानसाहब का यकीन है कि साधन ही साध्य को अच्छा-बुरा रखते है, इसलिए उनके सपनो का पख्तूनिस्तान तो तभी बन सकता है जबकि खुदाई खिदमतगार आन्दोलन के उसूलों को ही अमल में लाया जायगा। इसलिए उन्होने अपनी सारी शक्ति सिर्फ इसी उद्देश्य के लिए लगा देने का फैसला किया है और वह हिन्दुस्तान में रहनेवाले अपने साथियो से भी

ऐसा ही चाहते है।

वह जिस आदर्श का प्रचार पख्तूनो मे कर रहे है, उसके बारे मे मुझे एक पत्र मे उन्होने लिखा है—सक्षेप मे वह उसी अहिसा का सदेशा है, जिसे सातवी सदी के मक्का के मुसलमानो ने अपने व्यवहार मे मूर्तिमान किया था—रूढिवादी पक्ष से सताये जाने पर, शाति अथवा 'इस्लाम' की जो राह उन्होने पकडी थी उसपर से वह पीछे न हटे। आगे ही कदम वढाते गए।

हजरत मुहम्मद जव मक्का छोडकर मदीना चले गये थे, तब भी उनके विरोधियो ने उन्हे चैन से नही रहने दिया। उन्हे तबाह करने के लिए एक वडी फौज भेजी गई। उन्होने बडी कोशिश की कि किसी तरह झगडा-फिसाद टल जाय, मगर सब व्यर्थ रहा। आखिर जव उनपर हमला कर ही दिया गया, तो उन्होने मजवूरन हथियार उठाये—वह भी अपनी हिफाजत के लिए, यानी आत्मरक्षा मे। इस्लाम मे ऐसे आदमी को बडी इज्जत की निगाह से देखा जाता है, जो नेक जिन्दगी बसर करता हो, खुदा के रास्ते चलता हो और हमले का जवाब हमले से, या बुराई का वदला बुराई से, न देता हो। कुरान मे इन्साफ और नेकी दोनो की तारीफ की गई है, लेकिन नेकी को इसाफ से ऊचा रुतवा दिया है। कोई सिर्फ हमले का जवाव हमले से दे और उससे ज्यादा कुछ न करे, तो यह इन्साफ कहा जायगा। लेकिन जो आदमी मुह पर थप्पड खाकर मारनेवाले को माफ कर देता है, उसे उदार और नेक कहा जायगा। ऐसे शख्स को सवसे ऊचा दर्जा दिया गया है।

कुरान मे कहा गया है कि ऐसी कोई एक भी कौम इस दुनिया मे नही, जिसे खुदा ने रसूल न भेजा हो। आगे यह भी बताया गया है कि ऐसे सब रसूल खुदा के ही दोस्त और पैगम्बर है और खुदा उनमे कोई फर्क नही मानता। कुरान के पहले ही सफे पर यह कहा गया है कि इस्लाम से पहले भी धर्मग्रथ खुदा ने दुनिया के लोगो के लिए भेजे उनमे भी उसी तरह एतकाद लाना फर्ज है। हिन्दुस्तान या दूसरे मुल्को के पैगबरो का अगर कुरान मे जिक्र नही है, तो सिर्फ इसलिए कि जब कुरान लिखा गया था तब दुनिया मे इतनी तरक्की नही हुई थी। न तो रेले थी, न मोटर और न हवाई जहाज। हमारे पैगवर को तो खास तौर पर अरब लोगो को पैगाम देने के लिए भेजा गया था और वह हिन्दुस्तान या दूसरे मुल्को से वाकिफ नही थे। जिन पैगम्बरो के बारे मे जानते थे, या जिनके बारे मे उन्होने सुना हुआ था, सिर्फ उन्हीका जिक्र कुरान मे आ सका। वे तो व्यापारी तबके के थे। अपने व्यापार के सिलसिले मे ही उन्हे इराक, सीरिया और यरुशलम जाना पडता था, इसलिए इन्ही मुल्को तक उनके ताल्लुकात महदूद थे। इन इलाको में रहनेवाले लोग क्योकि ज्यादातर ईसाई और यहूदी थे, और उन्हीका ताल्लुक अरवो से पडा करता था, इसलिए सिर्फ ईसाई और यहूदी पैगम्बरो का ही जिक्र कुरान मे आ सका है।

हर मजहब समाज-सुधार का एक वड़ा आन्दोलन है। जब-जब कही के लोग इन्सानियत का रास्ता छोडकर हैवानियत की राह पकड़ते हैं और दूसरो के हक हडपने लगते है,

तब-तब उन्हे बुराई से हटाकर नेकी की राह पर चलाने की गर्ज से खुदा उन्हीमे अपना कोई पैगबर भेज देता है। उन लोगो मे मुहब्बत, भाई-चारे और कौमियत का जज्बा उभारता है। मजहब और नफरत तो एक-दूसरे के विरुद्ध बिल्कुल उलटी चीजे है। मगर आजकल मजहब को ज्यादातर नफरत फैलाने के ही काम मे लाया जाता है। इसके शोले दुनिया को हडप लेगे। इस्लाम के पैगम्बर का तो कहना है कि जो शख्स खुदा के बदो के साथ नेक सलूक करता है वही इन्सानो मे ऊचा है। ईसाई पैगबर (ईसामसीह) ने कहा है कि अगर कोई तुम्हारे सीधे गाल पर तमाचा मारे, तो तुम बाया गाल भी उसके आगे कर दो। हिन्दू मजहब मे तो न सिर्फ मानवजाति को कष्ट पहुचाने का निषेध है, बल्कि चीटियो और कीडे-मकोडो तक को कष्ट देना भी पाप माना गया है। लेकिन हो यह रहा है कि हिन्दू, मुसलमान और ईसाई मजहबो की आड मे नफरत पैदा करके इन्सान और इन्सान के बीच मे दीवारे खडी की जा रही है। मै पूछता हू, "क्या ऐसा मजहब खुदा का भेजा हुआ हो सकता है?" मेरा जवाब है, "नही।" यह तो सच्चे मजहब का मजाक है और यह मजाक उन लोगो ने कर रखा है, जो खुदगर्ज है और जो खुदा के बन्दो की खिदमत नही करते, सिर्फ अपने जाती फायदे की सोचते है।

१९३४ मे अग्रेजो ने मुझे साबरमती-जेल मे डाल रखा था, उन दिनो मैने मौलाना शिबली नोमानी की एक किताब से यह जाना कि सभी धर्मो मे हिन्दू धर्म इस्लाम के सबसे निकट

है, क्योंकि ईसाई धर्म के विपरीत हिन्दू धर्म मे एक ही भगवान में विश्वास रखने की बात है, जिसके नाम चाहे कितने ही क्यो न हो। हिन्दू धर्म में एक से अधिक भगवानो मे विश्वासवाली बात तो बाद में अग्रेज शासको ने हिन्दू-मुसलमानो के बीच फूट डालने के इरादे से फैलाई, जिससे हमे लडाकर वे अपनी हुकूमत जमाये रख सके।

मेरे लौटने के कुछ ही दिन बाद श्री कमलनयन बजाज और उनकी बहन मदालसा (श्रीमन्नारायण की धर्मपत्नी) काबुल मे खानसाहब से मिलने गये थे। १९३४ मे जब खानसाहब वर्धा गये थे तब इनके पिता के मेहमान बनकर रहे थे। उन दिनो इन लोगो को खानसाहब की मेहमानी और देखरेख करने का मौका मिला था और खानसाहब ने उन्हे पिता का-सा स्नेह दिया था। तभी से इनके दिलो में खानसाहब के लिए इज्जत है। खानसाहब ने भी बातचीत मे अपना दिल इनके सामने उडेलकर रख दिया :

"यह हमारी बदकिस्मती है कि महात्माजी हमसे इतनी जल्दी छीन लिये गए। आजकल न तो हिन्दुस्तान मे और न और ही कही जनता सुखी और सतुष्ट है। आजादी हासिल करने के लिए कुर्बानिया इन्होने ही दी, मगर आज वे अपने को अच्छी हालत मे नही पाते। शासक लोग यह भूल गये मालूम पडते है कि आखिर इसी आम जनता के हाथो [illegible] ताकत है। मुल्क को मजबूत बनाना है, तो शासको को जनता के सेवक बनकर रहना होगा। मै अगर अपने करीब किसी भूखे को देखता हूं, तो मेरा दिल रो उठता है और मै खुदा से

वह भगड बैठता हू कि मुझे कोई ऐसा रास्ता सुझा, जिससे मै इनकी भूख दूर कर सकू ।

"पठान लोग बेहद सीधे-सादे और मेहनती होते है । एक बार अगर आप उनका विश्वास प्राप्त करले और उन्हे यह दिखा दे कि वे किस तरह से अपनी हालत सुधार सकते है, तो वे आपके इशारे पर चलने लग जायगे । गाधीजी का खादी और ग्रामोद्योग का पैगाम ही ऐसी चीज है जो, हमारे मुसीबत-जदा लोगो को राहत पहुचा सकती है ।"

बौद्ध काल की अमूल्य स्मृति के रूप मे काबुल की घाटी मे एक चट्टान पर तराशी हुई बुद्ध की मूर्ति अभी तक मौजूद है। दूर पहाड की चोटी पर से यह मूर्ति नीचे बामियान की तरफ ताक रही है। इसकी तरफ इशारा करके एक दिन बादशाह खान ने मदालसा से कहा, "देखो, इन इलाको मे कभी बुद्धधर्म की जडे कितनी गहरी रही है। इन यादगारो को बनानेवालो के दिलो मे किस कदर भक्ति और विश्वास रहा होगा। और ये गवाही किस चीज की देते है ? ये उस ऐतिहासिक सत्य के गवाह है कि हम और आप दोनो आर्यो की ही सतान है । हम भी कभी बौद्ध थे । उस धर्म मे हमे इस कदर विश्वास था कि हमने उसे चीन और सुदूरपूर्व के देशो तक फैलाया । हड्डा, बामियान, उत्तमानजई और तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय हमारे यहा मौजूद थे, जहा से हमे बुद्ध का सदेश मिला करता था । इसी कारण हम कभी भी अपनेको हिन्दुस्तान से अलग नही समझते । अगर हम आजाद होते, तो मानवता की भलाई की खातिर हम हिन्दुस्तान और दूसरे

पडोसी मुल्को के साथ मिलकर एक-दूसरे के सहयोग से काम करते ।"

वटवारे के वक्त गाधीजी के वादे की याद दिलाते हुए एक अन्य अवसर पर खानसाहव ने कहा :

"जव हम पहले-पहल काग्रेस में शामिल हुए थे, तव हमारे कई साथियो ने हमे राय दी कि काग्रेस के साथ साफ-साफ वात करके सियासी सौदा कर लेना ठीक रहेगा । लेकिन हमने कहा 'नही, हम विना किसी शर्त के काग्रेस मे शामिल होगे और फिर कभी उससे अलग नही होगे '।'

कमलनयन वजाज—"मुझे यह सव याद है ।'

वादशाह खान—"क़ाग्रेसी लीडरो ने हमें इस वात का यकीन दिलाया था कि मुल्क का वटवारा किसी भी सूरत मे कवूल नही किया जायगा । लेकिन उन्होने कवूल कर लिया । उन्होंने हमे पहले से आगाह कर दिया होता तो हम अपना कोई इन्तजाम कर लेते । मगर उन्होंने हमे एकदम वीच भवर मे छोड दिया । मै उन दिनो दिल्ली में था मगर किसीने मुझे इस वात की खवर तक न दी ।

"मेरे कुछ साथियो ने सलाह दी कि अव जव कि काग्रेस ने वटवारा मान ही लिया है, तो हमें जिन्ना के साथ मिल जाना चाहिए । हमने फिर भी कहा, 'नही' । और अव नतीजा देख लीजिए । काग्रेसी लीडरो ने सोचा होगा कि वंटवारा मान लेने से अमन कायम हो सकेगा और सारी मुसीवते दूर हो जायगी । मगर नफरत के वीज वोकर आप प्रेम की फसल कैसे काट सकते है ? जिस पाकिस्तान का आधार ही नफरत

पर है, उसे नफरत से ही बरकरार रखा जा सकता है।"

कमलनयन—"मगर आपकी अहिसा मे तो पाकिस्तान भी आ जाता है ?"

बादशाह खान—'हा, पाकिस्तान के लोगो से मेरा कोई झगडा नही। उनके लिए तो बल्कि मेरे दिल मे दर्द है। हर जगह के गरीब मजलूमो की तरह वे भी इसी खुदा के बदे है। मै खुदा से दुआ करता हू कि उनमे हौसला और यकीन पैदा करे। मेरी लडाई तो उन हाकिमो और हुकूमत से है जो गलत राह पर चल रहे हैं। मै इन हुकुमरानो के लिए भी खुदा से दुआ मागता हू कि इनमे मुहव्वत और खिदमत का जज्वा पैदा करे, ताकि ये मुहब्बत और खिदमत की राह पर चलनेवालो के साथ मिलकर काम कर सके।"

क्या आजाद पख्तूनिस्तान आर्थिक रूप मे टिक सकेगा ? यह पूछे जाने पर उन्होने कहा कि जरूर टिक सकेगा, बशर्ते कि लोग अपने हाथो से जमीन जोते और ग्रामोद्योगो को अपनाये। ऐसा करके वे अपनी जिन्दगी की जरूरते पूरी कर सकते है और पसीने की माई से शारीरिक और आध्यात्मिक सुख का जीवन बिता सकते है। हम बहुत हद तक तो गावो मे दस्तकारिया कायम करने मे कामयाब थे। गरीब लोगो ने इस चीज के फायदे महसूस करने शुरू कर दिये थे। ऊचे तबके के लोगो ने भी हमारे काम मे दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी थी। लेकिन पाकिस्तानी हुकुमरानो ने सब खत्म कर डाला। 'यह सोचकर मुझे बेहद तकलीफ होती है कि हमारे लोगो को सिर्फ इस वजह से तबाह कर डाला गया कि वे

वेजवान जनता की गरीबी मिटाना चाहते थे।"

हिन्दुस्तान आने के बारे मे उनसे पूछा गया, तो वह बोले, "मै आऊगा, लेकिन अपनी शर्त पर।"

उनसे फिर पूछा गया कि वह हुकूमत की खातिर न सही, सिर्फ हिन्दुस्तान के लोगो की खातिर नही आ सकेगे ? इसपर उन्होने कहा, "हिन्दुस्तान एक जमहूरिया है, जहां लोग खुद अपने लिए हुकूमत का इतजाम करते है। फिर आप हुकूमत और लोगो मे फर्क कैसे कर सकते है ?"

एक वक्त था जब वह इस बात के लिए राजी हो सकते थे कि पख्तूनिस्तान पाकिस्तान के अन्दर ही खुदमुख्त्यार इकाई बनकर रहे। मगर अब पाकिस्तान मे उनका विश्वास टूट चुका है। अब तो वह ऐसा पख्तूनिस्तान चाहते है, जो एकदम आजाद हो, उसका अपना अलग संविधान हो, वहां के लोग मेहनत-मशक्कत करके आपस में समानता के आधार पर रहे और पड़ौसी मुल्को के साथ शान्ति बनाये रखे। अब यह पाकिस्तान पर निर्भर है कि वह खानसाहब के साथ मुहब्बत से पेश आकर उनके सदेह को दूर करे।

वह पाकिस्तान के दुश्मन नही है। वह पूरी ईमानदारी के साथ यह मानते है कि अगर कभी पख्तूनिस्तान बना, तो उससे सिर्फ पख्तूनो की ही बेहबूदी नही होगी, बल्कि उससे पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की भी बहुत सेवा होगी।

अफगानस्तिान की यह बड़ी खुशकिस्मती है कि उसके यहां बादशा न जैसा महान व्यक्ति आज मौजूद है। अफगान हुकूमत आज बड़े जोशखरोश के साथ एक ही झटके मे एक

नया ससार वना लेने की कोशिश मे है, लेकिन इसमे वेशुमार खतरे है। बहुत जल्दी आधुनिक वनने की प्रक्रिया मे ऊचे और नीचे तवको के बीच जो खाई वढ जाती है, उसे अगर आम लोगो का जीवन-स्तर उठाकर सतुलित न किया गया, तो यह जल्दी तरक्की का सपना समाज मे असतोष की शक्ल भी अख्तियार कर सकता है। कबायली पठानो के बीच, तमाम वादो से दूर रहते हुए, बादशाह खान द्वारा खुदाई-खिदमतगारो का जो सगठन बनाया जा रहा है, वह एकदम गैर-सियासी चीज है, मगर उसे अपना कर कोई भी मुल्क सियासी मजबूती भी हासिल कर सकता है। इस आन्दोलन के द्वारा तुरन्त ही बहुत कम लागत पर समाज को एक ऐसा ठोस आधार दिया जा सकता है जिसपर, अफ-गानिस्तान की तरक्की-पसन्द जमहूरियत की जडे सुदृढ रूप मे कायम की जा सकती है।

बादशाह खान मूलत मानवतावादी है। उनकी मानवता किसी तरह की भौगोलिक या राजनैतिक सीमाए नही मानती। अपने एक हाल के खत मे उन्होने मुझे लिखा है—"आप जानते है कि शान-शौकत और दौलत मे मुझे कोई दिलचस्पी नही रही। एक चीज के लिए मेरी आत्मा जरूर तडपती है। वह यह कि अगर खुदा हमे मौजूदा मुसीबतो से छुटकारा दिलाये तो, मै विनोवा भावे की तरह अपनी पूरी जिन्दगी पीडित मानवता की सेवा मे लगा दू।"

कौन जानता है कि अगर मौका मिले, तो यही खुदा का बदा, जिसने हृदय-परिवर्तन का अपूर्व चमत्कार करके दिखाया

है, कल को एक ओर हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच तथा दूसरी ओर पाकिस्तान और अफगानिस्तान के बीच दोनो को जोडनेवाली कडी साबित न हो ? और हो सकता है कि काश्मीर जैसी उलझी हुई समस्या का भी कोई हल निकल आये, जो उन दो देशो के बीच तनाव का कारण बनी हुई है, जबकि उन्हे दो भाइयो की तरह मिलकर मानव-सेवा के आदर्श की ओर बढना चाहिए।

पूरी मानवजाति आज विनाश के कगार पर खडी हुई बुरी तरह काप रही है। ऐसी स्थिति मे दुनिया के किसी भी हिस्से मे सच्चाई और इसाफ के उसूलो पर सच्ची शान्ति कायम की जा सके, तो निश्चय ही उसका असर बाकी दुनिया पर भी पडे बिना नही रहेगा।

बादशाह खान के प्रति हमारा बहुत बडा नैतिक दायित्व है। हम सभी के दामन पर छीटे पडे है। विनोवा भावे ने बादशाह खान को लिखे एक पत्र में इसे स्वीकार भी किया है और सुदर ढग से उन्होने अत मे सत्य और न्याय की विजय मे अपनी श्रद्धा भी प्रकट की है। विनोबाजी के पत्र के कुछ अश निम्न प्रकार है.

"मै उस तकलीफ को लफ्जो में बयान नही कर सकता जो मुझे यह मानते हुए हो रही है कि हमारी आजादी की लडाई मे आपके साथ बहुत बडी बेइन्साफी हुई है और हमारे दोस्तो ने आपका हाथ छोड दिया।

"अपनी पदयात्रा के दौरान मुझे हमेशा आपका ध्यान बना रहता है।

"मै जानता हूं, आप सचमुच खुदा के वदे है। अहिसा और कष्ट-सहन मे हमेशा से ही आपका अटूट विश्वास रहा है। हो सकता कि आपको इस तरह की अग्नि-परीक्षा मे डालकर ईश्वर आपके द्वारा दुनिया के मसले हल कराना चाहता हो। "वाशरिस्साविरीन" (धन्य है वे जो सब्र करते है।)

यह तो ठीक—मगर हमे भी तो अपना प्रायश्चित करना है न—उसका क्या ? न्याय की लडाई मे आखिरी दम तक पूरी वफादारी से साथ देनेवाले का किसी सियासी फायदे की खातिर साथ छोडकर कोई भी मुल्क कभी ऊचा नही उठ सका है। बचाव के बहाने पेश करना गोया सबूत देना हम अपने अपराध को मानो खुद सावित करते है ?

भाग पाच

काल-चक्र की घट-माल

१

ताशकंद के बाद

काबुल से लौटने पर मैंने बादशाह खान की अग्नि-परीक्षा की सारी कहानी दो अग्रेजी समाचार-पत्रो में दस लेखो की एक लेख-माला के रूप में लिखी थी। तीन-चार सप्ताह के भीतर ही उसका अनुवाद हमारी आठ भाषाओं में, अर्थात् हिन्दी, उर्दू, मराठी, कन्नड, तेलुगु, मलयालम, गुजराती और बगला में छप गया। अभी तक इस इतिहास का किसी को पता नही था। अब पट खुल गया तो चारो ओर से आवाज उठने लगी कि बादशाह खान और उनके खुदाई खिदमतगारो के साथ जो इतना भारी अन्याय हुआ था, उसका प्रायश्चित्त हमे करना चाहिए।

अपने कर्त्तव्य-पालन के लिए हमे क्या कदम उठाना चाहिए और हमारी सरकार क्या करेगी, यह सब पूछने लगे। हमारी पार्लमेंट मे इस बारे मे कई सवाल किये गए। किन्तु ताशकन्द-समझौते के बाद हम एक ऐसे दलदल में फस गये थे कि उसमे से निकलना कठिन हो गया था। गीत तो हम सुलह और शान्ति का गाते थे, मगर उसके पीछे छिपी हुई थी हमारी बेबसी और लाचारी, और यह अनिवार्य था, क्योकि न तो हमारे पास युद्ध की सामग्री थी और न

देश के पास जीवन-निर्वाह के साधन थे। कूटनीति बहुत-कुछ कर सकती है, मगर वह बल की जगह नही ले सकती। कूटनीति से हम उतना ही काम निकाल सकते हैं जितना कि हममे बल है। जितना गुड डालेगे उतना ही मीठा होगा, उससे अधिक नही। दूसरे शब्दो में कूटनीति वीर्यवान का शस्त्र है, नपुसक का नहीं।

सितम्बर १९६७ मे सेवाग्राम-आश्रम की एक बहन अम्तुस्सलाम, जो बचपन से ही बापूजी के पास पली थी और बापूजी के काम और हिन्दू-मुस्लिम तथा कौमी एकता के लिए ही जीती है, बादशाह खान से मिलने अफगानिस्तान गई। उनके साथ कस्तूरबा केन्द्र राजपुरा के सचालक, श्री सुशीलकुमार भी थे। जाने का हेतु यह था कि खुदाई खिदमतगार की जो तहरीक कबाइली इलाके मे बादशाह खान फिर से चलाना चाहते है, उसकी पुष्टि और पूर्ति के लिए वहा रचनात्मक काम शुरू किया जाय। जब वे लोग वहां पहुचे तो बादशाह खान दौरे पर निकल चुके थे। उनका पीछा करके कन्दूस पर खान साहब को उन्होने जा पकडा। देखा कि वह पैदल जा रहे है। एक पाव मे जूता है, दूसरा नगा है। नगे पाव के तलवे के नीचे लकडी की एक छोटी-सी तख्ती बधी थी, क्योंकि उसपर घाव हो गया था। चप्पल नही पहनी जाती थी। यह देखकर इन दोनो को बड़ा अचम्भा हुआ। इन्होने पूछा, "यह आप क्या कर रहे है ? पाव की हालत तो देखिये।" जवाब मिला, "पाव की हालत पाव जाने, मुझे उससे क्या ? पाव की तकलीफ थी, तो

उसका इलाज मैंने कर दिया। अब वह जाने और उसका खुदा !"

बाद मे मैने एक बार इस बारे मे उनसे पूछा तो वह बोले, "अस्पताल मे बिजली की किरणो की चिकित्सा से पाव पर घाव हो गया था, सूजन भी आ गई थी, अच्छा होता ही नही था। डाक्टर लोग आराम करने को कहते थे। मे बिछौने में पडा-पडा ऊब गया था। सोचा कि खुदा की खलकत की खिदमत न कर सकू, तो इस तरह जीने से क्या फायदा ! चुनाचे बिस्तर छोडकर निकल पडा। सूजन भी उतर गई और घाव भी अच्छा हो गया। अब तो तुम देखते हो कि मै भला-चगा हू।" इसपर मुझे लगा कि हम लोग तो केवल तत्वज्ञान की बातें करते है, किन्तु अनासक्ति योग का सजीव उदाहरण तो यह ही हमारे आगे रख रहे है। सचमुच बादशाह खान सच्चे अर्थो में कर्मयोगी है।

हिन्द-पाक-युद्ध के बीच हमारी सरकार ने पख्तूनो और बादशाह खान के साथ काफी सहानुभूति दिखाई थी। ताश-कन्द-समझौते के बाद भी अलाप तो वही जारी रहा, पर उसमे न तो पहले- सा सुर था और न पहले-जैसी ताल थी, बादशाह खान के साथ हमारी सहानुभूति को हम कोई अमली जामा न पहना सके।

२ अप्रैल १९६७ को गाधी-जन्म-शताब्दी के सम्बन्ध मे आकाशवाणी की ओर से एक प्रतिनिधि-मडल बापूजी के बारे मे उनके सस्मरण रिकार्ड करने बादशाह खान के पास जलालाबाद गया था। उनके मागने पर बादशाह खान

ने उन्हे हिन्दुस्तान की जनता के नाम एक सदेशा भेजा था, मगर न तो यह सदेशा हमारे अखबारो मे छपा और न रेडियो पर ही वह पूरा-पूरा प्रसारित हुआ। खान साहब और उनके पठान अनुयायियो का हमारे प्रति असन्तोष और निराशा दिन-प्रतिदिन बढती गई, मगर इसके साथ-ही-साथ हिन्दुस्तान की आम जनता की यह भावना भी प्रबल होती गई कि हिन्दुस्तान को बादशाह खान के प्रति अपना धर्म पालन करना चाहिए ।

ऐसी भावना भी पैदा हुई कि और कुछ नही तो कम-से-कम गाधी-जन्म-शताब्दी वर्ष मे सरहदी गाधी की सालगिरह पूरी शान से देश-भर मे हमे मनानी चाहिए । बादशाह खान से पत्र-व्यवहार किया गया ।

उसके बाद मैने एक मसविदा तैयार किया । उसके आधार पर २३ अप्रैल १९६८ को सब राजनैतिक दलो मे से चुने हुए लोगो की एक छोटी-सी सभा बुलाई गई । विचार-विनिमय के बाद एक राष्ट्रीय समिति का गठन किया गया, जिसमे सब दलो के सदस्य थे । इस समिति का नाम 'गफ्फार खा सरहदी गाधी सालगिरह समिति' रक्खा गया ।

भिन्न-भिन्न राज्यो मे प्रादेशिक सालगिरह समितियो का निर्माण किया । कई जगह सवाल उठाया गया कि क्या भरोसा है कि बादशाह खान हिन्दुस्तान में आयेगे भी कि नही । उन्होने कई बार कहा था, "मै हिन्दुस्तान तो आना चाहता हूं, मगर सैर करने या तमाशा देखने के लिए नही । मै आऊगा तब, जब हिन्दुस्तान पख्तूनिस्तान-प्राप्ति के हमारे

काम मे हमारी मदद करेगा।" हमारी सरकार की कठिनाइयो को तो हम अच्छी तरह जानते थे, किन्तु हमें यह विश्वास था कि हमारे देश मे प्रजातन्त्रवाद है। अगर हमारा लोकमत जाग्रत हो जाय, तो हमारी सरकार को उसके साथ चलना ही होगा। सवाल उठा कि लोकमत को जगाने के लिए क्या हम बादशाह खान को यहा ला सकेगे ? इस सवाल का निश्चित जवाब देना कठिन था, क्योकि हम यह भी जानते थे कि बादशाह खान हमारे देश में ऐसे किसी काम के लिए आना स्वीकार नही करेगे, जिससे हमारी सरकार को जरा भी परेशानी हो।

इन सब समस्याओ पर हम विचार कर ही रहे थे कि नेहरू-संग्रहालय के मौखिक इतिहास विभाग की तरफ से बादशाह खान के सस्मरण रिकार्ड करने के लिए एक शिष्टमण्डल को काबुल भेजने की फिर से बात चली। यह बात काफी अरसे से चल रही थी और अनेक बार इसमे शामिल होने के लिए मुझसे आग्रह किया गया था।

४ जुलाई, १९६८ को काबुल जाने का फैसला हुआ। मेरे साथ नेहरू संग्रहालय के श्री हरिदेव शर्मा थे, या यह कहिए कि मै उनके साथ था, क्योकि मुख्य काम तो यह उन्ही का था। हमे लगा कि बादशाह खान से मिलकर उनकी हिन्दुस्तान आने की बात पक्की कर आने का यह एक सुन्दर अवसर हमारे हाथ आया है।

२

बादशाह खान के दो स्वप्न

पिछले तीन वर्ष के भीतर अफगानिस्तान मे काफी तब्दीलिया आ चुकी थी। सन १९६७ के शुरू मे ही पुराने प्रधानमन्त्री यूसफसाहब की जगह मैवदवाल साहव नये मत्री बने थे। हमारे पत्रो मे समाचार आया था कि हमारे प्रधानमन्त्री लालवहादुर शास्त्री अपने पीछे कुछ भी जायदाद नही छोड गये थे और हमारी सरकार को उनके परिवार के निर्वाह के लिए खास व्यवस्था करनी पडी थी, तो उन्होने भी अपनी सारी जायदाद कौम को दान मे दे दी। इसलिए उनसे हमने वडी आशा रखी थी कि वह पख्तूनो के मामले मे बादशाह खान की सब आशाए पूरी करेगे, किन्तु हमारी वह आशा सफल न हुई।

अफगानिस्तान की राजनैतिक परिस्थिति कुछ विचित्र है। वहा की कौम दो भागो मे बटी हुई है। एक तो पश्तो बोलनेवाले पख्तून लोग, जोकि उस देश के असल वासी है। कबाइलियो को मिलाकर उनकी सख्या एक करोड से कुछ अधिक है। दूसरा भाग है फारसी बोलने वाले लोगो का। माना जाता है कि वे फारस से आकर वहा बसे है। उनकी सख्या पख्तूनो से कम है, किन्तु अल्पसख्या मे होते हुए भी राज्यसत्ता अधिकाशत उनके हाथ मे है और उन्हे डर रहता है कि अगर पख्तून लोगो मे जाग्रति आ

बात का बडा दर्द है कि अग्रेज साम्राज्यवादियो ने इनकी कौम को केवल दलित और पिछडा हुआ ही नही रखा है, किन्तु उसे दुनिया के सामने बुरी तरह बदनाम भी किया है। कबाइली इलाके मे सामान्य आवागमन पर प्रतिबध लगाकर उनकी वस्तु-स्थिति से ससार को अनभिज्ञ रखा और पठानो का एक डरावना काल्पनिक चित्र खडा कर दिया। वे वीर है, लेकिन खूनी और क्रूर है, स्वाधीनता के प्रेमी है, लेकिन स्वच्छन्द है, न वे नियत्रण को मानते है और न सभ्यता की किसी मर्यादा को। आतिथ्य के इतने शौकीन है कि अपने इस शौक को पूरा करने के लिए चोरी, डकैती, लूटमार और रिश्वतखोरी से भी नही हिचकते। इससे भी अधिक अफसोस बादशाह खान को इस चीज का है कि हमारे दिलो मे भी अग्रेजो ने यह हौवा घुसेड दिया है।

अग्रेज तो आखिर गये, किन्तु पख्तूनो का भाग्य तो भी नही जागा। अग्रेजो के बाद पाकिस्तानी पजाबियो ने पख्तूनो के साथ वही व्यवहार जारी रखा, जो अग्रेजो ने शुरू किया था। साथ ही, उनकी जाति को आठ विभागो मे विभक्त करके उन्हे छिन्न-भिन्न कर दिया। अपनी आत्म-कथा मे बादशाह खान लिखते है—"मेरी पहली महत्वाकाक्षा यह है कि मै बिलोचिस्तान से चितराल तक पठानो के बिखरे हुए कबीलो को एकता के सूत्र मे गूथ दू, जिससे उनके शोक-हर्ष एक-दूसरे के सम्मिलित शोक-हर्ष बन जाय और मानवता की सेवा के लिए। यह आत्माभिमानी पख्तून जाति ससार मे अपने जातीय कर्तव्य का पालन कर सके।" दुखे दिल से

वह फरियाद करते है—"मुगलो के समय से लेकर अंग्रेजो के समय तक, और फिर अग्रेजो के समय से लेकर पाकिस्तानी सरकार तक, सबने इन कबाइली पठानो से निरतर बर्बरता और अत्याचार से युक्त व्यवहार किया है। उन्हे पहाडो के चटियल कठोरतम आचलो मे और सूखे-सडे मैदानो मे ऐसा रखा गया है कि जैसे दुर्ग के भीतर रखने योग्य कोई बदी हो। इस हालत में उन्हे न तो उनकी भूमि से कुछ प्राप्त होता है और न वे लोग कोई व्यापार कर सकते है। उन्हे किसी प्रकार के उद्योग व शिल्प मे भी कभी प्रशिक्षण प्राप्त करने का अवसर नही दिया गया। यह इलाका साम्राज्य-शाही शक्तियो ने अपनी सेनाओ के सक्रिय प्रशिक्षण के लिए एक प्रकार से युद्ध-स्थल बना दिया है। परिणाम-स्वरूप रेदेगुल[1] की भाति वे लोग पैदा होकर पलते है और वैसे ही जगल और पहाड में मिट्टी मे मिल जाते है। न तो उन्हे रोटी प्राप्त होती है, न पानी, खेत, न क्यारी, न बाग, न बगीचा, न बाजार, न मडिया। उनका न कोई जीवन है और न जीवन की सुविधाए उन्हे उपलब्ध है। मै नही समझता कि पाषाण हृदय दुनिया उनसे चाहती क्या है! बजाय इसके कि मानवता के नाते उन लाखो सुन्दर लडके-लड़कियो और नौजवानो पर दया करे, उसने उनके पीछे नरभक्षी लोग लगा रखे है और इसपर गजब तो यह है कि उनके घावो पर नमक छिडकने के लिए उन्हे अपमानित किया जाता है। पीठ-पीछे गालिया दी जाती है।"

१. अपने आप पैदा होनेवाला मरुस्थली फूल

आगे जाकर वह लिखते है, "मेरी दूसरी महत्वाकाक्षा यह है कि इन शिष्ट, बहादुर, देशभक्त, आत्माभिमानी और मान-मर्यादा के लिए मर मिटनेवाले पठानो को गैरो के अत्याचार-अनाचारसे बचा लू और उनके लिए एक ऐसी स्वाधीन दुनिया बना दू, जहा वे हसते-खेलते हुए सुखमय जीवन व्यतीत कर सके। मै चाहता हू कि उनके ध्वस्त खण्डहर, उजडे हुए घरो के ढेलो और मिट्टी को चूम लू, जो आततायी बर्बर लोगो ने बरबाद किये है। मै चाहता हू कि उनके गली-कूचे और घर-बार अपने हाथो से झाडू लेकर साफ करू, मै चाहता हू कि उनके रक्त से लथपथ कपडे अपने हाथो से धो डालू और फिर उन खूबसूरत इन्सानो को ससार के सामने खडे कर दू और ससार से कहू—आओ, अब मुझे उनसे अधिक शिष्ट, भद्र, सभ्य और सुसस्कृत इसान कोई हो तो दिखा दो।"

एक बार जब बादशाह खान इलाहाबाद मे थे, तो काबुल के विश्वविद्यालय के एक नवयुवक विद्यार्थी ने उनसे कहा, "एक जर्मन ने मुझसे पूछा था कि बुद्धि और बाकी सब चीजो मे तो आप अमरीका या यूरोप के लडको से किसी तरह भी कम नही है, तो फिर अन्य जातियो से आप पीछे क्यो है ?" उस लडके ने बताया कि इस सवाल का कोई उत्तर उसके पास नही था। तब बादशाह खान से उससे कहा, "यह युग राष्ट्रीयता का है। हममे जातीयता, राष्ट्रीयता और सहानुभूति नही है। इसलिए हम पिछडे हुए है।"

इसपर उस लडके ने फिर पूछा, "अगर वह जर्मन मुझसे

पूछे कि तुम लोगो मे जातीयता और राष्ट्रीयता का अभाव क्यो है, तो मै उसे क्या उत्तर दू ?"

वादशाह खान ने उसे समझाया, "इसका उत्तर यह है कि दूसरी जातियो की तरह हममे ऐसे लोग पैदा नही हुए, जिन्होने अपने देश और जाति के लिए प्राण और धन-सम्पत्ति को अर्पण कर दिया हो। अगर हमे ससार मे प्रगति करना हो तो राष्ट्रीयता का भाव और नि स्वार्थ देश-सेवक पैदा करने होगे ।"

अगस्त १६६७ मे जशन के अवसर पर भाषण देते हुए उन्होने लोगों को समझाया, "सारा ससार आवाद है, लेकिन हम आवाद नही है। इसका कारण यही है कि राष्ट्रीयता की जगह फिरकापरस्ती की सकुचित भावना ने हमारे दिलो मे घर कर लिया है। उदाहरण के लिए अफगानिस्तान मे कोई किसीसे पूछे कि तुम कौन हो, तो कोई तो कहेगा कि 'मै हजारा हू,' दूसरा कहेगा, 'मै तुर्कमान हूं', तीसरा कहेगा, 'मैं पख्तून हू, फारसीदान हू ।' यह चीज हमारी बरवादी का कारण है। इन्ही वातो से फूट पैदा होती है। अमरीका मे जर्मन है, अग्रेज है, फ्रासीसी है, इटली के लोग है, मगर उनसे कोई पूछे कि आप कौन है, तो जवाब मिलेगा कि 'हम अमरीकन है ।' जव लोगो मे जातीयता या राष्ट्रीयता की जगह फिरकापरस्ती आ जाती है तो वे बर्बाद हो जाते है। किन्तु पख्तूनो को अगर कोई राष्ट्रीयता और प्रगतिशीलता का पाठ देता है तो अग्रेज और पाकिस्तान के शासक वर्ग के इशारे पर चलनेवाले पीर, मुल्ला और

धर्म के ठेकेदार उसे 'काफिर' या 'हिन्दू' कहने लगते है ।"

उसी भाषण मे उन्होने बताया कि "इस ससार में पख्तून अथवा पठानो से अधिक प्रतिष्ठाहीन और अनादृत कोई नही, इसका कारण यही है कि वे उनके महान रसूल के बनाये सच्चे धर्म को भूल गये है और उसे विस्मृत करानेवाली चीज है पैसे का लालच, पैसे से प्यार और सत्ता की भूख। ये चीजे जिस कौम और देश मे पैदा हो जाती है वह कौम या देश ससार मे उन्नत नही हो सकते। 'हम जो तबाह और बरबाद है, वह इन्ही चीजो के कारण। इसी कारण मुसलमानो मे दलबदी पैदा हो गई। उनके सम्प्रदाय मे विघटन पैदा हो गया। वे मुसलमान, जिन्हे अल्ला के महान रसूल ने प्रेम-प्रीति की शिक्षा दी थी, आपस मे लडकर कत्ल हो गये, दौलत से प्यार और सत्ता के लिए स्पर्द्धा ने उन्हे खुदा और महान रसूल की शिक्षा से विमुख कर दिया। मै आज भी देखता हू कि मुसलमानो ने अभी भी अपने धर्म को फिर से तलाश नही किया।'

राष्ट्रीयता की जगह साम्प्रदायिकता, खुदा की खलकत की नि स्वार्थ सेवा की जगह पैसे और सत्ता की भूख, प्रेम और शाति की जगह आपसी फूट और विग्रह के साथ जो चौथी चीज जातियो के पतन का कारण होती है वह है समभाव और न्याय-वृत्ति का लोप। बादशाह खान के शब्दो मे

"एक समय था, जब सारे ससार मे अधेरा छाया हुआ था और मदीना मे लोकतत्र का एक नन्हा-सा दीप जल रहा

था। मै यह मानता हू कि वह लोकतत्र केवल मदीना के नगर तक ही सीमित था, लेकिन ससार में अधकार था और मदोना में आलोक था। लेकिन अल्लाह के महान रसूल की शिक्षा से विमुखता और धर्म को फिर से तलाश न करने का परिणाम यह निकला कि लोकतत्र का वह नन्हा-सा दीप बुझ गया और उसे अभीतक मुसलमानो ने नही जलाया। वह लोकतत्र उन्होने फिर से प्राप्त नही किया। आप जरा पाकिस्तान को देखिये और जरा हम पख्तूनो को देखिये। उन वलूचो को देखिये, सिधियो, वगालियो और पजावियो को देखिये कि हम लोगो को उस फिरगी ने जो नाममात्र का प्रजातत्र दिया था, वह भी हमारे भाई अय्यूव खा ने छीन लिया है और हमे उसके वदले में क्या दिया है? उसने भी एक 'लोकतत्र' दिया--वेसिक डिमोक्रेसी (वुनियादी प्रजातत्र), लेकिन लोग जिसे 'वेवुनियाद लोकतत्र' के नाम से पुकारते है। केवल लोकतत्र ही नही, हमारी अर्थनीति या आर्थिक स्थिति को देखिये, हमारी भापा को देखिये, हमारी सभ्यता को देखिये, हमारे रहन-सहन, व्यापार-वाणिज्य और नागरिकता को देखिये। हमसे सवकुछ छीन लिया गया और वह सव करनेवाले कौन थे? उनके अपने ही मुसलमान भाई पाकिस्तान के शासक।"

वादशाह खान के पाकिस्तानी विरोधियो ने उनके खिलाफ झूठा प्रचार शुरू किया था कि वह तो हिन्दुस्तान के दोस्त और तरफदार है, काफिर है, हिन्दुस्तान की पंचमवाहिनी है। इसका जवाब देते हुए वह वोले, "उपस्थित भाइयो पिछले

वर्ष इसी अवसर पर मैने आपसे कहा था, आप मेरी जाति के है, मेरे भाई है, मेरे प्रिय, है, मैने आपसे कहा था, हम पख्तून एक प्रवाह मे डूबे जा रहे है, प्रवाह के किनारे एक मुसलमान खडा है। मै उससे कहता हू—मेरे मुसलमान भाई, मुझे अपना हाथ दे दो। वह कहता है—नही, मै तुम्हे अपना हाथ नही दूगा। आगे एक हिन्दू खडा है। मै उससे कहता हू—हिन्दू, तुम मुझे हाथ दे दो। वह कहता है—लो पकड लो। मैने आपसे पूछा था कि हिन्दू का हाथ पकडू या न पकडू ?"

उसके जवाब मे सारे जनसमूह ने एक जबान से नारे लगाये थे, हाथ बढाके।

इसपर बादशाह खान ने पख्तूनो से कहा था, "यदि आपने अपना घर बना लिया और राष्ट्रीयता, प्यार-मोहब्बत, भाईचारा और सौहार्द पैदा कर लिया, तो हम युद्ध के बिना ही अपने पवित्र उद्देश्य मे सफल हो जायगे।"

यह सुनकर सभा मे से एक व्यक्ति उठ खडा हुआ था और उच्च स्वर से उसने बादशाह खान से पूछा था,, "ठीक है बाच्चाखान, और यदि फिर भी पाकिस्तान ने हमारा अधिकार न दिया, तो क्या करेगे ?"

बादशाह खान ने जवाब मे कहा था, "तो जो आपकी इच्छा हो कीजियेगा।"

इस घटना का उल्लेख करते हुए बादशाह खान ने आगे कहा, "भाइयो, मै फिर आपसे पूछता हू, क्योकि आप कहते हैं कि मुसलमान तो मेरा भाई है, अय्यूब खा भी मेरा भाई है

और पख्तून भी है, और जब वह मुझे अपना हाथ नही देता, तो मैने आपसे कह दिया है कि मै निकल पडूगा। सारे संसार में जाऊगा, जो भी मेरा हाथ थामेगा, मै उसके हाथ मे अपना हाथ दे दूगा, चाहे वह लाल काफिर भी क्यो न हो।"

अपनी तकरीर के अत मे उन्होने कहा, "एक और वात भी मेरी सुन लीजिये। मै यदि वेघर, बरबाद, वेवस, वेसहारा और परेशान फिरूगा, तो ए नादान भाइयो, आप ही के लिए फिरूगा। इसलिए मेरी बात पर विचार कीजिये और मुझे वचन दीजिये कि फिर कोई आपको इस्लाम के नाम पर धोखा नही दे सकेगा, जैसाकि सारी उम्र आपको धोखा दिया गया है।"

सन् १९६७ के करीब-करीब आखिर मे मैवंदवालसाहव को भी त्याग-पत्र देना पडा और उनकी जगह वर्तमान प्रधान-मत्री एतमादीसाहव आये। अफगानिस्तान मे जब नया प्रधान-मत्री आता है तो वहा के सविधान के मुताविक ससद से विश्वास प्राप्त करना होता है। एतमादीसाहव को भी ऐसा ही करना पडा। ससद में चारो ओर से माग आई कि पख्तूनिस्तान के सवाल को उठाओ। केवल एक ही सदस्य ने एतराज किया कि ऐसा करेगे तो पाकिस्तान हमारे रास्ते में कठिनाइया खडी कर देगा। इसपर ससद मे इतना तूफान मचा कि उसे अपना एतराज वापस लेना पडा।

इधर पाकिस्तान मे अय्यूवसाहव की तानाशाही के सामने लोगो का असतोष प्रतिदिन वढ़ता ही जा रहा था। रिश्वत-

खोरी, लूट, अन्याय और जुल्म से जनता तग आ गई थी। कोई दो दर्जन पूजीवादी राज्याधिकारी और उनके सगे-सबधी और मित्रो ने सारे देश की ६३ प्रतिशत धन-सपत्ति बटोर ली थी। पजाबी मुसलमानो के प्रभुत्व और निरकुशता से सिधी, बिलोची, पख्तून और बगाली सब तग आ गये थे। उनमे विद्रोह की आग सुलगने लगी थी। बादशाह खान ने फैसला कर लिया कि अगर पाकिस्तान किसी तरह भी उनकी नही सुनेगा तो वह कबाइली इलाके मे पख्तूनिस्तान की एक आरजी सरकार की घोषणा कर देगे और अमरीका, इग्लैड और यूरोप के अन्य देशो का इसके प्रचार के लिए भ्रमण करेगे।

३

फिर दार-उल-अमान में

७ जुलाई १९६८ को हम दिल्ली से एरियाना के हवाई जहाज से रवाना हुए। तीन साल पहले जब मै बादशाह खान से पहली बार मिलने गया था तबसे जमाना बहुत बदल चुका था। कहा उस वक्त की उमगे और कहा ताशकन्द-समझौते के बाद की निराशा और निष्प्रयोजनता का वातावरण। वही अन्तर हवाई उडान के तब और इस बार के अनुभव मे भी पाया। आकाश मे गुबार छाया हुआ था। उसके बीच से प्रकृति का अमूर्त मटियाला दृश्य एक धुधले

साये की तरह कभी एक क्षण के लिए झाकी देता था और कभी छिप जाता था। गजनी का गुलावी पथरीला चटियल मैदान कीचड मे पडने पर सुखाने के लिए फैलाई हुई एक मैली-कुचैली रगीन साडी की तरह दिखाई देता था। अफगानिस्तान मे हमारे पिछले एलची थापर साहव की बदली हो चुकी थी। नये एलची मुझसे अच्छी तरह परिचित थे, मगर हमे उनके एक बार भी दर्शन न हुए।

हवाई अड्डे पर बादशाह खान की तरफ से कलीमउल्लाह आये हुए थे। हमारे दूतावास का एक कर्मचारी भी वहा पर था। 'दार-उल-अमान' पहुचे तो बादशाह खान हमारा इतजार कर रहे थे। बगीचे के फूल कुम्हलाये हुए थे, मगर बादशाह खान की तवीयत पहले की निस्वत वहुत अच्छी दिखाई देती थी। उनके चहरे पर नया तेज था। वडे स्नेह से वह हम दोनो से मिले।

हमारे साथ हवाई जहाज मे एक विदेशी दम्पति श्री और श्रीमती स्टाइन थे। वे डेन्मार्क के रहने वाले थे। मेरी बहन डाक्टर सुशीला के पास दिल्ली आकर ठहरे थे। यूरोप मे वे शाति-स्थापना के आन्दोलन मे लगे थे। अहिसा के वीर वादशाह खान से वे दार-उल-अमान में मिलने आये। वे जानना चाहते थे कि अहिसा का शस्त्र सामाजिक और राजनैतिक समस्या को हल करने मे कैसे काम में लाया जा सकता है? उत्तर में वादशाह खान ने कहा, "हिन्दुस्तान का स्वाधीनता का सारा अहिसक युद्ध इस चीज का नमूना है।" उन्होने फिर पूछा, "मसलन ?" वादशाह

खान ने 'भारत छोडो' आन्दोलन के वक्त कचहरियो पर धरने की बात की। जहा जनता ने दगा किया था, वहां अग्रेज सरकार ने शाति-प्रमन के नाम पर पाशविक दमन-नीति से आन्दोलन को कुचल डाला था। परिणामस्वरूप आम जनता सहम गई थी। इसके विपरीत खुदाई खिदमतगारो की ईट का बदला ईट से देने के बजाय हँसते मुख निर्दोप कष्ट-सहन की नीति के फलस्वरूप सारी जनता की सहानुभूति उनके साथ हो गई थी और अग्रेज हकूमत के सामने सख्त नाराजगी भडक उठी थी। सब जानते थे और पुलिस स्वय भी जानती थी कि अहिसा युग मे पहले जब कभी उनकी इन पठानो से मुठभेड होती थी तो अक्सर पुलिस को मुह की खानी पडती थी। मगर अब उन्हे नगा करके शहर मे घुमाया जाता था और तरह-तरह से अपमानित किया जाता था, तो भी वे उगली तक नही उठाते थे। पहले तो पठानो का खून गरम हो जाय तो दुश्मन को गाजर-मूली की तरह काटने मे उन्हे देर नही लगती थी, किन्तु अब अगर उनका धीरज और सहन-शक्ति चुक जाय तो वह आत्म-हत्या कर लेते थे, मगर अहिसा की अपनी प्रतिज्ञा को नही तोडते थे। तलवार के धनी होते हुए भी तलवार को म्यान से निकाले विना, खुली छाती पर वार झेलकर, उन्होने सब को दग कर दिया और दिखा दिया कि अहिसा मे कितना बल है।"

"किस युक्ति से आपने इन युद्ध-वीरो को अहिसक नियत्रण सिखा दिया?" डेनिश दम्पति ने पूछा। बादशाह

खान ने जवाब दिया, "हिसा की कार्य-प्रणाली अहिसा की कार्य-प्रणाली से भिन्न होती है। हिसा का उद्देश्य विरोधी को कुचल देना होता है, किन्तु अहिसा विरोधी के विचार को बदलकर उसे अपना बना लेती है। हम ढोल नगाडे और ऐसे ही फौजी वाद्य लेकर फौजी ढग से कवायद करते देहातो मे निकल पडते थे। हमारी कौम मे फूट थी। एक कबीले की दूसरे से नही बनती थी। जहालत और वहम मे हम डूबे हुए थे। आपस की कलह और खून का बदला खून की हमारी प्रथा ने हमारा सत्यानाश कर रखा था। सामाजिक कुरीतियो और स्वार्थी लोगो के जाल मे हम फसे थे। धर्म के नाम पर बहका कर पीर, मुल्लाओ तथा स्वार्थी लोगो ने उन्हे गुमराह कर रखा था। हमने लोगो को भाई-चारे के साथ रहना सिखाया, सामाजिक कुरीतिया खत्म करवाई, उनको उद्योग, सफाई, स्वास्थ्य के नियम सिखाये और जो लोग उनकी जहालत से फायदा उठाकर अपना उल्लू सीधा किया करते थे, उनके पजे से उन्हे छुडाया। नतीजा यह हुआ कि उनकी ताकत दिन-दूनी रात-चौगुनी होती गई।"

डेनिश दम्पति ने उन्हे बताया कि पश्चिम मे शान्तिवाद का अर्थ प्राय युद्ध का निष्क्रिय विरोध करना ही समझा जाता है। शान्तिवाद की यह व्याख्या उन्हे कुछ सकुचित और अपूर्ण लगती थी क्योकि इसमे न्याय को स्थान नही दिया गया था। कई बार पश्चिमी शान्तिवादी शान्ति की खातिर न्याय की बलि चढाने को भी तैयार हो जाते है।'

बादशाह खान ने कहा, "आप ठीक कहते है। वही शाति सच्ची शाति है, जो न्याय की स्थापना का फल हो। शाति असमानता, शोपण और सामाजिक न्याय के अभाव के साथ मेल नही खाती। ये परस्पर विरोधी चीजे है। अहिसा-धर्म के पालन से ही सच्ची शाति आ सकती है। अगर मै ऐशोइशरत और मौज-शौक के गुलछर्रे उडाऊ, जबकि मेरे पडोसियो और अनेक देशवासियो को पेटभर खाना और सामान्य सुविधाए भी नही मिलती, तो यह हिसा होगी, फिर भले ही मैने किसीके सामने हाथ न उठाया हो।"

काबुल मे मेरे परिचित एक बगाली दम्पति एफ ए ओ [१] मे लगे हुए थे। उन्होने बादशाह खान को और मुझे खाने पर बुलाया। हमारे दूतावास के एक सास्कृतिक अधिकारी भी थे। मुझसे कहने लगे कि निमत्रण को स्वीकार करने से पहले उन्होने काबुल सरकार का रुख जाच लेने की सावधानी करली थी। उनसे पूछा गया था कि खाने पर कौन-कौन आनेवाले है। यह जानने के बाद जब काबुल सरकार ने अपनी रजामन्दी जाहिर की तभी वे खाने पर पधारे थे। मुझे सहज ही लगा कि इन्होने हमारे देश की शान को क्या ऊचाई के शिखर पर चढाया है! खाने के बाद मैने बात-बात मे इनसे पूछा, "क्या आप पश्तो जानते है या आपने पश्तो सीखली है?" वह बोले, "जी नही, यहा पश्तो जानना आवश्यक नही है। खुद आला-हजरत [२] भी पश्तो नही बोलते।" यह सुनकर मुझे

१ फूड एड एग्रीकल्चर आर्गनाइजेशन २ अफगानिस्तान के शाह

बडा ताज्जुब हुआ कि सास्कृतिक प्रवृत्ति के हमारे दूत जिस देश में सास्कृतिक सम्बन्ध जोडने के लिए भेजे गए है, उस देश की भापा का ज्ञान होना ही अनावश्यक समझते है, जबकि काबुल विश्वविद्यालय ने पश्तो भापा के उच्च अभ्यास की पदवी के लिए सस्कृत भाषा सीखना अनिवार्य बना दिया है।

जिस दिन हम काबुल पहुचे थे, उसी दिन एक वफद जेमीयते-मिल्लते-अफगानिया का पेशावर से बादशाह खान के पास पहुचा था और खबर लाया था कि २९ जून, १९६८ के दिन नेशनल अव्वामी लीग की एक विराट सभा पेशावर मे किस्साखानी बाजार में हुई थी। पूर्व और पश्चिम पाकिस्तान के सब प्रान्तो के प्रतिनिधि उसमें शामिल थे। एक लाख से अधिक लोगो का समूह पेशावर की कडी धूप मे कई घटो तक अपूर्व नियत्रण और सुव्यवस्था के साथ नि शब्द शान्ति से बैठा रहा था। पाकिस्तान बनने के बाद बादशाह खान पकडे गये तबसे यह पहली बार खुदाई खिदमतगार अपनी बाहो पर लाल पट्टे पहने हुए इस तरह आम देखने मे आये थे। जनता का उत्साह असीम था। सिधी, बिलोची, पख्तून और बगाली सब प्रतिनिधियो की यही पुकार थी कि अय्यूबशाही का खात्मा कर दो। एक इकाई को तोड दो। सब प्रान्तो में प्रजातन्त्रवाद वापस लाया जाय। सब प्रान्तो को एक-से अधिकार तथा प्रादेशिक स्वाधीनता और पूर्व बगाल को पूरी आजादी दी जाय। सबसे अधिक उत्साह बगाल की महिलाओ ने दिखाया था और कहा था कि हम अपने पख्तून भाइयो के

न्यायपूर्ण अधिकारो के लिए अपने रक्त की आखिरी बूद दे देगी ।

नेशनल अव्वामी लीग का एक अधिवेशन भी वहा हुआ था । अधिवेशन के आरभ मे ही चीनी कम्यूनिस्ट तो अलग हो गये, बाकी पूर्व और पश्चिमी पाकिस्तान के सब दलो नें मिलकर बादशाह खान के सुपुत्र वलीखा को लीग का प्रमुख चुना । वलीखा प्रमुख पद स्वीकार करने के लिए जरा भी उत्सुक नही थे, किन्तु सब प्रतिनिधियो के फैसले को उन्हे स्वीकार करना ही पडा और वह सर्व-सम्मति से नेशनल अव्वामी लीग के प्रमुख चुने गये ।

यह अय्यूबशाही के अन्त का आरभ था ।

४

काबुल में सात दिन

८-७-६८

सबेरे चाय के बाद यहा मेरी जो बाते हमारे प्रधान मत्री, उप-प्रधानमत्री, गृहमत्री और अन्य लोगो से हुई वह बादशाहखान को बताई । उन्होने कहा कि अगर वह हिन्दुस्तान गये तो, हमारा देश उनकी सहायता करे या न करे, वह कोई ऐसी बात करना नही चाहेगे, जो हमारी हुकूमत को परेशानी मे डाले । बिहार और हरियाणा इत्यादि के झगडो पर उन्होने अपनी राय दी कि वह सब हमारी केन्द्रीय सरकार द्वारा रक्खी बुरी मिसाल का परिणाम है । फिर हमारे समाज-

वाद की चर्चा शुरू हुई। वादशाह खान को लगता है कि पडित नेहरू को चाहिए था कि सबसे पहले अग्रेजी तत्र और तत्र-प्रणाली को खत्म करते, किन्तु उन्होने उसी पर समाजवाद की इमारत खडी करनी चाही। नतीजा यह हुआ कि उनका समाज-वाद नाममात्र का ही रह गया। अग्रेजो के जमाने की नौकर-शाही का रग-ढग जरा भी न वदला। इसके विपरीत लेनिन ने पुराने तत्र और तत्र-प्रणाली को जड से उखाड फेका और नये सिरे से एक नये ससार की रचना की। फलत और कुछ नही तो वहा खाना, पहनना और शिक्षा तो सबको मिलती है।

मैने कहा, 'यही तो हमारी अहिसात्मक क्राति का विशेप लक्षण था। अग्रेजी युग के अमलदारो को दड देने या उनसे वदला लेने के वजाय हमने उन्हे अपना लिया, क्योकि हमारा विरोध हमारी पुरानी शासन-प्रणाली से था, शासको या उसके अमलदारो से नही।'

इसपर वादशाह खान वोले, "हा, यह तो मै मानता हूं, लेकिन आप इतना तो जरूर कर सकते थे कि पहले आप जो करना चाहते है और जिस तरह वह करना चाहते है, उसकी घोपणा कर देते। पीछे, आप कहते कि यह सब जिसे पूरी तरह से स्वीकार है और इसमें हमारी मदद करेगा, उसे हम नौकरी मे ले लेगे, चाहे वह अग्रेजो युग में हमारा विरोधी ही क्यो न रहा हो, किन्तु हमारे साथ शामिल होने के वाद अगर किसी ने भी गडवड की तो फिर जरा भी लिहाज किये विना, निहायत सख्ती से, उससे व्यवहार किया

जायगा ।"

चाय के वाद खूवानी के वगीचे मे मै अकेला घूम रहा था । रास्ते मे वादशाह खान का एक पक्का अनुयायी पठान मिल गया । पिछली वार भी वह मिला था । एक जवरदस्त झटके के साथ पठान-तरीके से दो वार हाथ मिलाकर वडी मुहव्वत से वारी-वारी दोनो कधो से वह वगलगीर हुआ । सफेदी मायल लम्वी दाढी और हाथी-जैसा सुडौल शरीर था उसका । वात-वात मे कहने लगा, "जवसे हमारे खान यहा आये है, प्रतिक्रियावादियो का आसन हिलने लग गया है । उनके एक अगुआ आदमी ने मुझसे कहा, 'तुम्हारा खान तो अव वुड्डा हो गया है ।' मैने जवाव दिया कि हा, अगर अपनी वारह साल की लडकी के साथ शादी करने को उससे कहो तो वह जरूर इन्कार कर देगा, मगर उसका दिल तुम और हम दोनो से मिलकर भी ज्यादा मजवूत है ।" यह कहते-कहते वह हँसी से लोट-पोट हो गया और दो बार फिर से सारी कहानी सुना न ली तवतक उसे सतोष न हुआ ।

वादशाह खान ने बताया कि कुछ समय मे वह शाह और वहा के प्रधानमत्री के साथ विचार-विमर्श करके पख्तूनिस्तान के लिए एक अस्थायी सरकार वनाकर उसकी घोषणा करेगे । अगर अफगानिस्तान की हुकूमत उसे मान्य करले तो फिर हमारी सरकार को उसे मान्य कर लेना चाहिए । पीछे, वह इग्लैंड और अमरीका से उसे मान्य कराने के लिए वहा का भी भ्रमण करेगे ।

आज तीसरे पहर जमियते-मिल्लते-अफगानिया के युवक

दल के कुछ प्रतिनिधि वादशाह खान से मिलने आये और ढाई घटे तक उनसे वातचीत की। उन्होने वादशाह खान से पूछा कि आपका अफगानिस्तान की पहली दो हुकूमतो और वर्तमान एतमादी साहववाली हुकूमत मे पख्तूनिस्तान के सवध मे कोई अन्तर लगता है क्या? वादशाह खान ने उत्तर देते हुए कहा, "हा, वहुत अतर है। मौजूदा हुकूमत पहली दो हकूमतो से विल्कुल मुख्तलिफ है और पख्तूनो के मसले के सिलसिले मे वातचीत करने पर आमादा है और उसे हल करने के लिए मुझसे वाते कर रही है।"

एक नौजवान ने पाकिस्तान की राजनैतिक परिस्थिति मे इन्ही दिनो जो परिवर्तन हुए, जिसके परिणाम-स्वरूप अव्दुलवली खा नेशनलिस्ट अव्वामी पार्टी के प्रमुख चुने गये, उनका जिक्र करते हुए पूछा कि इसके फलस्वरूप क्या पख्तूनो और पाकिस्तान की आम जनता मे नया राजनैतिक सवध पैदा होने की सभावना है?" इसके जवाव में वादशाह खान ने कहा, "पाकिस्तान की मुख्तल्फि कौमो मे भाई-वदी और दोस्ती के लिए जमीन का तैयार होना एक वड़ी सतोषजनक चीज है, क्योकि एक देश के आजादीपसद खडों के वीच गलतफहमी का दूर होना हमारी कौमी उमगो और आशाओ की सफलता के लिए एक शुभ चिन्ह है और यही वजह है कि वगाल के असलियत को पहचाननेवाले एक नेता ने अपनी तकरीर मे पख्तूनो को सवोधित करके यहा तक कह दिया था कि हम इस प्रदेश और प्रदेशवासियो के लिए वगाली आम जनता की ओर से श्रद्धा के फूल लाये है,

क्योकि स्वाभिमान और स्वाधीनता-प्रिय लोगो के लिए यह प्रदेश काबे की-सी प्रतिष्ठा का स्थान रखता है।"

पख्तून लोग आज दो हिस्सो मे बटे हुए है। ड्यूरेड रेखा के उस पार बसे हुए पख्तूनो के इलाके को आजाद पख्तूनिस्तान और ड्यूरेड रेखा के इस पार अग्रेजी राज्य के नीचे पख्तून कबीलो के इलाके को 'महकूम' पख्तूनिस्तान कहते है। दोनो तरफ के पख्तूनो को मिलाकर उनकी एक इकाई बने, तो वह इकाई क्या अफगानिस्तान की हुकूमत के अधीन हो या मुकम्मल तौर पर आजाद, और अगर यह न हो सके, तो और 'महकूम' पख्तून पाकिस्तान के सविधान के अन्दर रहते हुए प्रादेशिक स्वाधीनता के लिए आन्दोलन करे, तो उस ओर अफगानिस्तान की हुकूमत या आजाद पख्तून के बीच ताल्लुकात क्या हो, ये बडे अटपटे प्रश्न हैं। इन दो पक्षो को एक सूत्र मे गूथने का बादशाह खान अत्यन्त कुशलतापूर्वक प्रयत्न कर रहे है।

'आजाद' पख्तूनिस्तान और 'महकूम' पख्तूनिस्तान के सबध मे एक सवाल का जवाब देते हुए बादशाह खान ने फरमाया कि "आगे, अफगानिस्तान की राजनैतिक परिस्थिति और उसमे परिवर्तनो का असर हमेशा 'महकूम' पख्तूनिस्तान पर पडा है। मसलन, अफगानिस्तान के पिछले इन्कलाब से हम जाग्रत हुए थे और इन्ही परिवर्तनो के फलस्वरूप हममे राजनैतिक और सामाजिक आन्दोलन की वृत्ति पैदा हो गई थी, जिसके कारण अग्रेजी साम्राज्य के जमाने मे हमारी कौमी तहरीक मुल्क के कोने-कोने में फैल गई थी।"

इन दो विभागो के बीच दृष्टिभेद और खुदाई खिदमतगार आन्दोलन की बात करते हुए उन्होने बताया कि कई लोगो का इस आन्दोलन में शामिल होने और कइयो का इससे अलग हो जाने का कारण सैद्धातिक मतभेद नही था, केवल वैयक्तिक स्वार्थ था। राजनैतिक दलो मे मतभेद और सघर्ष का होना एक कुदरती बात है, क्योकि इक्तदार के मतवाले ऐसी जमायतो मे हमेशा फूट डालते आये है। ऐसे वैयक्तिक हित की तलाश वाले और अपने पक्ष के हिमायती लोगो और नौजवान अफगानो की जमियत मे अहिसा-हिसा के प्रश्न पर भी मतभेद है। उसकी तरफ इशारा करते हुए बादशाह खान ने उन्हे समझाया कि 'जवान अफगान' पार्टी के नौजवानो को चाहिए कि वे अपने ध्येय को सफल बनाने के लिए मुहब्बत और प्यार का रास्ता इख्तियार करके विपक्षियो पर उसकी श्रेष्ठता को सिद्ध कर दे।

इसी सिलसिले मे एक और प्रश्न के जवाब मे उन्होने बताया कि योमे-जश्ने-इस्तकलाल के दरम्यान योमे-पाकिस्तान के अवसर पर उन्होने कहा था, कि मरगले (रावलपिडी के नजदीक का इलाका) से हरात और चितराल और वहा से अरब समुद्र तक का इलाका एक ही खड है। इसलिए अफगानिस्तान और पख्तूनिस्तान की जनता एक ही कौम है और एक ही राजनैतिक और आर्थिक सूत्र मे वे सब बंधे हुए है। एक की हालत सुधरेगी तो दूसरे को उसका लाभ मिले बिना नही रहेगा।

सूबा पक्तिया मे मँगल और जाजी दो कबीले है। उनमे

लडाई छिड गई थी। इसपर शोक प्रकट करते हुए वादशाह खान ने वताया कि "इन दोनो कवीलो के वडो से मैने कावुल मे कहा है कि वह तुरन्त जाकर पक्तिया मे शाति स्थापित कर दे और दो भाई कवीलो के वीच दुश्मनी का फौरन खात्मा कर दे।"

अत मे एक नवयुवक ने कहा, "वावा, आप खुदाई खिदमतगारो का एक केन्द्र तुरन्त क्यो नही स्थापित कर देते ?" इसका उन्होने जवाव दिया, "इस सिलसिले मे हमारी हुकूमत से वातचीत चल रही है। पहले आप खुदाई खिदमतगारो की एक खासी जमात तैयार कर लो, फिर केन्द्र भी मिल जायगा, तवतक जलालावाद मे मेरा घर ही केन्द्र का काम देगा।"

रात, खाने के वाद घूमते समय, भूदान-आदोलन की वात चल पडी। मैने पाया कि अग्रेजी 'भूदान' को वादशाह खान वडे ध्यान और वारीकी से पढते थे। उनकी टीका थी कि "जिस तरह भिखारी की झोली मे मुट्ठी-भर आटा डाल देने से न तो भिखारी का और न आटा देनेवाले का कल्याण होता है, उसी तरह भूमिहीनो की झोली मे थोडी भूमि डालने से उनकी या हमारी सामाजिक समस्या का हल नही होता। भिखारी को हम इस तरह उलटा पुरुपार्थहीन वनाते है, भिक्षान्न पर जीने की आदत डालते है और अपने-आपको और जगत को धोखा देते है कि हमने गरीव के प्रति अपने धर्म का पालन कर लिया, जवकि हमे उसे स्वाभिमान और पुरुपार्थ सिखाना चाहिए, अपने परिश्रम से दयानतदारी की

रोटी कमाने का साधन और उसके लिए ज्ञान उसे देना चाहिए। भूदान वालो से मै यह पूछता हूं कि भूमिदान पाने-वाले ने उसके लिए खुद क्या किया या आपने उसे इन्सान वनाने के लिए क्या किया ? पहले दलित और दरिद्र पीडित को, जिसे इन्सानियत के दर्जे से गिराकर हमने हैवान-सा वना दिया है, इन्सान वनाओ, पीछे दान की वात करो।"

गाधीजी के 'ट्रस्टीशिप' के सिद्धात के वारे मे मैने उनमे अश्रद्धा-सी पाई। 'गाधीजी कितने लोगो को ट्रस्टी वना सके ? जो चीज उनकी जिदगी मे न हो सकी, वह क्या उनके विना हो सकेगी ?' मुझे लगा कि इस विषय का प्रति-पादन विशेषरूप से गाधीजी ने, प्राय उनकी जीवन-यात्रा के अतिम चरण मे ही किया था, जव वादशाह खान उनके पास नही थे। उसकी सारी कल्पना और रूपरेखा से वह मुझे पूरी तरह परिचित नही लगे।

६ ७ ६८

आज सवेरे मै चाय के लिए जरा देर से नीचे गया था। वादशाह खान वगीचे मे घूम रहे थे। मै उनसे मिला। उनके भाई डाक्टर खानसाहव की वात शुरू हुई। वह वता रहे थे कि फ्रंटियर के गवर्नर सर जार्ज कनिंघम ने कैसे उन्हे शीशे मे उतार लिया था। डाक्टर खानसाहव 'व्रिज' के वडे शौकीन थे। सर जार्ज को जव उनसे कोई काम निकालना होता था तो उन्हे 'व्रिज' खेलने के लिए अपने यहा वुला लिया करते थे और फिर जो जी चाहे, उनसे करवा लेते थे। "मुझे ० तरह वह अपने दांव मे नही ला सकते थे। नतीजा यह

कि डाक्टर खानसाहब उनके जाल मे फस गये और अपने राजनैतिक जीवन की मानो खुद कब्र खोद दी।"

शाम के खाने से पहले बादशाह खान थोडा समय घूमे। घूमते-घूमते खुद ही उन्होने उनके हिन्दुस्तान जाने की बात छेडी। बोले, "लोग मुझसे कहते है कि हिन्दुस्तान आओ। जवाब मे मैं उन्हे एक कहानी सुनाया करता हू, 'एक मरतबा एक बादशाह को खबर मिली कि दीवानगी की आधी आने वाली है। यह सुनकर वह सब दरवाजे खिडकिया, रोशनदान, वगैरा अच्छी तरह बद करके हुज्रे के अदर घुस गया। जब आधी चली गई और बाहर निकला तो जिन लोगो पर आधी का असर हो चुका था वे सब मिलकर उसे दीवाना कहने लगे।' सो मै भी अगर हिन्दुस्तान जाऊ, तो मुझे भी वहा के सब लोग इसी तरह दीवाना कहने लगेगे, क्योकि मै तो पुराने जमाने का हू।"

५

भारत आने पर राजी

१०-७-६८—१४-७-६८

शायद लोग नही जानते कि अफगानिस्तान के मौजूदा शाह आला-हजरत बादशाह खान को 'चाचा' कहकर बुलाते है। एक बार वर्तमान प्रधान मत्री, एतमादीसाहब, बादशाह खान से मिलने आये, तो बादशाह खान ने उनसे

कहा, "शाह से मिलो, तो मेरी तरफ से उन्हे पैगाम देना कि अय्यूब खा भी मुझे 'चाचा' कहा करता था। मगर देखो, उसने मेरे साथ क्या किया है ! आप मुझे 'चाचा' कहते है, तो क्या आप भी वैसा ही करेगे ?" दूसरी बार एतमादीसाहब से बादशाह खान मिले तो आला-हजरत भी वहा मौजूद थे। मिलते ही एतमादीसाहब से बादशाह खान ने पूछा, "क्योजी, मैने जो कहा था, सो आला-हजरत को आपने बताया था क्या ?" वह क्या जवाब देते ? चुप से सिर झुका दिया। इसपर बादशाह खान ने वह सारी बात आला-हजरत को कह सुनाई और पूछा, "तो आप भी क्या वही करेगे ?" आला-हजरत हँस पडे और मुहब्बत से उन्हे गले लगा लिया। बादशाह खान ने बताया कि जब वह दौरे पर जाते है, तो दौरे का सारा इन्तजाम वहा की हकूमत ही करती है, यहातक कि लोगो को इकट्ठा भी वही करती है। जलालाबाद मे एक मकान भी उनके लिए बनवा रही है। ड्राइवर-सहित एक सरकारी मोटर उनकी सेवा मे रहती है। मगर उन्हे ये दोनो चीजे पसद नही है।

बादशाह खान मेहमद कबीले के है। काबुल में हमारी उपस्थिति के दरम्यान वह एक दिन मुझे इस कबीले के एक सरदार के घर खाने को ले गये। कहा जाता है कि इस कबीले ने ही बच्चा सक्का को सग्राम मे खदेडकर मौजूदा शाह के पिता नादिरशाह को गद्दी दिलवाई थी। जब नादिरशाह गद्दी पर बैठा तो इसके सरदार खान हाजी हुसैनखा ने उनको अपनी गद्दी पर आने का निमत्रण दिया और उनके

स्वागत के लिए अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित सेना का ऐसा शानदार प्रदर्शन किया कि वह डर गये और सरदार और उसके सारे सगे-सबधियो को कैद मे डाल दिया। सारी जायदाद जब्त कर ली और महिलाओ को भी उनके घरो मे नजरबद कर दिया। हाजी हुसैनखा तो कैदखाने मे ही करीब १९५८ मे गुजर गये। बादशाह खान के अफगानिस्तान मे पहुचने के कुछ पहले या शायद बाद मे सरदार के बडे लडके फकीर बाईजे की रिहाई हुई। बादशाह खान ने बाकी लोगो की भी रिहाई करवाई और जब्त हुई जायदादे उन्हे वापस दिलवाई। काबुल की सरकार उनके बडे लडके, फकीर बाईजे, को पख्तूनिस्तान के प्रचार के लिए विदेश भेजना चाहती थी, किन्तु बादशाह खान ने उसे समझाया कि विदेश मे जाकर तुम क्या करोगे? यहा रहकर पख्तून भाइयो की नि स्वार्थ सेवा मे ही क्यो नही लग जाते? चुनाचे, उसने विदेश जाने से इकार कर दिया, मगर हुकूमत के बहुत आग्रह करनेपर वहा राज्य के मजदूर विभाग का मदीर (मिनिस्टर) बनना स्वीकार कर लिया। खासा तीन-चार हजार रुपये वेतन मे लेता था, किन्तु बादशाह खान ने उसपर ऐसा रग चढाया कि हम काबुल पहुचे, उससे थोडे ही समय पहले उसने अपने पद से इस्तीफा दे दिया था और बादशाह खान के साथ खुदाई—खिदमतगार के काम मे जुट गया था। उसका छोटा भाई, निकोबाबा, भी विश्वविद्यालय मे उच्च शिक्षा पाकर कई देशो मे घूम आया था। अफगानिस्तान के सविधान के मुताबिक हर किसीको दो साल फौजी तालीम लेनी पडती है। उसकी जगह

इन भाई को सरकार ने काबुल विश्वविद्यालय मे लेक्चरार के पद पर नियुक्त कर दिया था। वह भी खाने पर आया था। विनोद मे कहने लगा, "बाबा, मै भी खुदाई खिदमतगार हू, किन्तु आप तो अदम-तशद्दुद के खिदमतगार है और मै बा-तशद्दुद खिदमतगार हू।" उनकी एक बहन है जोहरा। वह भी परम्परा से चली आई परदे की रूढि को छोडकर सेवा के क्षेत्र में उतर आई थी और खुदाई खिदमतगार बन गई थी। फिर भी इतनी पुरानी प्रथा कोई एकदम थोडे ही छूटती है! जव हम खाने को बैठे तो हमारे साथ बैठने मे शायद उसे सकोच हुआ होगा। वह बाहर ही न आई। रात के साढे दस-ग्यारह वजे खाने के वाद हम दार-उल-अमान लौटे तो आते ही सबसे पहले वादशाह खान ने टेलीफोन उठाकर उसे डाट दी, "तुमने आज यह क्या हरकत की? कहा खुदाई खिदमतगारी और कहा परदे की कैद! अच्छा, कल दोपहर मै अपने मेहमानों को साथ लेकर फिर तुम्हारे यहां आऊगा और तुम सबकी अपने साथ तस्वीरे खिचवाऊगा।"

दूसरे दिन दोपहर को वह मुझे अपने साथ लेकर फिर वहा पहुचे और मुझसे उन सबकी तस्वीरे खिचवाई। इसी तरह वह हमे कलीम उल्लाह साहब और जकाखील कवीले के दुर्रानि खा के घर भी खाने को ले गये। दुर्रानि खां के वाप अफरीदियो मे वडा रसूख रखते थे। वेटे का भी अफरीदियो मे वडा असर है। वादशाह खान जहा जाते थे, बच्चे, लडके, लडकिया और महिलाए उन्हे घेर लेती थी और अपनी तस्वीरे खिचवाती थी। वच्चो की तो वात ही

क्या ! उनकी गोद मे जगह पाने या उनके वगल से सटकर वैठने या खडे होने की होड लग जाती थी। अन्वार उलहक्क-गरान के घर पर गये, तो पहुचते ही उनकी छोटी सी वच्ची आकर वादशाह खान की गोद मे वैठ गई और वोली, "वावा, यक कलम आजादी," (एकदम से पूरी आजादी चाहिए)। वडो से वच्चो तक सव पख्तूनो को वादशाह खान ने आजादी का गहरा रग चढा दिया है।

हम कावुल मे वादशाह खान के साथ ७ जुलाई से १४ जुलाई तक सात दिन रहे। रोज एक या या दो वैठके हमारी उनके साथ होती थी। जिन घटनाओ के सस्मरणो का रिकार्डिग करना होता था, उन्हे प्रश्नो के रूप मे उनके आगे रखते थे। उनपर वह हमारे साथ चर्चा करते थे, फिर जो कहना होता था, उसे वह पहले लिख लेते थे। जव उनकी पूरी तसल्ली हो जाती थी तभी वह रिकार्डिग कराते थे।

वादशाहखान चौकसाई और सच्चाई के वडे पुजारी है। उनमे सागर-सी गम्भीरता है, जिसकी गहराई मे उनकी प्रवल-से-प्रबल भावनाए भी ऐसे छिप जाती है कि किसी-को उनकी खवर तर्क न पडे। वह वडे मित-भाषी है, थोडे-से-थोडे नपे-तुले शव्दो मे जो कहना होता है, कह देते है। स्पष्ट वक्तृता उनका विशेष लक्षण है। गोल-मोल बात करना उन्हे आता ही नही। देश के बटवारे के बाद अपनी मुसीवतो की वात करते हुए उन्होने कहा, "तकसीम के बाद जव हम कैद हो गये तव वह (पडित जवाहरलालजी) मेरे लड़के से एक वार लदन मे मिले और हमारी कैदोबद की

दास्तान सुनकर रो दिये। हमारी वे सब मुसीबतें कांग्रेस के बटवारे और झूठे रेफरेन्डम को मजूर करने का नतीजा थी। हमारे तवक्कवात (आशाएं) थे कि जवाहरलालजी, राजेन्द्रप्रसादजी और सरदार पटेलजी, जो हमारे जिदगी-भर के रफीक थे, वे मुसीबत मे हमे नही छोडेगे। अफसोस, हमारी वे उम्मीदे पूरी नही हुई, लेकिन हिन्दुस्तान के लोगो मे मै कभी नाउम्मीद नही बनूगा।"

"कांग्रेस के नेताओ ने आपका इस तरह त्याग किया। इसका क्या कारण था?" हमने पूछा। उन्होंने उत्तर दिया, "हकीकत यह है कि एक तो पडितजी पर लार्ड माउटबेटन का बहुत असर था, लेकिन सबसे ज्यादा इन लोगो को इक्तदार का शौक था।"

बटवारे से पहले और बटवारे के समय पर उन्हे कांग्रेस से फोड़ने की जो कोशिशें की गई, उसका वर्णन करते हुए बादशाह खान ने कहा, "एक दफा यूनस (बादशाह खान का रिश्तेदार महम्मद यूनस) जिन्नासाहब की तरफ से पैगाम लेकर आये थे कि 'मेरे इर्द-गिर्द निकम्मे लोग हैं। अगर अब्दुल गफ्फार मेरे साथ हो जाय, तो मै बहुत-कुछ कर सकता हू।' लेकिन हमने कांग्रेस को न छोड़ा, पर कांग्रेस ने इक्तदार की खातिर हमे छोड दिया, हालांकि हम लोगो को भी इक्तदार मिल सकता था। कांग्रेस के फैसले ने हमारे लोगों पर बहुत बुरा असर हुआ। उन पर मायूसी छा गई और कई लोगो ने काम छोडा और घर मे बैठ गये।"

अपनी पुस्तक 'महात्मा गांधी, दि लास्ट फेज' के द्वितीय

खड मे पडित जवाहरलालजी के उस वाक्य की तरफ मैंने उनका ध्यान खीचा, जिसमे पडितजी ने कहा था कि "रेफरेडन मे भाग लेने से जी चुराना एक प्रकार की भीरुता और वददयानती का सूचक होगा।" उसके जवाव मे वह वोले, "रेफरेंडम मे शामिल न होने की वजह यह थी कि पाकिस्तान के साथ (हम) मिलना नही चाहते थे और हिन्दुस्तान ने हमे छोड दिया था। इसलिए हमने (पख्तूनो ने) एलान किया और कहा कि अगर रेफरेडम होना है तो हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और पख्तूनिस्तान इन तीनो का होना चाहिए। चूकि हमारी यह माग मजूर नही की गई, इसलिए हमने इसका वॉयकॉट किया। जव हम यह फैसला कर चुके, तो हमे काग्रेस की तरफ से खबर मिली कि अगर आप रेफरेडम मे हिस्सा लेने से भागते है, तो उसके यह मानी होते है कि रेफरेडम मे हमे अपनी जीत के मुतल्लिक शक है और उसको छिपाने के लिए हमने यह वहाना निकाला है। मै यह पूछता हू कि एक झूठे मुद्दे पर रेफरेडम का वॉयकॉट करना क्या यह वददयानती और भीरुता थी या वटवारा हासिल करने के लिए और इक्तदार के लिए काग्रेस का सरीहन झूठे मुद्दे पर रेफरेडम को, वावजूद हमारे और महात्माजी की मुखालिफत के मजूर करना वददयानती थी ?"

आगे चलकर उन्होने वताया .

"वावजूद हमारे वॉयकोट के जिन्नासाहव को ५१ फीसदी वोट मिले। कर्नल वशरअहमद ने, जो हरीपुरा जेल मे मेरे साथ कैद थे, वताया कि 'उन दिनो मै कोहाट मे था।

मै कम्पनी-कमाडर था। मैने अपनी कम्पनी से तीन दफा वोट दिलवाये थे। इसके अलावा बहुत-से लोगो, बल्कि खुदाई खिदमतगारो के भी वोट जाली दिलवाये गए थे।"

मौसम बहुत ही सुहावना था। हवा में गुलाबी-सी ठडक थी। ऊपर की मजिल पर, जिस कमरे मे हम रहते थे, उसकी खिडकी के ठीक सामने. बहुत ही नजदीक पकी हुई, सुनहरी, रस से भरी खूमानियो से लदे हुए वृक्ष पर गान गानेवाले पक्षी खुशिया मनाते अपना मधुर सुर अलाप रहे थे। उनके वे अलाप भी रिकार्डिग में बादशाह खान की आवाज के साथ ऐसे आगये कि सुननेवाले को लगे कि उसके कधे पर ही बैठा पक्षी अपना आनन्द-गान सुना रहा है। बादशाह खान के साथ हमारा यह सात रोज का सहवास हमारे लिए एक अत्यत अविस्मरणीय पुण्य अनुभव था।

६ :

आखिर भारत पहुंचे

काबुल से लौटने से पहले हमने बादशाह खान से जान लिया कि गाधी-जन्म-शताब्दी के अवसर पर वह हिन्दुस्तान मे जरूर आना चाहेगे। इसपर से हमे विश्वास हो गया था कि अगर सालगिरह समिति की ओर से उन्हे आमत्रण मिलेगा तो वह उसे अस्वीकार नही करेगे। पख्तूनिस्तान के सवाल पर उन्हे हमारी सरकार से निराशा-पर-निराशा ही होती

रही थी। हमारे कावुल जाने से कुछ समय पहले हमारी पार्लमिट मे वादशाह खान को गाधीजी के दिये हुए वचन के वारे मे सवाल पूछा गया था, तो हुकूमत ने जवाव दिया था कि "इस किस्म के वचन का कोई लिखित रिकार्ड हमे नही मिलता।" कावुल से लौटते समय वादशाह खान ने हमे भारतवासियो के नाम एक लिखित सदेश दिया था। इस वयान पर तारीख थी दार-उलअमान, १४ जुलाई १९६८ की। इसमे उन्होने गांधी-जन्म-शताब्दी के अवसर पर हिन्दुस्तान आने के लिए मिले अनेक निमत्रणो के लिए धन्यवाद देते हुए कहा था।

"मुझे खुशी भी है और अफसोस भी। खुशी इसलिए कि गाधीजी के सिलसिले मे हिन्दुस्तान के लोगों ने याद किया और अफसोस इसलिए कि हालात की मजवूरी से मै इनसे विछडा हुआ हू। यह मौका तकाजा करता है कि हम इनके उसूलो को अमली जामा पहनाने की कोशिश करे।"

हमारी पार्लमिट मे जो सवाल-जवाब हुए थे, उनका उल्लेख करते हुए उन्होने कहा

"यह तो सब जानते है कि जब हम १९३१ मे कराची मे हिन्दुस्तान की आजादी की तहरीक मे शामिल हुए थे, हमने तवसे किसी किस्म की कुरवानी से गुरेज नही किया और आजादी की जद्दोजहद करते रहे, मगर जब आजादी आई तो हमे वताये वगैर फैसला कर लिया गया। गाधीजी ने मुझे खुद कहा था कि अगर तुम्हारे साथ बेइन्साफी हुई, तो हिन्दुस्तान तुम्हारे हकूक के लिए लडेगा। मगर

अब कहने मे आया है कि इसका कोई सरकारी तहरीरी रिकार्ड नही है, तो मै यह पूछता हू कि गाधीजी का जबानी इकरार क्या इकरार नही ? और क्या यह हिन्दुस्तान का इखलाकी फर्ज और धर्म नही कि जैसे हमने इनकी आजादी के लिए जद्दोजहद की, वह भी हमारी आजादी के लिए जद्दोजहद करे ?"

अत मे उन्होने आशा प्रकट की कि हम उनकी मुसीबतो मे उनके साथ शरीक होगे। "इसीमे हमारा, हिन्दुस्तान का और पाकिस्तान का भी भला है।"

उनके अपने हाथ से लिखे इस सदेश के फोटो बनवाकर हमने सालगिरह समिति की तरफ से अखबारों में भेजे। कई अखबारों मे वे छपे भी। किन्तु जब आल इडिया रेडियो में प्रसारित करने के लिए इसकी नकल भेजी, तो गाधीजी के मौखिक वचन वाला सारा हिस्सा उन्होने उडा दिया। कारण यह बताया कि कार्यक्रम मे गडबड होने से समय कम रह गया था, इसलिए सदेश को सक्षिप्त रूप में देना पडा था। किन्तु हमने तो अग्रेजी और हिन्दुस्तानी दोनो भाषाओ में सदेश भेजा था। यदि एक भाषा के कार्यक्रम मे गडबड हो गई थी तो दूसरी भाषा मे वह पूरा प्रसारित होना चाहिए था। इसका हमें कुछ भी उत्तर न मिला।

अगस्त १९६८ मे श्री सीतारामजी सेक्सरिया के भारतीय सस्कृति ससद के निमत्रण पर मैने कलकत्ता में दो भाषण दिये। एक गाधीजी पर, दूसरा बाशाह खान पर। दूसरे दिन के भाषण के आरम्भ मे ही स्व० सेठ सोहनलाल

दुग्गड ने बिन मागे ही पच्चीस हजार का एक चैक मेरे हाथ मे पकडा दिया और कहा कि उनकी तीव्र इच्छा है कि बादशाह खान की अस्सीवी वर्षगाठ पर उन्हे जो थैली भेट की जानेवाली है, उसमे सबसे पहली रकम उनकी हो। इसके कुछ समय बाद दुग्गडजी का स्वर्गवास हो गया, किन्तु उनकी उदारता और श्रद्धा से हमारी समिति के सब लोग बहुत प्रभावित हुए।

१९६८ के जशन पर बादशाह खान ने पाकिस्तान को आखिरी चेतावनी देते हुए कहा, "पिछले बीस साल से हमने धीरज रखकर शाति के रास्ते से पख्तूनिस्तान के सवाल का फैसला पाकिस्तान के साथ करने की कोशिश की है। अब हम आखिरी बार उनसे फिर विनती करते है कि अब भी हमारे साथ न्याय करके हमारे हक हमे दे दो और हमे मजबूर न करो कि हम अलग होकर बलोचिस्तान, सिध और पख्तून का अपना फेडरेशन बना ले।" पहली बार अफगानिस्तान की हुकूमत ने सयुक्तराष्ट्र सस्था मे पख्तूनिस्तान का प्रस्ताव पेश किया और एलान किया कि वे रेफरेडम के आधार पर किये हुए फैसले को स्वीकार नही कर सकते, क्योकि वह रेफरेडम एक झूठा रेफरेडम था।

इसके थोड़े अर्से बाद ही अय्यूबशाही के सामने विद्रोह की जो आग सुलग रही थी, वह भडक उठी और पूर्व और पश्चिम पाकिस्तान मे देखते-देखते फैल गई। वलीखा को पकड़ लिया गया, किन्तु विद्रोह दिन-ब-दिन और भी जोर पकडता गया। युवक-वर्ग उबल पडा। कालेज और यूनीवर्सिटी

के विद्यार्थी अपनी पढाई छोडकर मैदान में कूद पडे । ढाका, रावलपिडी, पेशावर, लाहौर और दूसरी कई जगहों में हड़-ताल हुई, लाठी-चार्ज हुए, गोली चली, मगर "मरज बढता गया ज्यो-ज्यो दवा की ।" जव अय्यूबसाहब ने देखा कि अब तो बाजी हाथ से जा रही है तो उन्होने सब दलों की एक गोलमेज परिपद बुलाई और पख्तूनो की और पूर्व बंगाल की तकरीबन सब मागे मान ली, किन्तु मामला कुछ ऐसा बिगड चुका था कि अय्यूबसाहब को अपने पद को छोड़ना पडा और हुकूमत की बागडोर जनरल याह्या खान के हाथ में आई । उन्होने मार्शल लॉ तो जारी रखा, मगर सब दलों के नेताओ के साथ सुलह-शाति से फैसला करने के लिए कोशिश भी जारी रखी । वलीखा रिहा कर दिये गए । वह बादशाह खान से काबुल जाकर मिले और फिर इलाज के लिए यूरोप चले गए । बादशाह खान को विश्वास है कि जिस प्रकार का पख्तूनिस्तान उन्होने चाहा था, वह शीघ्र ही उन्हें मिल जायगा और अगर न दिया गया, तो याह्याखान का भी वही हाल होगा जो, अय्यूबखा का हुआ है ।

इस दरम्यान हमारी सालगिरह समिति का काम बहुत आगे बढ गया था । गुजरात, आध्र, मैसूर, राजस्थान और महाराष्ट्र मे बादशाह खान की सालगिरह मनानें के लिए प्रादेशिक समितिया बन गई थीं । राष्ट्रीय समिति का सवि-धान भी तैयार हो गया था और २० फरवरी, १९६९ को वह 'इडियन सोसायटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट' के अतर्गत रजि-स्टर करवा दी गई थी । हमारी सरकार ने थैली में दी जाने

वाली रकमो को इन्कमटैक्स से मुक्ति दे दी थी।

अब जगह-जगह से बादशाह खान के दौरे के निमत्रण आने लगे। इनको क्या जवाब देना, यह एक वडा विकट प्रश्न हो गया था। बादशाह खान कव यहा आयगे, कितने समय रहेगे, कहा-कहा जाना चाहेगे, किसके मेहमान वनेगे और कहा ठहरेगे, इन सव चीजो का हमे पता नही था। इस-लिए हमारी समिति ने फैसला किया कि हममे से दो आदमी समिति के प्रमुख का निमत्रण-पत्र लेकर वादशाह खान के पास जाय और इन सब चीजो के वारे मे उनके विचार समझकर आवे। चुनाचे २४ मई १९६९ को हमारी समिति के मत्री बाकर अली मिर्जा और मै हवाई जहाज से काबुल रवाना हुए। उसी शाम हम ६४ मील मोटर-सफर के बाद जलालाबाद वादशाह खान के पास पहुच गये।

इस बीच 'नेहरू अवार्ड फौर प्रोमोटिग इटरनेशनल अण्डरस्टैंडिग कमेटी' ने इस साल के पारितोपिक के लिए वादशाह खान को चुना था, लेकिन जलालावाद पहुचने पर हमे पता लगा कि हमारे किसी कुशल कूटनीतिज्ञ ने वादशाह खान के कान मे यह भी फूक दिया था कि यह पारितोपिक उन्हे अफगानिस्तान में भी पहुचा दिया जा सकता है। इसके लिए उन्हे हिन्दुस्तान आने का कष्ट उठाने की विशेष आव-श्यकता नही। एक और बात भी कावुल-स्थित हमारे कुशल कूटनीतिज्ञो ने ऐसी की कि जिसके फलस्वरूप बादशाह खान को लगने लगा कि इस पारितोषिक को उन्हे स्वीकार करना भी चाहिए कि नही।

एक दिन जलालाबाद रहकर २७ तारीख को हम अपने निमंत्रण का स्वीकृति-पत्र लेकर वहा से लौटे और उसी दिन वापस आ गये। बादशाह खान ने जो पत्र हमें दिया वह यह था

जलालाबाद
२७ ५ ६६

"प्रिय जयप्रकाशजी,

२२ मई, १९६९ को आपकी समिति की ओर से गांधी-जन्म-शताब्दी के अवसर पर हिन्दुस्तान आने का निमत्रण बाकर अली मिर्जा और प्यारेलाल ने मुझे दिया है। मै इसके लिए आपको धन्यवाद देता हूं।

मुझे तो इससे अच्छी चीज क्या लग सकती है ? आप जानते है कि मेरा यह दृढ विश्वास है कि सत्य और अहिसा का जो रास्ता हमे गाधीजी ने बताया है और जिसपर चलने का मैने जीवन-भर विनम्र प्रयत्न किया है, उसके सिवा जगत के छुटकारे का कोई रास्ता ही नही। आप ठीक कहते है, हिन्दुस्तान की जनता का आज भी मुझपर वैसे ही हक है, जैसे कि गाधीजी के जीवनकाल मे था।

मै एक खुदाई खिदमतगार हू और खुदाई
नजदीक तो सारी मानव-जाति भाई ही है
सेवा उसका मजहब होता है। इसलिए
को खुशी से स्वीकार करता हूं
आगामी गाधी-जन्म-शताब्दी

अपने परिचय को फिर से ताजा करने की राह देखूगा ।

आपका,

—अब्दुल गफ्फार

बादशाह खान को यहा लाने के लिए एक खास विमान सरकार की तरफ से भिजवाने की और बादशाह खान और उनके साथ अगर कोई साथी आनेवाले हो, तो उनके लिए हवाई जहाज के टिकट भेजने की व्यवस्था हम करना चाहते थे, किन्तु बादशाह खान ने दोनो से इन्कार कर दिया और अपने ही खर्च से तेहरान के रास्ते बम्बई होकर पहली अक्तूबर को सवेरे ९ बजे पालम हवाई अड्डे पर पहुचे । उनके साथ उनकी पोती, गनी की लड़की, जरीना भी थी । हमारी सरकार ने उनके रिश्तेदार, महम्मद यूनस को, जो अल्जीरिया मे हमारे राजदूत है, बुलाकर उनके निजी मत्री के तौर पर उनके साथ लगा दिया ।

इतने लम्बे हवाई सफर के बाद पालम से अपने मुकाम पर पहुचते-पहुचते वह बेहद थक गये थे, फिर भी सीमा-प्रात के पख्तून भाइयो की एक सभा के आगे अपनी कोठी के ही अहाते मे उन्होने सख्त धूप होने पर भी कोई पौन घटे तक अत्यन्त भावना-पूर्ण भाषण दिया । लोगो को रोकने की कोशिश करने के बावजूद मुलाकातियो का ताता लगा ही ही रहा । उसी शाम उनको राजघाट पर 'गाधी-दर्शन' का उद्घाटन करना था, किन्तु वहा जाने के समय डाक्टरो ने उनकी जाच की तो जाने से मना कर दिया और मजबूरन बादशाह खान को रुक जाना पडा । दूसरे दिन शाम

को रामलीला मैदान मे उन्होने हिन्दुस्तान आने के बाद पहली बार आम सभा मे भाषण दिया। जनता के उत्साह का पार न था। दो लाख से अधिक लोग उस विराट सभा में मौजूद होगे। पिछले दिन वह राजघाट नही जा सके थे इससे अनिश्चितपन का वातावरण पैदा हो गया था, वरना भीड़ और भी अधिक होती।

सभा मे जाते और वहा से लौटते समय गहरी शाम होने पर भी उनके रास्ते के दोनो ओर हजारो स्त्री, पुरुष और बच्चों का जमघट था। जिस निस्तब्ध शाति के साथ इस विराट मानव—समुदाय ने उनके भाषण को सुना, वह अनुपम थी। (भाषण के लिए परिशिष्ट देखिये) इतना ही नही, बल्कि इससे भी अधिक, उनका वह भाषण था, जो उन्होने हमारी ससद के दोनो सदनो की सयुक्त सभा मे २४ नवम्बर १९६९ को दिया था। हमारी ससद के इतिहास मे यह पहला ही अवसर था जबकि ससद के दोनो सदनो की सयुक्त बैठक के आगे इस तरह भापण देने के लिए एक ऐसे व्यक्ति को बुलाया गया जो, किसी राष्ट्र का सर्वोपरि सत्ताधारी नही था। हमारे राज्यसभा के अध्यक्ष (भारत के उपराष्ट्रपति) और उपाध्यक्ष ने स्वागत और धन्यवाद करते समय जो श्रद्धाजलि उन्हे अर्पण की, वह एक अलग ही हैसियत रखती है। पुराने-से-पुराने ससद के सदस्यों का कहना है कि आजतक किसी भी विदेशी विशिष्ट व्यक्ति का ऐसा हृदय-स्पर्शी स्वागत नही हुआ था, जैसाकि बादशाह खान का हुआ। ससद सदस्यो से उन्होने खूब दिल खोलकर बाते की और ऐसी खरी-खरी सुनाई कि और कोई नही सुना

सकता था। इसका उन्हे पूरा हक भी था। उनका भाषण हमारे लिए आने वाले सनय मे अधेरी रात मे एक दीप-स्तम्भ की तरह रहेगा।

· ७

उपसंहार

तेईस साल के वियोग के बाद इस तरह बादशाह खान को हिन्दुस्तान लाने का हमारा स्वप्न सफल हुआ। मगर ठीक उनके आने के समय गाधीजी के गुजरात मे गाधीजी की जन्म-शताब्दी के अवसर पर ही हिन्दू-मुस्लिम फसाद का दावानल धधक उठा और वहां के लोग अपनी मानवता को खोकर पिशाच और दानवो से भी नीचे उतर आये।

बादशाह खान हमसे कह सकते थे कि हिन्दुस्तान के स्वाधीनता-युद्ध के दरमियान मैंने १५ साल अग्रेजो के जेल में काटे और हजारो खुदाई खिदमतगारो ने ऐसे अत्याचार सहन किये कि उनका हाल सुनकर रोगटे खडे हो जाते है। आपने अपने लिए सत्ता और अधिकार का सौदा करने के लिए हमे भेडियो के आगे डाल दिया। स्वाधीनता के बाद आपके किये के फलस्वरूप मुझे फिर १५ साल पाकिस्तानी जेलों मे काटने पड़े और वहा से मरते-मरते बचकर आपके पास आया तो आपने इस पाशविक हत्याकाण्ड से मेरा सत्कार किया, तो जाओ तुम अपने रास्ते और पाओ अपने किये का फल।

मै तुम्हारे इस अभिशप्त देश में पाव भी नही रखना चाहता। पर इस महान आत्मा ने जहर की इस आखिरी घूट को भी पी लिया और हमसे कहा, "आपका मेरे प्रति और मेरा आपके और गाधीजी के प्रति प्रेम मुझे यहा खीच लाया है। मै देखने आया हू कि स्वाधीन भारत की वावत गाधीजी के स्वप्नो को आपने कहातक सिद्ध किया है। कहातक आप उनके रास्ते पर चल रहे है। मै पाता हू कि आपने इतनी जल्दी गाधीजी और उनके सवक को और उनकी जन्म-शताब्दी के पुण्य अवसर पर भुला दिया है, यह घोर पाप किया है। मै आपके इस पाप का किफारा (प्रायश्चित) करने को यहा आया हू, क्योकि आप मेरे है और मै आपका हू।"

प्रायश्चित के रूप मे उन्होने अपने अस्सीवे वर्ष में जबकि उनका शरीर ३० साल के कष्ट-सहन के फलस्वरूप जर्जरित हो रहा था, मित्रो और डाक्टरो के अनुरोध के बावजूद तीन रोज का उपवास किया। जबसे वह यहा आये है, रात-दिन, अक्सर तीसरे दर्जे मे रेल-सफर करके, वह हमे जगाने के लिए अपना खून-पसीना एक कर रहे है। उनकी कोशिश है कि हो सके तो अब भी हमे गाधीजी के रास्ते पर वापस ले आये। वह पूछते है कि क्या कारण है कि स्वाधीनता के बाईस साल बाद हम अपने लिए पर्याप्त अन्न भी पैदा नही कर सके और भिखमगो की तरह भिक्षा-पात्र लेकर दूसरे देशो से भीख मागते फिरते है? उन्हे आश्चर्य होता है कि हम नाम तो समाजवाद का लेते है, लेकिन हमारे

देहातो मे गरीब पहले से भी अधिक गरीब हो गये है। शहरो मे आएदिन गगन-चुम्बी भवन खडे होते जाते है, मगर गरीब की झोपडी मे दीया भी नही जलता! क्या इसीका नाम समाजवाद है? वह हमे बताते है कि समाजवाद उसे कहते है, जिसमे सबको पर्याप्त खाने-पीने को मिले और उनकी सब प्राथमिक आवश्यकताए पूरी हो, पीछे भले ही कोई भोग-विलास का नाम ले। वह कहते है कि अगर समाजवाद जनता को सत्य और नीति के रास्ते पर चलना नही सिखाता, नेकी के रास्ते पर चलने मे उसकी मदद नही करता, अगर हुकूमत शराबबदी की जगह शराबखोरी की आमदनी से अपना खजाना भरने की कोशिश करती है, हाकिम नेक और सादा जिन्दगी की जगह ऐशोइशरत के गुलछर्रे उडाते दिखाई देते है, तो वह समाजवाद नही, उसकी हँसी उडाना है।

वह सवाल करते है कि क्यो चारो तरफ हमारे देश मे झगडे और फसाद की ज्वाला भभकती नजर आती है? और बताते है कि इसका कारण यह है कि देश के नेता हुकूमत मे पैसे और अधिकार की खातिर जाते है सेवा के लिए नही। जहा सेवा ही ध्येय हो, वहा झगडो को स्थान नही रहता। हमारी आम जनता से वह कहते है कि इसका इलाज आपके ही हाथ मे है। आप जम्हूरियत है। जम्हूरियत मे जनता ही हुकूमत की मालिक होती है। हुकूमत उसकी नौकर होती है। आपके पास वोट है, आप जिसे चाहे गद्दी पर बिठा सकते है और गद्दी से उतार सकते है। क्यो आप अपनी वोट

पैसेवालो के आगे बेच देते है ? क्यों अपनी दशा को सुधारने के लिए इसका इस्तैमाल नही करते ? आप जागो ! सब मिलकर एक होओ। केवल नि स्वार्थ और सेवा-वृत्ति वाले चरित्रवान लोगो को गद्दी पर बिठाओ।

आखिर में वह हमसे कहते है कि आज राष्ट्रीयता का युग है। राष्ट्रीयता का आधार देश होता है, न कि मजहब। और मजहब तो आपस मे प्रेम सिखाता है, न कि नफरत करना। किन्तु स्वार्थी लोग मजहब का दुरुपयोग नफरत और फसाद फैलाने मे करते है। ऐसे लोगो से बचो।

राष्ट्रीयता की बुनियाद कौमी एकता होती है और एकता का आधार न्याय और समान अधिकार होते है। अगर अल्पमत जाति पर शक करके उसके वाजबी अधिकार से उसे वचित कर दिया जाय या उसे दबाकर रखा जाय तो बहुमत जाति की भले ही तात्कालिक शक्ति बढ जाय, मगर देश कमजोर होगा, क्योकि एक कडी कमजोर होने से सारी जजीर कमजोर हो जाती है।

हमारे देश के मुसलमानो मे आज राष्ट्रीयता की कमी पाई जाती है, क्योकि उनमे ऐसे कोई नेता पैदा नही हुए, जो नि'स्वार्थ भाव से उनकी सेवा में अपना तन, मन, धन लगाने को तैयार हों। इसलिए वे आज पिछडे हुए है। उनमें राष्ट्रीयता का भाव जाग्रत करके, उनका सगठन करके, उनमे समाज-सुधार दाखिल करने, उन्हे देश-प्रेम की लौ लगाने, इसके लिए वह खुदाई खिदमतगारो की एक जमात यहा खडी करना चाहते है, जिसमें हिन्दू, मुस्लिम, सिख, पारसी, ईसाई सब

मिलकर गरीबो की सेवा करे, दलित का रक्षण करे, भाई-चारे का वातावरण पैदा करके हमारी राष्ट्रीयता की बुनियाद को सुदृढ बनावे।

गाधीजी ने एक वार फ्रटियर के खुदाई खिदमतगारो से कहा था कि वह उस दिन की राह देख रहे है, जब खुदाई खिदमतगार सारे हिन्दुस्तान मे फैल जायगे और देश के सामने वीर की अहिसा की मिसाल रखेंगे। गाधीजी के उस स्वप्न को आज बादशाह खान सिद्ध करना चाहते है। हिन्दुस्तान के बटवारे के बाद एक वार गाधीजी को एक ऐसी खबर मिली थी, जिससे उन्हे लगा कि खान-भाइयो की जान खतरे मे है। तब उन्होने बादशाह खान को एक पत्र मे हिन्दुस्तान मे आने का निमत्रण दिया था और लिखा था, "मै चाहता हू कि आप खुल्लमखुल्ला यहा आकर अहिसा के शस्त्र का विकास मेरे साथ अथवा मेरे विना करने मे लग जाय। मगर मेरे विना वह कैसे हो सकता है, यह मै नही जानता।" जो चीज उस समय गाधीजी की कल्पना से बाहर थी, वही चीज बादशाह खान उनकी अनुपस्थिति मे आज हमारे बीच कर रहे है। अहिसा के शस्त्र का विकसित प्रयोग वह हिन्दू-मुस्लिम-समस्या और हिन्द-पाकिस्तान की समस्या को हल करने के लिए आज हमसे करवाना चाहते है।

२७ जुलाई १९४७ को जब बादशाह खान दिल्ली रेलवे स्टेशन पर गाधीजी से अतिम विदाई लेने गये थे, तब गाधीजी ने उनसे कहा था कि जाओ और पाकिस्तान को, जैसा उसका नाम है वैसा 'पाक' बनाओ।" यह काम उन्होने

लगभग कर दिखाया है। बंटवारे के बाद गाधीजी ने आशा प्रकट की थी कि "देश के टुकडे तो हुए मगर दिल के टुकडे न हो।" आज पहली बार पाकिस्तान मे एक ऐसी हुकूमत बनने की सभावना है कि जिसका मूल और अस्तित्व हमारे प्रति द्वेष और धर्माधता मे ही नही है। इस अवसर पर अगर हम अपने घर को सवार सके, तो फिर वह स्वप्न जिसके लिए गाधीजी ने साधना की थी, सफल हो सकता है।

हम सब जानते है कि पाकिस्तान मे एक दल ऐसा है, जो शुरू से कहता आया है कि हिन्दू-मुस्लिम, यह दो भिन्न कौमे है। इनका कभी मेल नही हो सकता। इसी आधार पर उन्होने हिन्दुस्तान का बटवारा मागा और करवाया। सवाल यह है कि क्या आज हम अपने आचरण से इस दल को यह कहने का मौका देगे कि जो वह कहते थे, वही ठीक है? क्या हम उनकी उस दलील का समर्थन करेगे, जिसके आधार पर हिन्दुस्तान का बटवारा हुआ और जिसको न मानने पर बादशाह खान जैसे लोगो को उन्होने हिन्दू' और 'काफिर' कहना शुरू किया था, या कि हम सिद्ध कर देंगे कि हिन्दुस्तान के सात करोड मुसलमान हमारे ही भाई, हमारे राष्ट्र के अविभाज्य अंग, है?

दिया है कि "ए-बी-सी" (अफगानिस्तान-बर्मा-सीलोन) तिकोने के अतर्गत सब देशो को उनके अपने और जगत के कल्याण के लिए एक दिन एक सूत्र मे गुथ जाना ही है।

हर शुभ काम के लिए एक शुभ घडी, मगल महूर्त होता है। वह निकल जाय तो काम विगड़ जाता है। वादशाह खान के जीतेजी ही यह महान कार्य हो सकता है। अगर हमने इस स्वर्ण अवसर को हाथ से जाने दिया तो फिर ऐसा अवसर सौ साल तक भी हमारे हाथ आने का नही।

●

परिशिष्ट

: १ :

खुदाई खिदमतगार आन्दोलन : उद्देश्य और सिद्धान्त

हाल ही मे कावुल मे पश्तो भाषा की एक छोटी-सी किताव छपी है, जिसमे वादशाह खान ने खुदाई खिदमतगार आन्दोलन के उद्देश्यो को फिर से स्पष्ट करते हुए वे उसूल या सिद्धान्त भी वताये है, जिनपर इस आन्दोलन का आधार है। भूमिका के रूप मे कुरान की एक आयत दी गई है, जिसका अर्थ इस प्रकार है

"तुम्ही लोगो मे से एक गिरोह ऐसा पैदा होगा, जो लोगो को नेकी की राह पर ले चलने के लिए राजी करेगा और उनके दिलो मे वह जज्वा पैदा करेगा, जिससे वे वुराई छोडकर अच्छाई की तरफ वढेगे। यही वे लोग है, जिन्हे पूरे तौर पर जिन्दगी का असल मकसद हासिल हो सकेगा।"

वादशाह खान इसी वात को मानकर चले है कि भगवान निर्गुण है, इसलिए किसी भी व्यक्ति से वह अपनी कोई निजी सेवा कराना नही चाहता। इसलिए खुदा के वन्दो की खिदमत करना ही खुदाई खिदमतगार की निगाह मे खुदा की असल खिदमत होगी। वह विना किसी इनाम या मेहनताने के वन्दो की खिदमत करेगा। खुदाई खिदमतगार नामक आन्दोलन एक सामाजिक और नैतिक आन्दोलन है। इसके वानी खान अव्दुल गफ्फार खान है। इस आन्दोलन की नीव सन् १६२६ मे उत्तमानजई नामक गाव मे डाली गई थी। इसके उसूल या सिद्धान्त निम्न प्रकार है

१ कोई भी खुदाई खिदमतगार अपनी जुवान या हाथ से किसी भी प्राणी को कोई कष्ट नही पहुचायगा और जो काम वह अपने लिए पसन्द नही करेगा, वह दूसरो के लिए भी नही करेगा।

२ कोई भी खुदाई खिदमतगार न तो किसीकी वुराई करेगा, न झूठ वोलेगा।

३ हर खुदाई खिदमतगार, जहा कही भी वह होगा, हर जुल्म और ज्यादती का मुकावला अपनी नेकी से करेगा और अपने मुखालिफ को प्यार-मुहब्बत से जीतने की कोशिश करेगा।

४ कोई खुदाई खिदमतगार जुल्म मे शरीक नही होगा, वल्कि हर मजलूम का साथ देगा।

५ हर खुदाई खिदमतगार किसी भी तरह की पार्टीवाजी से अलग रहेगा। वह न तो किसीसे वदला लेगा, न किसीसे कोई वैर-भाव रखेगा।

६ हर खुदाई खिदमतगार समाज को नुकसान पहुचानेवाले गलत रस्मो-रिवाज छोड देगा और उन्हे जड से उखाड फेकने के लिए लगातार जिहाद करता रहेगा।

७ हर खुदाई खिदमतगार विल्कुल सादा जीवन वितायगा।

८ हर खुदाई खिदमतगार अपनी हक और हलाल की कमाई पर जिन्दा रहेगा। किसीका हक नही मारेगा और निठल्ला नही वैठेगा।

९ हर खुदाई खिदमतगार दिलोजान से अपने देश तथा समाज की सेवा करेगा। वह मान या पद के लालच मे आकर अपने देश या समाज पर कोई आच न आने देगा। देश और समाज के लिए वह हर वलिदान के लिए हर वक्त तैयार रहेगा।

१० हर खुदाई खिदमतगार सर्वसम्मति से किये गए अपनी जमात के हर फैसले और हुक्म का पावद रहेगा और ईमानदारी के साथ उसका पालन भी करेगा।

खुदाई खिदमतगार वनने के वाद जो प्रतिज्ञा की जाती हे, वह इस प्रकार है

"मै खुदा को हाजिर नाजिर मानकर वादा करता हू कि मै अपने सगठन के प्रति वफादार रहूगा और ईमानदारी के साथ ऊपर लिखे दस उसूलो की पावदी करुगा।"

कुरान शरीफ की एक अन्य आयत के साथ पुस्तक समाप्त की गई है, जिसका भावार्थ यह है

"खुदा पाक उस कोम की हालत तवतक नही वदलता, जवतक कि वह कौम खुद अपनी हालत वदलने की कोशिश नही करती।"

: २ .

बादशाह खान का पश्चिमी पाकिस्तान के उच्च न्यायालय में लिखित बयान

जनावेमन,

यह दावा किया जाता है कि पाकिस्तान इस्लामी खयालात पर मुनहसिर एक जम्हूरियत राज है। हदीस शरीफ (इस्लाम का एक पवित्र ग्रथ, जिसमे पेगम्बर के उपदेश है) मे आया है कि एक जालिम और जाबिर शासक के सामने सच-सच कह देना सबसे बडा जिहाद है। मैं रसूल का खिदमतगार हू, इसलिए रसूल का यह हुक्म मैने हमेशा अपने सामने रखने की कोशिश की है। आपके सामने यह हदीस बयान करने का मकसद भी यही है कि मेरे मुकदमे का फैसला करने वक्त यह आपके सामने रहे। मेहरबानी करके मुझे इजाजत दीजिए कि मै अपने मुकदमे, अपने काम, अपनी जिन्दगी और अपनी सरगर्मियो के बारे मे कुछ हकीकते इस ऊची अदालत के सामने पेश कर सकू।

मेरी शुरू की जिन्दगी

मैंने जब सन् १९०७ मे मैट्रिक का इम्तिहान दिया, तो मेरे पिता की यह इच्छा थी कि मैं इग्लैड जाकर इजीनियरिंग की पढाई करू। हम दो भाई है। हममे से एक, जो अब डॉक्टर खानसाहब के नाम से मशहूर है, उस वक्त इग्लैड मे डॉक्टरी पढ रहे थे। इस तरह बेटो मे सिर्फ मै ही घर पर था। मेरी मा मुझे इग्लैड भेजने को तैयार नही थी। लिहाजा मैंने मा की खुशी की खातिर बाहर जाने का खयाल छोड दिया, क्योकि मै जानता था कि मा को खुश रखना ही सबसे बडा गुण है।

उस जमाने मे मेरी कौम अधेरे मे थी। हमारे इलाके मे स्कूल नही थे। अगर कोई थे भी, तो मुल्ला लोग उन स्कूलो मे तालीम दिलाने के खिलाफ थे। उनका खयाल था कि ये स्कूल अग्रेजो ने कायम किये है

और यहा तालीम लेना पाप है।

खिलाफत आन्दोलन

इसलिए तालीम फैलाने के लिए अपने साथियो की मदद से मैंने एक मुस्लिम स्कूल खोलने का आन्दोलन शुरू किया। वाद मे हम कई स्कूल खोलने मे कामयाब हुए। इसी दौरान खिलाफत-आन्दोलन शुरू हो गया। इस आन्दोलन के सिलसिले मे मुझे तीन साल सख्त कैद की सजा दी गई। उन दिनो मैंने महसूस किया कि हालाकि हमारी तालीमी हालत कुछ सुधरी है, लेकिन हमारी समाजी हालत वैसी ही खराब है।

खुदाई खिदमतगार

कुछ वक्त वाद मैने खुदाई खिदमतगार आन्दोलन शुरू किया। यह एक खास किस्म की समाजी और इस्लामी तहरीक थी और इसका मकसद था उन बुरी रस्मो और बुरे रिवाजो को जड से उखाडना, जो उस वक्त हमारी कौम मे मौजूद थे। लेकिन अभी आन्दोलन शुरू किये कुछ ही महीने हुए थे कि सरकार ने हमे गिरफ्तार कर लिया। यह वात मेरे लिए वडी तकलीफदेह थी। फिर सरकार ने इस आन्दोलन को कुचलने के लिए ऐसे वहशियाना उपायो से काम लिया कि मुझे यहा उनका जिक्र करते भी शर्म महसूस होती है।

इसी तरह कई वरस बीत गये।

सन् १९३० मे मुझे गुजरात स्पेशल जेल मे नजरबन्द कर दिया गया। वह जेल उस वक्त सिर्फ पजाब के राजनैतिक कैदियो के लिए थी। वहा हमारे एक या दो पुराने साथी हमसे मिलने आये और उन्होने उन जुल्मो की दर्दनाक कहानिया सुनाई, जो अग्रेजी हुकूमत हम पर ढा रही थी। वह सब सुनकर हमे वडा सदमा पहुचा और हमने आपस मे सलाह-मशविरा करके वाद मे अपने दोस्तो से कहा कि वे दिल्ली, लाहौर और शिमला जाकर मुस्लिम लीग और दूसरी मुस्लिम जमातो के लीडरो से मिले। उन्हे हम अपने मुसलमान भाई समझते थे। हमें उनसे वडी उम्मीद थी कि ऐसे हालात मे वे हमारी मदद करेगे। मगर

कुछ दिन वाद मेरे दोस्तो ने वापस आकर बताया कि मुस्लिम लीग हमारी मदद के लिए तैयार नही है, क्योकि हमारी लडाई अग्रेजो के खिलाफ है और मुसलमान लीडर अग्रेजो से लडाई छेडने के हक मे नही है।

काग्रेस से गठजोड

इसके वाद हमारे साथी काग्रेस के पास पहुचे। काग्रेसी लीडरो ने उनसे कहा कि अगर हम काग्रेस का साथ दे, तो वे भी हमारी मदद करने के लिए तैयार हो जायगे। ये थे वे हालात, जिनमे हमने काग्रेस से गठजोड किया और इस तरह अग्रेजो पर शक करने और यकीन न रखने की वजह से हमारा समाजी आन्दोलन एक राजनैतिक आन्दोलन वन गया। लेकिन अभी भी इसमे और मुल्क के दूसरे राजनैतिक आदोलनो मे वडा फर्क था। हमारा आन्दोलन राजनैतिक हो जाने पर भी हममे अपनी मजहवी और रूहानी खूबियो के अलावा समाजी और माली सुधारवाली खासियते वरकरार रही।

मैने उन हालात का जिक्र किया है, जिनकी वजह से हम काग्रेस मे शामिल हुए। यह जिक्र इसलिए किया है, क्योकि पजाब के कुछ अखवार आज भी हमे वदनाम करने मे लगे हुए है और हमे काग्रेसी कह-कहकर हमारे बारे मे गलतफहमिया फैला रहे है। गलती पर हम थे या मुस्लिम लीग, इसका अन्दाजा लगाने के लिए इन हकीकतो पर पूरी तरह से गौर करने की जरूरत है। हम अकेले ही अग्रेजो का मुकावला नही कर सकते थे। हमे मदद की जरूरत थी और उन हालात मे, जव कि मुस्लिम लीग और मुसलमान लीडरो ने मदद देने से साफ इन्कार कर दिया था, हम काग्रेस से मिल जाने के सिवा और कौन-सा रास्ता चुन सकते थे ?

नून से मुलाकात

सन् १६३१ मे जव गाधी-अर्विन-समझौता हुआ, तो मुझे और मेरे दूसरे साथियो को रिहा कर दिया गया। इसी साल के आखिर मे शिमला मे काग्रेस वर्किंग कमेटी की वैठक हुई। मैने भी उसमे हिस्सा लिया।

शिमला मे कॉलेज के एक छात्र ने हमे सेसिल होटल मे दोपहर के खाने पर वुलाया। उस दावत मे सर फीरोजखां नून भी मौजूद थे। वह उन दिनो पजाव की वज़ारत मे थे। सर फीरोजखा नून ने मुझसे कहा कि हमने काग्रेस मे शामिल होकर उन्हे धोखा दिया है। मैंने उन्हे वताया कि अग्रेज हमे कुचलना चाहते थे और चूकि हम अकेले उनके मुकावले के काविल नही थे, इसलिए हमारे पास इसके सिवा और कोई चारा ही न था। मैने उनसे यह भी कहा कि सवसे पहले हमने मुस्लिम लीग से ही मदद मागी थी। हम मुस्लिम लीगी लीडरो को अपना मुसलमान भाई समझते थे और हमे उम्मीद थी कि वे हमारी मदद जरूर करेंगे। लेकिन जव उन्होने हमारी मदद करने से इन्कार कर दिया, तो हमने काग्रेस की तरफ हाथ वढाया। अगर सर फीरोजखा नून और दूसरे मुसलमान लीडर मुसलमानो की तवाही नही चाहते, तो अब भी कोई नुक्सान नही हुआ है। पजाव के मुसलमानो और उनके नेताओ को हमारे साथ मिलकर चलना चाहिए। यह सच है कि हम अग्रेजो की गुलामी से तग आ चुके हैं और आजादी चाहते हैं। अगर मुसलमान लीडर आजादी की जग मे शामिल होने के लिए तैयार हो, तो हम भी महात्मा गाधी को छोडने और काग्रेस से इस्तीफा देने को तैयार हैं। मैंने सर फीरोजखां नून से कहा कि उस हालत मे उन्हे सरकारी ओहदा छोड देना पडेगा। नूनसाहव ने कहा कि वह अपने साथियो से मशविरा करके इस वारे मे जवाव देंगे। उस जवाव का आज भी सिर्फ इन्तजार ही है।

सन् १९४० मे हिन्दू-मुस्लिम दगो के दौरान पटना मे मेरी नूनसाहव से भेट हो गई। वह उस समय यूनुससाहव के होटल मे थे। उन्होने मुझसे पूछा कि अव मेरे विचार क्या हैं? मैंने कहा कि मेरा जवाव अव भी वही है, जो मैं पहले दे चुका हू।

पाकिस्तान की मेरी कल्पना

मैं पाकिस्तान का कभी भी विरोधी नही था, लेकिन पाकिस्तान के वारे मे मेरी अपनी कल्पना पाकिस्तान से कुछ मुख्तलिफ थी। मुसल-

मानो के वतन का मेरे दिमाग मे जो नक्शा था, उसके मुताबिक पजाव और वगाल का वटवारा किसी तरह भी मुमकिन नही था। इसके अलावा मैं यह भी मानने को तैयार न था कि वहुत-से मुसलमान ईमानदारी से यह माग कर रहे थे कि मुसलमान अवाम की वेहतरी के लिए पाकिस्तान वना दिया जाय। मैं समझता हू कि उनमे से ज्यादातर अग्रेजो के पिट्ठू थे। उन्होने कभी अपनी जिन्दगी मे मुसलमान जनता की या इस्लाम की खिदमत नही की थी और न इन मकसदो के लिए कोई कुरवानी दी थी। मेरा यकीन यह था कि ये लोग पाकिस्तान और इस्लाम के नाम पर जनता को गुमराह करना चाहते है। ये लोग सिर्फ अपने लिए ही पाकिस्तान हासिल करना चाहते थे और उस मकसद मे ये कामयाव भी हो गये। मेरी राय मे हिन्दुओ और मुसलमानो की लडाई मजहवी नही, माली थी और मेरे खयाल मे, अग्रेजो ने इस लडाई को और भी खतरनाक वना दिया था। मुझे यकीन था कि अग्रेजी हुकूमत का तख्ता उलटने के वाद जव मुल्क आजाद होगा और कौमी हुकूमत वनेगी, तो सारी जिम्मेदारी हमारे कधो पर आ पडेगी। इसके वाद आहिस्ता-आहिस्ता माहौल वदल जायगा और हमारे आपसी सम्वन्ध अच्छे हो जायगे। पर अगर उस वक्त के हालात अच्छे न हुए और यह लगा कि हमे इत्मीनान नही हुआ है, तो फिर हम हिन्दुओ से अलग हो जायगे। और हम ऐसा कर सकते थे। काग्रेस सूवो की मुकम्मिल आजादी का उसूल मजूर कर चुकी थी और सूवो को यह हक हासिल था कि अगर उनकी जनता मरकजी हुकूमत से अलग होने का फैसला कर ले, तो वे सूवे मुकम्मिल तौर पर खुदमुख्तार (राज्य) वन जायगे।

शिमला-कान्फ्रेंस

सरहदी सूवे मे मुसलमान आजाद है। हमारा हिन्दुओ से कोई झगडा नही था। काग्रेस मे हम जो कुछ कहते थे, उसे मजूर कर लिया जाता था। इस तरफ से हमे किसी मुखालिफत का सामना नही करना पडा, क्योकि वे (काग्रेसी नेता) यह वात मानते थे कि हमने आजादी की जग मे हर मुमकिन कुरवानी दी है और मुल्क की आजादी के लिए

हमेशा ही सबकुछ लुटा डालने को तैयार रहे है। शिमला-कान्फ्रेंस मे जब एक बुनियादी मसले पर सख्त इख्तिलाफ पैदा हुआ, तो मैने सरदार अब्दुर्रब निश्तर से भेंट की और उनसे कहा कि महात्मा गाधी मुसलमानो को उनके जायज हक से भी ज्यादा देने को तैयार है, बशर्ते कि जिन्ना-साहब काग्रेस की मुखालिफत करना छोड दे। मै खुद मुसलमानो की सारी मागे पूरी कराने और उनके हको की गारण्टी देने को तैयार था। इसपर सरदार निश्तर जिन्नासाहब की राय लेने गये और उन्हे मनाने की भी कोशिश की, मगर वह उन्हे राजी न कर सके और कान्फ्रेंस नाकाम रही।

भारतीय सघ

मिले-जुले हिन्दुस्तान मे दस करोड मुसलमान आबाद थे और मैं समझता था और अब भी समझता हू कि इतनी बडी तादाद को आसानी से दबाया नही जा सकता। मेरी राय थी कि कोई भी ताकत हमे मिटा नही सकती। पर अगर किसीने हमे गुलाम बनाने की कोशिश की और हमारे कानो मे इसकी भनक भी पड गई, तो फिर हम अलग हो जायगे। इसीसे मै यह समझता था कि अगर काग्रेस हमारी शर्ते मानने को तैयार हो जाय और इस बात का यकीन दिलाये कि हिन्दुस्तान की नई हुकूमत सोशलिस्ट जम्हूरियत कायम कर देगी, तो मुसलमानो को भारतीय सघ मे शामिल हो जाना चाहिए। इसीमे उनका फायदा था। मेरे नजदीक सोशलिस्ट जम्हूरियत के निजाम मे मुसलमानो के लिए सबसे बडा फायदा यह था कि वे कौम की शक्ल मे हिन्दुओ के मुकाबले मे गरीब तबको के थे। अगर काग्रेस ये शर्ते मानने को तैयार न होती, तो हम मुस्लिम आबादी वाले सूबो मे जरूरी फैसला करके सघ (फेडरेशन) से अलग हो जाते। मुझे अभी तक यही यकीन है कि इस तरह हम फायदे मे रहते, क्योकि इस तजवीज मे पजाब और बगाल के बटवारे का कोई सुझाव शामिल नही था। लेकिन मुस्लिम लीग के नेताओ ने मेरी इस तजवीज को गौर के काबिल ही न समझा और उन्होने मुझे हिन्दू समझ लिया।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान बनाये जाने के वक्त एक बेहद अफसोस-नाक खेल खेला गया। लाखो लोग अपने-अपने वतन छोडकर एक मुल्क से दूसरे मुल्क मे चले गये और हजारो बेकसूर लोगो को मौत के घाट उतार दिया गया। इतनी भारी तादाद मे लोगो के वतन छोडने से जो हालात पैदा हुए, उनसे निबटना सरकार के लिए कोई आसान बात नही थी। ज्यादातर लोगो के पास सिर छिपाने तक को जगह नही थी और कई तो कैम्पो की बदइतजामी की भेट चढ गये। कैम्पो मे आफतो और नाउम्मीदियो का बोलबाला था। लोगो को इलाज तक की सहूलियते नसीब नही थी और बीमारो व घायलो की देखभाल के लिए भी थोडे ही लोग आगे बढे थे। उन्ही दिनो एक साहब मुहम्मद हुसैन अत्ता मेरे मरकजी दफ्तर मे सरदरयाब पहुचे। वह सन् ४२ मे मेरे साथ जेल मे रह चुके थे। उन्होने मुझसे झगडना शुरू कर दिया और कहा कि आप अपने-आपको खुदाई खिदमतगार कहते है, तो आपको लाहौर जाकर शरणार्थियो का दुख-दर्द बटाना चाहिए। मैने कहा कि मै शरणार्थियो की खिदमत करने के लिए तैयार हू, मगर कोई मुझे खिदमत करने की इजाजत नही देगा। इसपर वह नाराज हो गये। मैने उन्हे राय दी कि वह लाहौर जाय और हमे खिदमत करने की इजाजत दिला दे। अगर वह इजाजत दिलाने मे कामयाब हो जाय और उसके बाद हम इन्कार करे, तो फिर उनका खफा होना या गुस्सा करना जायज होगा। वह मेरी सलाह मानकर लाहौर चले गये। मगर एक महीने बाद नाकाम लौट आये। उन्होने तसलीम किया कि मैने जो कुछ भी उनसे कहा वह बिल्कुल ठीक था। मुस्लिम लीग अब भी मुसलमानो मे हमारे खिलाफ आन्दोलन चला रही थी।

वजारत बनाने की तजवीज

पाकिस्तान बन जाने के बाद सर जार्ज कनिंघम हमारे सूबे के पहले गवर्नर मुकर्रर हुए। वह एक होशियार और चालाक अग्रेज अफसर थे, जिनकी गिनती मुस्लिम लीग के पक्के मददगारो और दोस्तो मे की जाती थी। आठ बरसो से वह मेरे सूबे के गवर्नर थे। कुछ वक्त तक सूबे के हालात का जायजा लेने के बाद उन्होने मेरे बेटे अब्दुल गनी की मार्फत मुझे पैगाम भेजा कि मै मुस्लिम लीगियो और खुदाई खिदमतगारो की एक मिली-जुली सरकार कायम करने के लिए राजी हो जाऊ। मैने उनसे कहा कि मुस्लिम-लीग इसके लिए कभी तैयार नही होगी। हमारा तो खिदमत करने मे यकीन था, जबकि मुस्लिम लीग अपने लिए ताकत और हुकूमत हासिल करना चाहती थी। कनिंघम की यह कोशिश नाकाम रही। मैंने गवर्नर को बताया कि अगर लीग कौम के फायदे के लिए काम करे, तो हम सरकार मे शामिल हुए बिना भी उसकी मदद को तैयार है। मगर हमे इस तरह की खिदमत का भी मौका नही दिया गया।

पख्तूनिस्तान

सन् १९४८ मे जब मै पाकिस्तान पार्लमेंट के इजलास मे पहली मर्तबा शामिल हुआ, तो मैंने ऐलान किया कि जो-कुछ होना था वह हो चुका। पाकिस्तान सबका साझा मुल्क है। अगर ताकतवर तबके को इस मुल्क की खिदमत करने की ख्वाहिश है, तो हम हर मुनासिब और जरूरी तरीके से उसके साथ हाथ बटायेंगे। मै सरकार पर किसी तरह के खर्चो का बोझ नही डालना चाहता था। मैने तजवीज की कि अपने खर्च हम खुद ही उठायेंगे, क्योकि हमे मुल्क की सच्ची खिदमत के सिवा और किसी चीज की ख्वाहिश नही है। मेरी तकरीर के बीच मे नवाबजादा लियाकतअली खा ने मुझसे पूछा कि पठानिस्तान से मेरा क्या मकसद है? मैंने जवाब दिया कि लफ्ज पठानिस्तान नही, पख्तूनिस्तान है और यह सिर्फ एक नाम है। उन्होने फिर पूछा कि नाम किस तरह का? इसपर मैंने जवाब दिया कि जिस तरह पजाब, बगाल और बिलोचि-

स्तान पाकिस्तानी सूवो के नाम है, उसी तरह यह भी पाकिस्तान के ढाचे के भीतर एक नाम है। हमे कमजोर करने के लिए अग्रेजो ने अपनी हुकूमत के जमाने मे हमारे लोगो को बाटा और हमारे इलाके का नाम तक मिटा दिया। हम अपने पाकिस्तानी मुसलमान भाइयो से दरख्वास्त करते है कि मेहरबानी करके उस वेइसाफी का तसफिया करें, जो अग्रेज लोग हमारे साथ करते रहे। पठानो को सगठित करे और हमे पजाव की तरह एक नाम दे। जब भी पजाब का नाम लिया जाता है, तो लोग समझ जाते है कि इसका मतलब वह इलाका है, जहा पजाबी बसते है। इसी तरह बगाल, सिध, बिलोचिस्तान से उन इलाको का नक्शा दिमाग मे आ जाता है, जहा बगाली, सिधी और बलोच आबाद है। हम भी सिर्फ इसी तरह का एक नाम पाकिस्तान के उन इलाको के लिए चाहते है, जहा पख्तून रहते है।

कायदे आजम से मुलाकात

इसके बाद मुझे कायदे आजम ने मुलाकात को बुलाया और हम खाने के बाद देर तक बातचीत करते रहे। मैने उनसे कहा, "आप अच्छी तरह जानते है कि हमारी तहरीक समाजी सुधार की तहरीक है। मगर अग्रेजो की नाजायज कार्रवाइयो और खराब पालिसियो की वजह से यह एक सियासी तहरीक बन गई है। अब जबकि मुल्क आजाद हो चुका है मेरी राय यह है कि हमारी कौम मे उस वक्त तक सियासी सूझ-बूझ पैदा नही हो सकती, जबतक वह समाजी तौर पर पिछडी हुई है। पिछडी हुई कौम मे जम्हूरियत नही पनप सकती।"

कायदे आजम खुश हुए। उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और कहा कि वह हर तरह की मदद देने के लिए तैयार है। हमारे बीच समझौता हो चुका था।

उम्मीद जाहिर की कि वे चर्खे वहुत जल्द मेरे पास पहुचा दिये जायगे। हम दोनो कौम की समाजी और माली तामीर के एक प्रोग्राम के मुताविक काम करने के लिए भी राजी हो गये थे। जब मै अपने सूवे मे पहुचा, तो मैंने ये सव वाते अपने साथियो के सामने रखी और उन सवने मेरी ताईद की। हमने अपने मरकजी दफ्तर मे कायदे आजम के स्वागत मे एक शानदार दावत देने का फैसला भी किया और यह तय हुआ कि उनसे उनके ऊचे ओहदे के काविल ही वर्ताव किया जाय। लेकिन मेरे सरहदी सूवे मे पहुचने के कुछ समय वाद वजारती कुर्सियो के पुजारियो और अग्रेजो को इस हकीकत का पता चल गया और उनमे खलवली मच गई। वे जानना चाहते थे कि यह सव कैसे हुआ। उन्हे खतरा था कि अगर कायदे आजम इस समझौते पर टिके रहे, तो फिर उन सवके लिए कोई जगह वाकी नही रहेगी। उन दिनो हमारे सूवे के सभी वडे-वडे औहदो पर अग्रेज जमे हुए थे। मैंने अपनी पार्लमिंट मे माग की कि पाकिस्तान मे गवर्नर और मुख्तलिफ महकमो के डायरेक्टर वगैरा के ऊचे औहदो पर अग्रेजो को न विठाया जाय। इस वात ने मरहूम लियाकत अली खा और सूवे के अग्रेज अफसर वहुत नाराज हुए। लिहाजा अग्रेजो और लीडरो ने आपस मे एक होकर मेरे साथ हुए कायदे आजम के समझौते को तोडदेने की साजिश की।

कायदे आजम का सरहदी दौरा

इसी वीच सर ए० डी० एफ० डडास को सर जार्ज कनिंघम की जगह सरहदी सूवे का गवर्नर मुकर्रर किया गया। जव उन्हे कायदे आजम से हुए मेरे समझौते का पता चला, तो उन्होने खासतौर से अपने एक दूत को हवाई जहाज से कराची भेजा और कायदे आजम पर जोर डलवाया कि वह किसी भी सूरत मे खुदाई खिदमतगारो की दावत कवूल न करे, क्योकि इस तरह इनकी साख वढ जायगी।

लिहाजा जव कायदे आजम सरहदी सूवे के दौरे पर आये, तो हमे उनसे मिलने का कोई मौका नही दिया गया। मुस्लिम लीगियो ने आपस मे साजिश कर ली और उनमे से जो भी कायदे आजम से मिला, उसने

उन्हे यही वताया कि हम वेहद खतरनाक लोग है और हमने उन्हे अपने मरकजी दफ्तर मे ले जाकर कत्ल करने को साजिश कर रखी है। गवर्नर भी लीगियो की इस साजिश मे शामिल हो गया।

उन लोगो की चाल कामयाव रही और कायदे आजम ने हमारी दावत कवूल नही की। हमे एक खत लिखकर इत्तला दे दी गई कि कायदे आजम ने किसी गैरसरकारी जलसे या मजलिस की दावत कवूल न करने का फैसला कर लिया है, जवकि हकीकत यह थी कि उन्होने कई गैर-सरकारी मजलिसो के दावतनामे कवूल किये और उनमे शामिलभी हुए।

कायदे आजम से एक और मुलाकात

लेकिन हमारा दावतनामा ठुकराने के वावजूद उन्होने पेशावर के गवर्नमेट हाउस मे खुदाई खिदमतगार लीडरो से मुलाकात की इच्छा जाहिर की।

इसपर हम सवने आपस मे सलाह-मशविरा करके फैसला किया कि खुदाई खिदमतगारो की तरफ से मैं कायदे आजम से मुलाकात करू। लिहाजा मै उनसे मिला और हम दो घटे तक वातचीत करते रहे। वातचीत के दौरान मैने यह महसूस किया कि उनके साथियो ने उनके दिल मे जहर भर दिया है। मैंने उनसे साफ लफ्जो मे कह दिया कि अगर मैं मुसलमान हू, तो मेरी सारी ताकत उनकी अपनी ताकत है, और चूकि वह मुसलमान है, इसलिए मैं उनकी सारी ताकत को अपनी ताकत समझता हू। इसपर उन्होने मुझसे मुस्लिम लीग मे शामिल होने के लिए कहा। मैने पूछा कि वह ऐसा क्यो चाहते है, और यह कि क्या वह मुझे काम करते देखना चाहते है या यह चाहते है कि मैं भी मुस्लिम लीगियो की तरह वेजान और नाकारा हो जाऊ। मुस्लिम लीग के नेता ज्यादातर 'खान' और 'अरवाव' है और उन्होने कोम की कभी कोई खिदमत नही की। ये लोग हमेशा अग्रेजो के चापलूस और खुशामदी रहे है। कायदे आजम ने फिर से अपनी वही वात कही। मैंने उनसे कहा कि उनके आगे-पीछे चारो तरफ जो लोग जमा है, वे इतने स्वार्थी हे कि जहा उनके मतलव की वात होती है वहा वे उनके (कायदे आजम

के) हुक्म की भी परवा नही करते, जबकि कायदे आजम सिर्फ उनके नेता ही नही, गवर्नर जनरल भी हैं। कायदे आजम ने मुझसे इसका सबूत मागा।

छोडी हुई जायदादो की लूट

मैंने उन्हे बताया कि हिन्दू यहा करोडो रुपये की जायदाद छोड गये थे। वे सारी जायदादे लीगियो ने लूट ली। ये जायदादे पाकिस्तान की मिल्कियत है। लेकिन इसके बावजूद ये लीडर एक पाई भी सरकार के हवाले करने को तैयार नही। मैंने कायदे आजम से कहा कि वह मुझे किसी भी ऐसे बडे नेता का नाम बताये, जिसने लूट मे हिस्सा न लिया हो।

पार्टी का प्रस्ताव

कायदे आजम ने इस बात का फिर इसरार किया कि खुदाई खिदमतगार मुस्लिम लीग मे शामिल हो जाय। इसपर मै इस बात के लिए राजी हो गया कि सारी बाते अपने साथियो के सामने पेश करूगा। इसके बाद मेरी पार्टी ने अपने जलसे मे एक प्रस्ताव पास किया, जिसमे कहा कि हम जम्हूरियत-पसन्द है और हमने आजादी और जम्हूरियत के लिए जद्दोजहद की है। हम किसी दूसरी पार्टी के हुक्म पर अपनी पार्टी को तोडने के लिए रजामन्द नही हो सकते।

कहा जाता है कि सरहदी सूबे से चलते वक्त कायदे आजम ने खान अब्दुल कयूम खान और गवर्नर डडास को हालात से निपटने और हमारी तहरीक को हर तरह कुचलने के पूरे-पूरे हक दे दिये थे।

सजा

एक मुद्दत से मै कोहाट और बन्नू नही गया था। लोग चाहते थे कि मैं उस इलाके का दौरा करू। इसलिए १५ जून, १९४८ को मै नाजू और मुनीरखान सालारो के साथ बन्नू के लिए रवाना हुआ। बहादुरखेल पहुचने पर हमने देखा कि पुलिस ने सडक रोक रखी है। मुझे और मेरे दूसरे साथियो से कहा गया कि हम अपनी कार से नीचे उतर जाय। उसके बाद हमे टोरी तहसील मे ले जाया गया, जहा सारा दिन न खाना दिया गया, न पानी। शाम को कोहाट के डिप्टी कमिश्नर वहा

पहुचे। मुझे उनके सामने पेश किया गया। उन्होने छूटते ही मुझसे जमानत पेश करने को कहा। मैंने पूछा कि वह किस तरह की जमानत चाहते है। उन्होने कहा कि मै पाकिस्तान के खिलाफ हू। जब मैंने इस बात का सबूत मागा, तो वह कहने लगे कि बहस की कोई जरूरत नही। मैंने जमानत पेश करने से इन्कार कर दिया, जिसपर उन्होने अपना फैसला सुना दिया और मुझे तीन साल सख्त कैद की सजा दे दी। मुझे अपने इन्तजार करते हुए दोस्तो से मिलने या अपनी जरूरी चीजे लेने की भी इजाजत नहीं दी गई और मिंटगुमरी-जेल मे भेज दिया गया, जहा मैंने सजा के दिन काटे। सजा मे मुझे वह छूट भी नही दी गई, जो जेल की तरफ से मिला करती है। जब मै पूरी सजा भुगत चुका, तो १८१८ के बगाल रेगुलेशन के मातहत मुझे नजरबन्द कर दिया गया। इस तरह जनवरी, १९५४ तक मुझे नजरबन्द रखा गया।

काश्मीर का मसला

काश्मीर के बारे मे मैंने दो बार अपनी खिदमत पेश की। पहली बार कायदे आजम के जीते-जी और दूसरी बार उनकी मौत के बाद। मगर दोनो मर्तबा नामजूर कर दी गई। शासक दल का खयाल था कि अगर काश्मीर के मसले पर हम कोई समझौता या हल करा देते है तो मुसलमान जनता के दिलो मे हमारे बारे मे अच्छे खयाल पैदा हो जायगे और इससे हम उनकी साख के लिए खतरा बन जायगे। मरहूम नवाबजादा लियाकत अली खा ने हमारे दो असेम्बली मेम्बरो से कहा कि कायदे आजम की मौत के बाद वह कोई ऐसा लीडर नही चाहते, जो जनता के दिलो-दिमाग पर उनसे ज्यादा कब्जा कर ले। एक और मौके पर नवाब ममदोत मिंटगुमरी-जेल मे मुझसे मिलने आये। हमने दूसरी बातो के मसले पर भी बातचीत की। मैंने उनके सामने कुछ तजवीजे रखी। 'नवाये वक्त' दैनिक के श्री हमीद निजामी भी इस बातचीत के दौरान मौजूद थे। उस वक्त मुझे यह यकीन दिलाया गया कि सरकार मेरी तजवीजो पर हमदर्दी से गौर करेगी। लेकिन कोई नतीजा न निकला। अगर सरकार मेरी तजवीजे मान लेती, तो यह मसला बहुत पहले ही हल

हो गया होता। मेरा तजुरवा तो यह है कि वड़े लोगो को असल मे काश्मीर के हल की कोई फिक्र नही है, वल्कि अपनी गद्दियो को वनाये रखने के लिए उसका उपयोग करने की कही ज्यादा फिक्र है।

वेइसाफी मान ली गई

सन् ५३ मे जव मैं अभी जेल मे ही था, तो सरदार वहादुरखान रावलपिंडी-जेल मे मुझसे मिलने आये। वातचीत के दौरान उन्होने मान लिया कि सरकार हमारे साथ वेइसाफी कर रही है। हमारे साथ कड़ा सलूक किया गया है और सरहदी सूवे मे अब्दुल कय्यूम खान की सरकार ने जुल्म और जब्र से काम लिया है। कोई भी जिम्मेदार हुकूमत इन हालात की जिम्मेदारी अपने सिर नही ले सकती, न इसे जायज ही करार दे सकती है। सरदार वहादुरखान ने कहा कि मरकजी सरकार मेरी नजरवन्दी को जायज नही समझती और वह चाहती है कि मुझे रिहा कर दिया जाय। मगर साथ ही उसे यह डर भी है कि हम इस जुल्म को कभी भूल नही सकेंगे और इसलिए हुकूमत को माफ नही कर सकेगे। मैंने उनसे कहा कि खुदाई खिदमतगार अहिंसा मे यकीन करते हैं और वह बुराई करनेवाले से भी वदला लेने की कोशिश नही करते। मैंने इस वात पर हैरानी भी जाहिर की कि सरकार अपनी भूल को मानकर भी इसाफ के लिए तैयार नही है। मैंने सरदार वहादुरखान को साफ-साफ कह दिया कि जवतक सरकार को मेरे और हमारी तहरीक के वारे मे पूरी तरह इत्मीनान हो जाय, तवतक मुझे अपनी रिहाई की फिक्र नही। वाद मे वह मुझसे फिर मिलने आये, तो उन्होने वताया कि सरकार ने मुझे रिहा करने का फैसला कर लिया है।

रिहाई

सन् १९५४ मे जेल से रिहाई के वाद मुझे रावलपिंडी के सर्किट-हाउस मे नजरवन्द कर दिया गया। मैं सर्किट-हाउस की नजरवन्दी से जेल को वहतर समझता था। मेरा खयाल था कि शायद मेरे लिए भी अरवाव अब्दुल गफूर की तरह का कोई जाल विछाया गया है। उन्हे पैरोल पर जेल से वाहर जाने की इजाजत दे दी गई थी, लेकिन उसके वाद

फिर गिरफ्तार करके जनता मे यह झूठ फैला दिया गया कि वह अफगान एजेटो से साज-बाज कर रहे है।

बाद मे मुझे पजाब मे घूमने-फिरने की इजाजत दे दी गई और फिर कराची मे असेम्बली के इजलास मे शामिल होने का मौका मिला।

एक यूनिट

उन दिनो कराची मे एक यूनिट की तजवीज पर गौर किया जा रहा था। इस गम्भीर मामले मे मेरे पजाबी भाइयो को बगाली भाइयों से नाराजी और शिकायत थी। इलजाम के दौरान चौधरी मुहम्मद अली, मुश्ताक अहमद गुरमानी, सरदार बहादुरखान और पजाब के उस वक्त के बडे वजीर मलिक फीरोजखा नून ने मुझसे भेट की और मुझे एक यूनिट के फायदे और खासियते स्वीकार कराने की कोशिश की। सिन्ध, बिलोचिस्तान और सरहदी सूबे की जनता से बातचीत के बाद मुझे यह यकीन हो गया था कि जनता इस तजवीज के लिए तैयार और सहमत नही और जोर-जबरदस्ती करके एक यूनिट कायम करना पाकिस्तान के लिए फायदेमन्द नही रहेगा। मैने उन लोगो को बताया कि इस सजीदा हालत मे एक यूनिट बेकार रहेगा। मैंने उन्हे कहा कि अगर वे इस मामले मे सचमुच साफदिली से काम कर रहे है, तो पश्चिमी पाकिस्तान मे दो यूनिट कायम कर देने चाहिए। उनमे से एक यूनिट तो पजाब का हो और दूसरा दूसरे छोटे सूबो का। चौधरी मुहम्मदअली ने, जो इस वक्त बडे वजीर है, कहा कि या तो एक यूनिट कायम होगा या मौजूदा हालात बरकरार रहेगे। इस तरह हमारी बातचीत खत्म हुई।

इधर सियासी मामलो पर गौर किया जा रहा था और दूसरी तरफ सरकार से समझौते के लिए गवर्नर जनरल ने डाक्टर खानसाहब से बातचीत शुरू कर रखी थी। जनाब गुलाम मुहम्मद ने इस बात की ताईद की कि सरकार ने खुदाई खिदमतगारो से बेहद बेइसाफी की है और उनके लिए इस तरह की बदसलूकी भूल पाना मुश्किल होगा। उन्होने हमे यह राय दी कि हम यह जमात तोडकर एक नई पार्टी बनाये। हमने उन्हे बताया कि यह कोई पार्टी नही है, और सिर्फ खुदाई

खिदमतगारो के साथ ही नही, सारी पख्तून कौम के साथ वेइसाफी हुई है। मगर इस सवके वावजूद मैंने सरकार को यकीन दिलाया कि हम उन लोगो को माफ कर देगे, वल्कि हकीकत तो यह है कि हम उन्हे माफ कर चुके है, जिन्होने हमारे साथ वेइसाफी और हमपर जुल्म ढाये। लिहाजा अव यह सरकार का काम है कि वह प्यार से लोगो के दिल जीतकर उनपर यकीन करे। डाक्टर खानसाहव को यह मशविरा दिया गया कि वह हाकिमो को वताये कि हम सरकार की तरफ से जनता पर यकीन करने को वडी अहमियत देते है।

दूसरे, हम यह भी जानना चाहते थे कि क्या सरकार इस मुल्क मे हमे वरावर का साथी समझती है, या हमे ऐसा नीचा दर्जा देती है कि हम हमेशा दूसरो के कब्जे मे ही रहे ? तीसरे, हम यह भी मालूम करना चाहते थे कि क्या हुकुमरान हमे अपना मुसलमान भाई भी समझते है या नही ?

डाक्टर खानसाहव ने गवर्नर जनरल को मशविरा दिया कि वह सीधे मुझसे वातचीत करे। लेकिन गवर्नर जनरल को दूसरे लोगो ने ठीक उलटी राय दी।

अभी यह सियासी और आईनी वातचीत चल ही रही थी कि पार्लमेट मे वगाली और पजावी सियासतदानो मे इस मसले पर फर्क पैदा हो गया कि क्या आईन मजूर हो जाने और पाकिस्तान की जम्हूरियत का ऐलान हो जाने के वाद जनाव गुलाम मुहम्मद राष्ट्रपति होगे ? वगालियो ने कहा—इसका फैसला मुनासिव वक्त आनेपर पार्लमेट मे वोटो से किया जायगा। जव सियासतदानो के दोनो धडो का यह फर्क फिर से सवके सामने आया, तो पार्लमेट के वगाली मेम्वरो ने एक यूनिट की तजवीज की ताईद से हाथ खीच लेने की धमकी दी।

सूवाई फेडरेशन

फलस्वरूप पार्लमेट मे एक यूनिट की तजवीज मनवाने की सारी उम्मीदें खत्म हो गई और उसकी जगह सूवाई फेडरेशन की तजवीज पेश की गई। सरदार वहादुरखान की कोठी पर एक जलसा हुआ, जिसमे

सरदार असदजान, सरदार अब्दुर्रब निश्तर, सरदार बहादुरखान और मैंने हिस्सा लिया। लम्बी बहस के बाद मैंने इस शर्त पर सूबाई फेडरेशन की तजवीज मजूर की कि अग्रेजो ने जिन पख्तून इलाको को तकसीम कर दिया था वे सब इलाके एक इकाई मे शामिल कर दिये जाय और उसका मुनासिब नाम रखा जाय। अग्रेज लोग हिन्दुस्तान मे मराठो और पठानो को खतरनाक फौजी जातिया मानते थे, इसीलिए कमजोर करने के लिए अग्रेजो ने उन्हे कई हिस्सो मे बाट दिया था। अब जबकि हिन्दुस्तान मे सब मराठे एक कर दिये गए है, तो इस बात की कोई वजह नजर नही आती कि जो पाकिस्तान इस्लामी जम्हूरियत होने का दावा करता है, वह पठानो को एक सूबे मे जोड देने को तैयार न हो। हमारी माग यह है कि पठान इलाको को एक कर दिया जाय। हम पूरा यकीन दिलाते है कि हम सच्चे पाकिस्तानी है और तमाम पाकिस्तानियो के भाई है। इन सबके बावजूद कई अखबार और लीडर हमे गद्दार करार देने पर तुले है। हम पठान लोग मुख्तलिफ इलाको मे बिखरे हुए है और हमारे आपसी मेल-जोल की आजादी पर पाबन्दिया है। हम इसे पसन्द नही करते और हमारा यह दावा है कि पठानो की ताकत को बिखरी रखकर पाकिस्तान को मजबूत नही बनाया जा सकता। पख्तूनो के साथ इन्साफ करके ही पाकिस्तान मजबूत बन सकता है और यही पाकिस्तान के बड़प्पन का सबूत भी होगा।

मुल्क मे बदअमनी और शक की हवा फैल गई।

नई वजारत

जब नई वजारत कायम हुई, तो डाक्टर खानसाहब को उसमे शामिल होने की दावत दी गई। मैं वजारत मे डाक्टर खानसाहब के शामिल होने का हामी नही था। मेरा खयाल यह था कि वह वजारत मे शामिल होकर मुल्क के लिए कोई काम नही कर सकेगे। मगर उनका खयाल यह था कि वह दूसरो को देश-सेवा के लिए तैयार कर सकेगे और अगर नाकाम रहे, तो इस्तीफा दे देंगे। एक यूनिट की तजवीज फिर से पेश की गई, तो मुझे सरदार बहादुरखान के मकान पर एक मीटिंग मे बुलाया गया। मेरे अलावा डॉक्टर खानसाहब, मेजर जनरल इस्कन्दर मिर्जा और सरदार अब्दुर्रशीद खान (जो उस वक्त मेरे सूबे के बडे वजीर थे) ने उस बातचीत मे हिस्सा लिया। मैने उनसे कहा कि वे ताकत के जोर पर एक यूनिट की तजवीज के बारे मे उतावली से काम न ले और लोगो की राय मालूम कर ले कि उन्हे यह तजवीज मजूर भी है कि नही। जहातक मुझे याद है, यह फैसला हुआ था कि एक यूनिट की तजवीज लागू करने से पहले लोगो की राय ली जायगी। मैं मिर्जासाहब के साथ मीटिंग से बाहर आया। उन्होने मुझे बताया कि हमारी मदद की जरूरत है। मैंने उन्हे बताया कि अगर वह और दूसरे ओहदेदार सचमुच यह चाहते हैं, तो मैं मदद के लिए तैयार हू।

कराची से मैं पजाब वापस आ गया, क्योकि मुझपर पजाब मे ही रहने की पाबदी थी। मैंने जिला कैम्बलपुर के गाव गौरगशी (चच) मे रहना शुरू कर दिया। सरहदी सूबे के लोग इस गाव मे आया करते थे। वे हमारी जमात, उनके अखबार और मुझपर लगाई गई पाबदियो के खिलाफ थे। आम तदबीरो से जब इसाफ हासिल न हो, तो वे लोग सिविल नाफरमानी (सत्याग्रह) शुरू करना चाहते थे। मगर मैंने उन्हे राय दी कि खुदाई खिदमतगार होने की वजह से हमे यह सबकुछ बर्दाश्त करना चाहिए, और कुछ दिन और सब्र से काम लेना चाहिए। इसी बीच नई पार्लमेंट कायम हो गई और उसका पहला इजलास मरी

यदा चूनी गई असेम्वली से कही ज्यादा रूढिवादी होगी। इस तरह पठान इलाको के लिए एक यूनिट की तजवीज उनपर रूढिवादी शासन थोप देगी। इसलिए मैने सुझाव दिया कि पजाव मे व्यापक रूप मे सक्रिय राजनीति का काम करना चाहिए।

गावो की तरक्की की तजवीज

जव मैं एक यूनिट की तजवीज पर रजामद न हुआ और मुल्क मे व्यापक रूप मे सियासी कामो की जरूरत पर जोर दिया, तो चौवरी मुहम्मदअली ने, जो उस वक्त वजीर खजाना थे गावो की तरक्की के वारे मे अपनी तजवीज पेश की और मुझे उसका जिम्मेदारी सम्हालने को कहा। मैने इस शर्त पर उसे मजूर किया कि पहले एक यूनिट का मसला मुनासिव तौर पर निवटाया जाय। सुहरावर्दीसाहव ने भी गावो की तरक्की की अहमियत पर जोर दिया। उन्होने मुझे वताया कि सरकार की मदद और पैसे के विना कोई वडा काम नही हो सकता। इस तरह हम एक यूनिट की तजवीज के वारे मे किसी नतीजे पर नही पहुच पाये और वातचीत खत्म हो गई।

जव मैं सरहदी सूवे मे वापस आया, एक यूनिट की तजवीज विचाराधीन थी। वाद मे इस्कन्दर मिर्जा और डाक्टर खानसाहव दोनो हमारे सूवे के दौरे पर आये। हम सव खान कुर्वान अली खान के यहा मिले और जनरल मिर्जा ने मुझे गावो की तरक्की की तजवीज की तफसील वताई, जिसके वारे मे चौधरी मुहम्मदअली मरी मे मुझसे पहले ही वातचीत कर चुके थे। उन्होने मुझे भार सम्हालने को कहा। मैंने जवाव दिया कि जवतक हमारी तसल्ली के मुताविक एक यूनिट का मसला हल नही हो जाता, मुझे गावो की तरक्की के लिए सरकारी तजवीज का इचार्ज वनना मजूर नही। इसपर जनरल मिर्जा ने मुझे वताया कि एक यूनिट की तजवीज अव पाकिस्तान के लिए अन्तर्राष्ट्रीय इज्जत का सवाल वन गया है। अगर इस मौके पर पाकिस्तान ने इस तजवीज से हाथ खीच लिया, तो उसकी सारी साख खत्म हो जायगी और अफगानिस्तान का वकार वढ जायगा। मैं इस वात से सहमत न

हुआ और मैंने बताया कि एक यूनिट कायम होने या न होने का मसला पाकिस्तान की घरेलू सियासी पालिसी से नत्थी है और इस मामले मे अफगान जो कुछ सोचते है, उसे कोई अहमियत नही देनी चाहिए। मैंने यह दलील पेश की कि अगर पाकिस्तान मे पठान खुश और मजबूत होगे, तो पाकिस्तान और भी ज्यादा मजबूत और खुशहाल हो जायगा और अगर पाकिस्तान पख्तून इलाको के हालात अवाम के दिली इत्मीनान और जम्हूरी ख्वाहिशो के मुताबिक सुधार ले, तो इस सवाल पर पाकिस्तान के खिलाफ सारा गैर-मुल्की प्रोपेगेंडा बेकार हो जायगा।

मैंने जनरल मिर्जा और डाक्टर खानसाहब से इस बात का ऐतराज भी किया कि उन्होंने खुद तो एक यूनिट की तजवीज की हिमायत में भारी प्रचार शुरू कर रखा है, मगर हमे कुछ भी कहने की कोई आजादी नही, जबकि पाकिस्तान एक जम्हूरी मुल्क है। उन दो ने इस बारे मे मेरी शिकायत को मुनासिब बताते हुए यह बात मानी कि मुझे भी अवाम से सबध रखने का हक है। इस तरह उन दोनो की मजूरी के बाद मैंने अवाम की सियासी ट्रेनिंग के लिए अपना दौरा शुरू किया, ताकि मुनासिब जम्हूरी तरीको से हकीकत का फैसला हो सके।

जनाब मैं अगर सरकार के खिलाफ नफरत फैलाना चाहता, तो हमारे अवाम पर जो जुल्म किये गए, उनकी बिना पर बगावत के लिए काफी मसाला मौजूद था। मगर उसकी जगह मैंने हमेशा अहिंसा की फिलासफी का प्रचार किया है और यह ऐलान करता रहा हू कि हमने उन लोगो को भी माफ कर दिया, जिन्होने हमसे बेइमाफी की और हमारी इस तरह बेइज्जती की कि आम हालात मे कोई पठान उसे नहीं भूल सकता और न ही माफ कर सकता है।

करता, जो सरहदी सूवे की सूवाई आजादी को खत्म करने के लिए जिम्मेदार है। मुझे तो पजावियो से नफरत करने की कोई मुनासिव वजह नजर नही आती और न मैं कभी उनसे नफरत कर सकता हू। उन्होने हमे कोई नुकसान नही पहुचाया। हम पर एक यूनिट ठूसने के वारे मे भी पजाव के रहनेवालो पर जम्हूरी जिम्मेदारी आयद नही होती। इसके वारे मे तो उनसे कभी राय तक नही ली गई।

मैं हमेशा एक पक्का मुसलमान और कौमपरस्त रहा हू। जवसे पाकिस्तान कायम हुआ है, मैने हमेशा पाकिस्तान की खिदमत की हे और इस मुल्क को मजवूत वनाने की कोशिश की है। मेरा दावा है कि पाकिस्तान मे रहनेवाले पख्तूनो को एक कर दिया जाय, तो पाकिस्तान और भी मजवूत हो जायगा। पख्तूनिस्तान के नाम का भी वही महत्व होगा, जो पजाव, वगाल, सिंध और विलोचिस्तान के नामो को है। ये पाकिस्तान मे कुछ इलाको के नाम है, जहा पाकिस्तानी रहते है। मुझे पक्का यकीन है कि पाकिस्तान की वडाई और अहमियत इसीमे है कि पख्तूनो के साथ वह वेइसाफी खत्म की जाय, जो अग्रेजो ने अपनी खुदगर्जी मे उन्हे विभक्त करके की थी और अग्रेजो की नीति पर चलने के वजाय सभी पठानो को एक यूनिट या सूवे से कर दिया जाय।

अपनी स्थिति और सियासी खयालो की वजाहत के वाद मैं सारा मामला आप पर छोडता हू। मैंने एक यूनिट के खिलाफ तकरीरे करते हुए वही कुछ कहा है, जो एक इस्लामी जम्हूरियत के दावेदार मुल्क मे एक आजाद शहरी के तौर पर कहना अपना फर्ज और हक समझता था। कोई चीज मुझे यह दावा करने से नही रोक सकती कि अग्रेजो ने पख्तूनो के साथ जो वेइसाफी की थी, उसे अव दूर किया जाय। अगर आप इस नतीजे पर पहुचे कि मैंने सरकारी फरमानो के खिलाफ अपने मुल्क और अवाम को नुकसान पहुचाया है, तो मैं वडी खुशी के साथ और विना किसीसे नफरत किये वह सजा भुगतूगा, जो इसाफ के मुताविक मेरे लिए तय की जायगी।

६ सितम्वर, १९५६ —अब्दुल गफ्फार

· ३

हिन्दुस्तान के लिए पैगाम

[यह पैगाम खान अब्दुल गफ्फार खान की तरफ से जलालाबाद मे उपस्थित गाधी शताब्दी कमेटी और वजारते हिंद नशरो-अशाअत के द्वारा भेजे गये नुमाइदा वफद के हमराह भेजा गया था। यह नुमाइदा वफद २ अप्रैल से ८ अप्रैल १९६७ तक बादशाह खान से गाधीजी, हिन्दुस्तान की तहरीके आजादी, खुदाई खिदमतगार-आदोलन और इसमे बादशाह खान की सरगर्मियो की निस्बत उनकी याददाश्त से जानकारी हासिल करने गया था।]

हिन्दुस्तान की आजादी के लिए हम लोगो ने भी बहुत-सी कुरबानिया की है और मुसीबते झेली है। इसलिए मैं अपना फर्ज समझता हूं कि मैं हिन्दुस्तान के रहनुमाओ और अवाम से यह दरखास्त करू कि जो वादे काग्रेस ने आजादी से पहले अवाम से किये थे, उनको पूरा करे।

पैसे की मोहब्बत और इक्तदार की भूख कौमो की तबाही का अकसर बाइस हुआ करती है। अब भी मुल्क को बचाने का वक्त है कि हम मुल्क और कौम की सच्ची खिदमत करके मुल्क को बचा सके, बल्कि मैं तो यही कहूगा कि मुल्क ही को नही, अपने आपको बचाये।

आखिर मे मैं एक और बात आपसे कहना चाहता हू और वह यह है कि हिन्दुस्तान की आजादी हासिल करने मे हम लोग आपके शानाबशाना लडे। आपको आजादी मिल गई और आप उस आजादी का मजा उडा रहे है, लेकिन हम आज भी उसी तरह बल्कि उससे भी बदतर गुलामी की जिंदगी बसर कर रहे है।

हम अपनी आजादी हासिल करने के लिए जद्दोजहद कर रहे है।

आप इसमे हमारी मदद करे, जैसे कि कोरिया की मदद चीन ने की, बावजूद इस बात के कि वह एक मुल्क और एक कौम नही थे, जबकि हम आज भी एक ही मुल्क और एक ही कौम है।

वल सलाम।

—अब्दुल गफ्फार

जलालाबाद
अफगानिस्तान
४ अप्रैल, १९६७

(टेप रिकार्ड से)

: ४ :

पख्तूनिस्तान जिन्दाबाद !

[पख्तूनिस्तान-दिवस पर दिया गया भाषण]

भाइयो और बहनो, मैंने कभी लिखी हुई तकरीर नही पढी। यह पहला मौका है कि मैं लिखी हुई तकरीर पढ रहा हूं, क्योकि हालात नाजुक है, ऐसा न हो कि मेरी तकरीर मे कतअ-व-वरीद (काट-छाँट) किया जाय। तकरीर के दौरान मैं अगर मुझे कही तवक्कुफ करना (रुकना) पडे तो उसके लिए मे माजरत्तख्वाह (क्षमा-प्रार्थी) हू।

सबसे पहले मैं आला हजरत और हुकूमते अफगानिस्तान का शुक्रगुजार हूं, जिसने मुझे मौका दिया है कि आज मैं आप हजरात के सामने तकरीर के लिए हाजिर हुआ। हम वह बदकिस्मत कौम है कि आपस मे तबादलैखयाल (विचार-विनियम) के लिए हमारे पास सिवाय इसके और कोई दूसरा जरिया नही है। हमारे पास न तो रेडियो, न अखबार है। सिर्फ यही एक मौका है कि इस दिन हम अपने ख्यालात आप पर और पूरी दुनिया पर जाहिर करे।

बहरहाल मैं हुकूमत अफगानिस्तान, मजलिसे शोरा, अफगान अवाम और बिलखसूस (विशेषत) खुशहाल खा व रहमान बाबा के मोअतकिदीन (अनुयाईयो) का शुक्रगुजार हू। अफगानिस्तान के दौरे के दौरान मे मुतअलिमीन (विद्वज्जनो) व मोअतकिदीन (पैरोकारो) ने मेरा पुरखुलूस (हार्दिक) स्वागत किया और पख्तूनिस्तान के हके-खुद-इरादियत निर्णय के अधिकार) की ताईद (समर्थन) मे अपनी कुर्बानियाँ करने का वायदा किया। अफगानिस्तान के अवामी जिरगे[1] जिरगा ने वक्तन-फवक्तन[3] हमारे साथियो से पूरा तआवुन[4] अपना फर्ज तसव्वुर करता हू कि जो इखलास, प्यार [illegible]

---

१ कबाइली लोगो की सभाओ, २. मत्री, सलाहकार [illegible]
४. सहयोग

मिला है मै उसका समीमेकल्ब[1] से शुक्रिया अदा करू ।

इस जलसे मे मुझे दिखाई दे रहा है कि मुख्तलिफ ममालिक[2] के लोग मौजूद है। मै चाहता हू कि पख्तूनिस्तान के मसले और पाकिस्तान के हुक्मरान तबके[3] के जज्बये इस्लामी पर कुछ इजहारे-ख्याल करू । हुकूमते पाकिस्तान हमारे खिलाफ यह प्रोपैगण्डा करा रही है कि हम मुसलमानो के बदख्वाह[4] है और हिन्दुओ के साथी है। पख्तूनिस्तान को बनाकर पाकिस्तान को मिटाना चाहते है। इसलिए मैं चाहता हू कि इन बातो पर कुछ रोशनी डालू ।

क्यो मिले हम हिन्दुओ से ?

हम हिन्दुओ से क्यो मिले और कब इनके साथी बने ? इसकी वजाहत यह है कि अग्रेजो ने हमे हिन्दुओ के साथ मिलने के लिए मजबूर कर दिया था, क्योकि जिस वक्त अग्रेजो ने अफगानिस्तान के शाह अमानउल्लाह खान के खिलाफ कुफ्र का प्रोपैगण्डा किया था और अफगानिस्तान मे बहुत बडी बगावत खडी कर दी थी तो पख्तूनिस्तान के लोग उससे बहुत मुतास्सिर हुए और हममे इन वाक्यात के पेशेनजर एक कौमी अहसास पैदा करने की गरज से सन् १६२६ मे मैने एक तहरीक शुरू की, जिसका नाम 'खुदाई-खिदमतगार' है। जाहिर है कि आज की दुनिया मे कोई भी कौम तहरीक और कयामे जमात के बगैर जिन्दा नही रह सकती । हमारी यह तहरीक एक मजलिसी व सकाफती तहरीक[5] थी। लिहाजा इसने मुल्क मे मकबूलियत और हरदिल-अजीजी[6] हासिल की। इसकी हरदिल-अजीजी और मकबूलियत से अग्रेज घबरा गये और इस तहरीक को शुरू हुए चार माह भी न गुजरे थे कि अग्रेजो ने हम सबको गिरफ्तार कर लिया और जेल मे डाल दिया और पख्तून कौम पर मुजालिम के वह पहाड तोडे कि कोई वहशी कौम भी किसी पर ऐसे सितम न ढा सकती थी। हम उस जमाने मे पजाब के एक जेलखाने मे बन्द थे कि हमारे पास दो साथी खुफिया तौर पर[7] हमसे मिलने के लिए जेलखाने मे आये।

---

१ हृदय की गहराई से २ विभिन्न देश ३ शासक वर्ग ४. अहित चाहनेवाले ५ सामाजिक व सास्कृतिक आन्दोलन, ६ लोकप्रियता, ७ गुप्त रूप से

है ? मुस्लिम लीग हमपर हिन्दुओ का इलजाम लगाती है। इसके लीडर खूब अच्छी तरह जानते है कि पख्तून जिन्दा व वेदार है। वे जानते है कि हम अपने जिन्दा-वेदार शऊर[1] की विना पर अग्रेजो का सितम वरदाश्त नही कर सकते तो उनका जब्र-व-सितम किस तरह वरदाश्त करेगे। उन्हे यह भी डर है कि अकेले हम ही नही है, वल्कि सिन्धी, विलोची वगाली और हताकि पजाव का गरीव अवाम भी हमारे साथ रहेगा। इस खदिशा[2] की विना पर मुस्लिम लीगियो ने हमपर हिन्दूनवाजी[3] का इलजाम लगाया और वदनाम किया ताकि सिन्धी, विलोची वगाली और पजावी गरीव अवाम हमारी तरफ से वदगुमान हो जाय। आप देखिये कि वदनामी का यही इलजाम उन्होने आज वगाल के शेख मुजीव-उर-रहमान और उनके साथियो पर आयद किया है। मगर अल्लाह का लाख-लाख शुक्र है कि इक्कीस साल वाद पाकिस्तानी अवाम इस राज से अच्छी तरह वाकिफ हो गये और हुकूमते पाकिस्तान के इस्लामी दावे और गलत प्रोपैगण्डे की हकीकत उनपर खुल गई। चुनाचे इस साल यकम जुलाई को पाकिस्तान के तमाम सूवो के नमायदगान (प्रतिनिधि) पिशावर मे इकट्ठे हुए और उन्होने पख्तून भाइयो पर अपना एतमाद जाहिर किया। इस वाकिआ पर मैं अपने अल्लाह और पाकिस्तानी अवाम का शुक्रगुजार हू कि उनकी सूझवूझ यहा तक पहुँच चुकी है। दूसरी वात पख्तूनिस्तान की है। पाकिस्तान मे हम पाच भाई रहते है, जिनके नाम है, लेकिन पाकिस्तान मे हमारा नाम नही है। इस्लाम के दावेदारो से हम कहते है कि वह हमे भी हमारा कोई नाम दे। मर्हूम[4] लियाकतअली खा ने एक वार पार्लमिट मे हमसे पूछा था कि पख्तूनिस्तान क्या चीज है ? मैंने जवाव दिया, यह हमारे मुल्क का नाम है। उन्होने कहा, यह क्या नाम है ? मैंने जवाव दिया, जैसे वगाल, सिंध और विलोचिस्तान का नाम है, लेकिन हमारे मुल्क का नाम नही है। हमारे मुल्क का नाम भी एक नाम यानी पख्तूनिस्तान होना चाहिए। जव पख्तूनिस्तान का नाम मैंने लिया तो फौरन यह प्रोपैगण्डा शुरू कर

---

१ जागरूकता की चेतना २ आशंका ३ हिन्दुओ से हिमायत ४ स्वर्गीय

दिया गया कि मैं पाकिस्तान को मिटाना चाहता हू । अजीव वात है कि पजाब, सिन्ध, बिलोचिस्तान, वगाल के नाम से तो पाकिस्तान का कुछ नही बिगडता, लेकिन सिर्फ पख्तूनिस्तान के नाम से पाकिस्तान मिट जायगा ।

इक्तदार की खातिर काग्रेस ने हमे छोड दिया

१९४७ ई० मे जव हमने समझा कि अग्रेज जा रहे है और हिन्दुस्तान को दो हिस्सो मे तकसीम कर रहे है, एक हिस्सा हिन्दुओ के नाम से हिन्दुओ के हवाले कर रहे है और दूसरा हिस्सा पाकिस्तान के नाम से अपनी लेपालक मुस्लिम लीग को दे रहे है, तो हमारे खुदाई खिदमतगारो की एक मीटिग वन्नू मे हुई और इस वात पर गौर किया गया कि ऐसे हालात मे क्या करना चाहिए । अग्रेज जव काग्रेस को हिन्दुस्तान देकर जा रहे थे तो उन्होने हमपर वहुत जोर डाला और हमारे वहुत से जिरगे किये, लेकिन हमने इक्तदार की खातिर काग्रेस को नही छोडा । इसके वरअक्स (विपरीत)' काग्रेस ने हमे छोड दिया । जहातक पाकिस्तान का ताल्लुक हे, हमे मालूम था कि अग्रेज इसे अपने लिए और अपने लेपालको के लिए वना रहे है, और इक्तदार उन्हे दे रहे है जिन्होने अग्रेजो की खिदमत की थी । अव आप ही देखिये कि पाकिस्तान के मौजदा हुक्मरानो मे कोई शख्स भी है जिसने अग्रेजो के मुकाविल कौम का साथ दिया हो, कौम के लिए कुर्वानी दी हो और अवाम की खिदमत की हो । सदर अय्यूव खा हो या गवर्नर मूसा खा, ये लोग तहरीके आजादी के दौरान हमारे खिलाफ अग्रेजो का साथ देते थे । जव हम पख्तूनो ने इन हालात को समझ लिया तो हमने फैसला किया कि हम न पाकिस्तान के साथ रहना चाहते है और न हिन्दुस्तान के साथ, वल्कि अपनी खुद मुख्तार (स्वाधीन) पख्तून रियासत के ख्वाहिशमन्द (इच्छुक) है । यहा मै यह अम्र वाजेह (स्पप्ट) करना जरूरी समझता हू कि जमानये कदीम (प्राचीन काल)' के वडे-वडे अदीव माजी[1] के

---

१. भूतकाल

वाकिआत और १९४९ ई० से पहले पेश आनेवाले वाकियात, जिनका ताल्लुक पख्तूनिस्तान से है, उमरै तहरीर[1] मे लाये है। मैं यह भी तस्लीम करता हू कि पख्तूनो मे बडे-बडे इन्सान गुजरे है जिन्होने अपनी कौम के लिए नाकाबिले फरामोश (अविस्मरणीय) कुर्बानिया दी है और वह तारीख मुरत्तब की है, जिसपर हम फख्र करते है। लेकिन पख्तूनो मे सियासी बेदारी (राजनैतिक चेतना) और उनमे इजतिमाइयत (सामूहिकता) का एहसास पैदा करना हमारी खुदाई खिदमतगार तहरीक की देन है और पख्तूनिस्तान की जो दागबेल पडी है वह भी हमारी इस तहरीक का कारनामा है।

सूबापरस्ती किसने पैदा की ?

अब आप अय्यूब खा सदरे पाकिस्तान के दावाये इस्लाम का सरसरी तौर पर जायजा लीजिये। जब पूरे पाकिस्तान की कौमी व अवामी पार्टी की कान्फ्रेन्स का इजलास पिशावर शहर मे मुनअक्द हुआ[2] और पाकिस्तान की तमाम पार्टियो के रहनुमाओ और नुमाइन्दो ने परदये इस्लाम मे छुपे हुए मजालिम को जाहिर किया तो सदर अय्यूब खा को यह डर महसूस हुआ कि वह इस्लाम के नाम से पाकिस्तानी अवाम को मजीद फरेब नहीं दे सकते। चुनाचे उन्हे अपने कदीम आका[3] याद आये और वह लन्दन भागे। वहा उन्होने विल्सन और दीगर दोस्तो से सलाह व मशविरा किया कि अब उन्हे क्या करना चाहिए। अय्यूब खां के दोस्तो ने उनसे कहा कि—जाओ तुम्हारे पास सिवा इसके और कोई रास्ता नही है कि इस्लाम का नाम लो और लोगो को अपने जाल मे फासो। चुनाचे वह लदन से वापस आये और उन्होने जज्बै इस्लामी की सरशारी[4] का मुजाहिरा करते हुए यह नारा दिया कि इस्लाम मे मसावात (समता) है, इस्लाम मे सूबापरस्ती ममनूअ (वर्जित) है और कायदे आजम ने भी इरशाद किया है कि सूबापरस्ती मुल्क व कौम के लिए तबाहकुन शै (विनाशक चीज) है। मैं सदर

१. लेखबद्ध २ बुलाया गया ३ पुराने स्वामी ४. इस्लामी भावना के अतिरेक

अय्यूब से यह पूछना चाहता हूं कि आया इस्लामी मसावात का मतलब यह है कि दस करोड़ पाकिस्तानी अवाम की दौलत सिर्फ २३ हुक्मरा खान्दानों मे तकसीम कर दी जाय ? जब सूबापरस्ती नारवा (अनुचित) है तो सदरसाहब से मैं पूछता हू कि सूबापरस्ती पैदा की तो किसने ? सूबापरस्ती अगर पैदा हुई है तो आप लोगो की तरफ से की जानेवाली हकतल्फी (अधिकार-प्रवचना) और बेइत्तफाकी की बिना पर। मैं नही समझता कि सदर साहब किन वजहो से कायदे आजम का नाम लेते है। अभी कल की बात है कि कायदे आजम की बहन मिस फातिमा जिन्नाह, जो मादरे मिल्लत (जाति की मा) भी कही जाती थी, सदारती इन्तखाब (प्रधानपद के चुनाव) मे अय्यूब खा के मुकाबिल आई थी

अगर मैं सिराते-मुस्तकीम (सत्पथ) से हट जाऊ तो आप मुझे रोक दीजिए और मुझे पकडकर सीधे रास्ते पर ले आइये। जब वह खलीफा मुकर्रर हुए तो उन्होने अपना रोजीना (दैनिक व्यय) भी वह मुकर्रर किया जो दूसरो के लिए मुकर्रर था। एक दिन उनकी वीवी ने फर्मायिश की कि मैं शीरीनी खाना चाहती हू। हजरत सिद्दीक रजी अल्ला अनहू ने फरमाया कि जितना रोज का खर्च मुकर्रर है, उसमे शीरीनी की गुजायश नही है। इसपर आपकी अहलिया (पत्नी) ने रोजाना के खर्च मे से कुछ पैसे वचाकर एक दिन हजरत सिद्दीक को अपनी जमाकरदा (सचित) रकम दी और कहा कि मेरे लिए शीरीनी मगवा दीजिए। आपने पूछा कि यह रकम कहा से आई ? आपकी अहलिया ने वताया कि उन्होने रोजाना के खर्च से वचाई है। इसपर हजरत सिद्दीक ने अल्लाह की वारगाह मे अर्ज किया कि मैं अपने रोजाना के खर्च को कम कर सकता था, लेकिन मैंने वैत-अलमाल (सरकारी कोप) से अपनी जरूरत से ज्यादा लिया था। इसलिए ऐ अल्लाह ! तू मुझको माफ फरमा।

दूसरा वाका मैं हजरत उमर रजी अल्लाह तआला अन्हू का सुनाता हू। मुसलमान जमा हुए और जमा होकर हजरत उमर के पास गये कि आप हमारे खलीफा वन जाइये। आपने कहा कि मुझे खिलाफत की कोई जरूरत नही है। मुसलमानो ने कहा कि आपको जरूरत हो या न हो, आपको खलीफा वनाना हमारी जरूरत है।

एक मरतवा हजरत उमर के साहव-जादे[1] वसरा से मदीना जा रहे थे। वसरा के हाकिम ने वैत-अलमाल का कुछ रुपया आपके साहव-जादे को दिया कि आप मदीना जा रहे है तो रकम को लेते जाइये। साहव-जादे ने यह सोचा कि जव रकम साथ ही ले जानी है तो इसको किसी तिजारत मे क्यो न लगा दिया जाय। चुनाचे वसरा से कुछ कच्चा माल उस रकम से खरीद लिया और यह माल मदीना मे लाकर वेच डाला। जो नफा हुआ वह अपने पास रख लिया और वैत-अलमाल की रकम जमा कर दी। जब हजरत उमर को पता चला तो आपने अपने साहव-जादे को वुलाया और फरमाया कि तुमने जो नफा कमाया है, वह अपनी

१. सुपुत्र

रकम से नही कमाया, बल्कि वैत-अलमाल की रकम से कमाया है। लिहाजा नफा की रकम भी वैत-अलमाल मे जमा करा दो। मदीना मे एक मरतबा कहत पडा तो हजरत उमर खुद खाना नही खाते थे और अपनी खुराक भी लोगो के लिए ईसार कर देते थे। जब मिस्र से अनाज आया और कहत की मुसीबत टल गई तब आपने भी अपने हिस्से की पूरी खुराक खाई। हजरत अली करम अल्लाह वजहू एक मरतबा अपनी खिलाफत के जमाने मे बीमार हुए। तबीब ने कहा, आपको शहद नोश करना चाहिए। आपने फरमाया कि शहद मेरे पास नही है वह वेत-अल-माल मे है। लेकिन वह मुसलमानो का माल है। लिहाजा मैं नही ले सकता। जब मुसलमानो ने इजाजत दी तो आपने शहद वैत-अलमाल से मगवाया और इस्तैमाल किया।

पाकिस्तानी बर्बरियत[1] और अवाम

सदर अय्यूब साहब! यह था इस्लाम, मगर आजकल आपका इस्लाम यह है कि आप बिलोचिस्तान के निहत्थे अवाम पर गोलिया और बम बरसाते है। क्या इस्लाम की तरक्की इसमे है कि इस्लाम के नाम पर इस्लामाबाद तामीर करा दिया जाय और बिला जरूरत मकानात-साजी पर अरबो रुपया खर्च किया जाय? क्या इस्लाम की तरक्की इसी मे है कि बगाल मे हर साल आनेवाले सैलाब से हजारो मुसलमानो को तबाह और बरबाद करे और इक्कीस साल गुजर जाने के बावजूद इन-सिदादे सैलाब[2] का कोई इन्तजाम न किया जाय? आज इस्लाम यह है कि पठानो की बिजली और मादनियत, सिन्धियो की जमीने, बिलोचियो की गैस छीनने की साजिश करके एक यूनिट बनाया जाय। एक यूनिट क्या अवाम के फायदे के लिए बनाया गया है या चन्द दौलतमन्द लोगो को मजीद दौलतमन्द बनाने के लिए। मै पाकिस्तानी हुक्मरानो से बार-बार कहता रहा हू कि मुझे समझाओ कि अगर एक यूनिट से पजाब के गरीब तबको को भी कोई अदना-सा[3] फायदा हो तो मैं उसकी ताईद

---

१. अत्याचार, २. बाढ की रोकथाम ३. मामूली-सा

करने को तैयार हू । आज इस्लाम यह है कि खान अब्दुस्समद खान को चौदह साल बाद जेल से रिहा किया गया और रिहाई के पाच दिन बाद ही उनको और उनके साथ बहुत से दूसरे कौम-परस्तो को गिरफ्तार कर लिया गया । आज इस्लाम यह है कि शहजादा अब्दुल करीम मुल्क व कौम की खिदमत के गुनाह पर खान अब्दुस्समद खान के साथ गिरफ्तार हुए थे, जो आजतक जेल मे है । पाकिस्तानी हुक्मरान हमारी नीयत और हमारे इरादे से बखूबी वाकिफ है और इस बात को भी समझते है कि अगर हम मुत्तहिद[१] हो तो पाकिस्तान और ज्यादा ताकतवर होता है । चुनाचे इस बरस पिशावर मे पाकिस्तान कौमी अवामी पार्टी की कान्फ्रेस ने भी इस बात की ताईद की । मगर पाकिस्तानी हुक्मरानो ने जाती मफादात की बिना पर अपने कानो को बहरा बना रखा है । मै अठारह साल पाकिस्तान मे रहा और चार बरस से अफगानिस्तान मे हू । लेकिन इस तवील मुद्दत मे भी मुझे पाकिस्तान के हुकमरानो की तरफ से कोई तसल्ली-बख्श जवाब नही मिल सका । जब यू० एन० ओ० के सेक्रेटरी श्री ऊथाट काबुल आये तो मैने उनसे कहा था कि पाकिस्तानी हुक्मरानो को इस बात पर तैयार करो कि आग लगने से पहले वह हमारे मुतालबात मजूर कर ले । आप लोगो को याद होगा कि गुजिश्ता[२] बरस मैने इसी जगह अपनी तकरीर मे अमेरिका, रूस और चीन को भी पुकारा था कि वह हमारे और पाकिस्तान के दरमियान सालसी[३] करे । अब मै आखिरी मरतबा पाकिस्तान से कहता हू कि वह हमे भाईचारे का हक दे दे तो बहुत अच्छा होगा, वरना बगाल तो अपनी आजादी की जद्दोजहद[४] कर ही रहा है, हम पख्तून, सिन्धी और बिलोच मजलूम भी इस बात पर गौर करेगे कि हम क्या करे? मोजूदा हालात मे पाकिस्तान मे रहे या अलग हो जाय । मै पाकिस्तानी हुकूमत से कहता हू कि वह हमे मजबूर न करे कि हम तीनो भाई एक होकर एक फैडरेशन बनाने की गरज से एक हिफाजती हकूमत बनाने का रास्ता इख्तियार करे ।

---

१ एक २ गत, ३ बीच-बचाव ४ सघर्ष

आखिर मे मैं आप लोगो की मुहब्बत और हमदर्दी का तहे-दिल से शुक्रिया अदा करता हूं।

पख्तूनिस्तान जिन्दाबाद!

२१ अगस्त, १९६८

५

मै यहां किसलिए आया हूं

(दिल्ली के रामलीला मैदान मे बादशाह खान का भाषण)

सदर साहिब और बहनो, भाइयो

आपने बहुत-सी तकरीरे सुनी। आप थके हुए होगे। जो कौमे बाते बहुत करती हैं, अमल नही करती, वे कौमे अपने मकसद को नही पहुँच सकती। हमेशा वे कौमे कामयाबी की मजिल पर पहुँचती है, जो बाते कम करे और अमल ज्यादा करे।

मैं सिर्फ चन्द बाते अर्ज करूगा। उम्मीद है कि आप इनपर गौरो फिकर करेगे। २२ साल के बाद आज मैं हिन्दुस्तान आया हूं। इस २२ साल के दौरान मे जो हम लोगो पर गुजरी है, वह शायद आपको मालूम न हो। २२ साल के बाद आपकी मुहब्बत और गाधीजी की याद मुझे यहा खीच कर लाई है।

अखबारात हिन्दुस्तान के हो या पाकिस्तान के, मेरे बारे मे अजीब-अजीब बाते लिखते है। इसलिए मैं खुद अपना तारुफ करता हू। कि मै यहा क्यो आया! मै यहा जो आया हूं तो आपके लिए आया हू। इसलिए नही आया हू कि आपसे कुछ पैसे मागता हू। इसलिए नही आया हू कि पख्तूनिस्तान के मामले मे आप मेरी मदद करे। मै समझता हू कि जैसा पख्तूनिस्तान हम चाहते है, वैसा पख्तूनिस्तान हमको मिलनेवाला है।

फिर किस गर्ज से, किस मतलब के लिए, यहा आया हू ? मैं यहा इसलिए आया हू कि आपको महात्मा गाधी ने जो सबक दिया था, उसकी याद-दिहानी कराऊ। इसपर आपने कहा तक अमल किया ? इसलिए आपके यहा आया हू कि आप हिन्दुस्तान की तारीख देखे, इसपर गौर करे। अग्रेज तिजारत के लिए आया था। बादशाह बन गया। इस बात को सोचो, इसपर गौर करो। मैं हिन्दुस्तान मे जो हालत देख रहा हू,

इसमे मुझे परेशानी हो रही है। इतने वडे-वडे लोग हिन्दुस्तान मे है। नही देख रहे है कि हिन्दुस्तान किस तरफ जा रहा है। मैं इसलिए। आया हूं कि हिन्दुस्तान मे जो हालात पैदा हो गये है, इनके बारे मे आपसे सलाह-मशविरा कर सकू। आप देखते है कि हम किधर जा रहे है। मैं आपको वताना चाहता हूं कि जव मैं जलालाबाद मे था तो हिन्दुस्तान का एक नेता वहा आया। मुझसे मिला। मुझसे पूछने लगा, कुछ मैने कहा, कुछ उसने कहा। उसने कहा, "योरुप जा रहा हूँ।" मैने पूछा, "क्यो जा रहे हो?" कहा, "महात्माजी की जन्मसदी के लिए जा रहा हू।" मैने कहा, "तुमने सोचा है कि आज की दुनिया ऐसी दुनिया है कि एक-एक मिनट की खवर सवको हो जाती है। और वह भी योरुप मे। वहा जाकर उनसे क्या कहोगे, यह अदम तशद्दद, यह हमदर्दी, यह प्रेम, यह मोहव्वत, जो गाधीजी का पैगाम था, हिन्दुस्तान मे है? यह अमन नही, यह अदम तशद्दुद नही, यह हमदर्दी, यह प्रेम नही यह मोहव्वत नही। मेरी तो राय यह है कि आप वक्त जाया कर रहे हैं। मेरी राय मे तो आप वहा जाकर वक्त जाया करेगे। वे लोग आप को देखकर हँस देगे। अभी जव मैं यहा आ रहा था तो वहुत से लोग जो पाकिस्तान मे थे, हिन्दुस्तान मे मेरे आने की मुखालफत करते थे। उन्होने कहा, "देखो हिन्दुस्तान मे क्या हो रहा है? तुम कहा जा रहे हो।"

उन्होने कहा, "हिन्दुस्तान ने गाधीजी की तालीम, अहिंसा, मोहव्वत, हमदर्दी, अखवत को भुला दिया है। हिंद से मुझे तार भी मिले कि देखो, हिन्दुस्तान मे क्या हो रहा है। गाधीजी की जन्म-सदी मे क्या हो रहा है। यहा के प्रोपैगंडा से थोडा गुस्सा हुआ। ख्याल करने लगा कि जाऊ या नही। अगर जाऊ तो इसमे क्या फायदा होगा? जनता का क्या फायदा होगा? क्या नुकसान होगा? मेरा आना-जाना किसी दूसरी गरज से नही, लोगो की भलाई की गरज से है। लोगो ने मुझे राय दी कि तुम यहा प्रोटेस्ट कर लो। वहा मत जाओ। यहा मैं प्रोटेस्ट करू तो हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का क्या फायदा होगा? वहा जाकर प्रोटेस्ट करूगा तो हिन्दुस्तान या पाकिस्तान का क्या फायदा होगा। मैं इस नतीजे पर पहुचा कि मुझे हिन्दुस्तान जाना चाहिए।

प्रोटेस्ट करना है तो वहा होना चाहिए । यहा प्रोटेस्ट करूगा, पाकिस्तान मे बैठकर, इससे क्या फायदा होगा । हिन्दुस्तान मे प्रोटेस्ट करूगा तो मौका मिलेगा हिन्दुस्तान के नेताओ के सलाह-मशविरे का । मैं जनता के लिए आया हू ।

इस नतीजे पर पहुचने के लिए आया हू और खिदमत के लिए आया हू मैं तो खिदमतगार हू । मै सबका खिदमतगार हू । इसलिए आया हू । कि आपसे बैठकर मशविरा करू । मेरी खिदमत की जरूरत है तो मैं हाजिर हू । मैं जिस प्रोटेस्ट के लिए आया हू वह प्रोटेस्ट है, जो बेहद तशद्दुद और फिरकावाराना जज्बात के खिलाफ है, नफरत के खिलाफ है । मैंने फैसला किया है कि मैं इसका कफ्फारा अदा करूगा । मैंने यह फैसला किया है । डाक्टरो ने कहा कि तुम बीमार हो, लेकिन मैंने ३ दिन का उपवास करने का फैसला किया है । कल सुबह ७ बजे से मैं उपवास शुरू करूगा ।

यह मेरी अर्ज़ थी, वह मैंने आपकी खिदमत मे पेश की है ।

२ अक्तूबर १९६९

५

मेरी सेवाएं हाजिर है

[माननीय संसद के दोनो सदनो के सदस्यो के सामने दिया गया भाषण]

जनाब सदर और हिन्दुस्तानी ऐवानो (सदनो) के माननीय मेम्बरो,

मैं आपका बेहद मशकूर (कृतज्ञ) हू कि आपने मुझे इस गर्ज से दावत दी कि मैं अपने खयालात आपके सामने पेश करू ।

आपको मालूम होगा कि २३ साल के बाद मैं इस देश मे आया हू। इस दौरान मेरा अक्सर वक्त जेलो मे गुजरा है । फिर भी यहा के हालात से मुझे आगाही (जानकारी) हो जाती थी ।

मुद्दत से मेरी आरजू (इच्छा) थी कि हिन्दुस्तान आऊ और यहा के हालात अपनी आखो से देखू, आजादी के बाद इस मुल्क मे हमारे हिन्दुस्तानी भाइयो की क्या हालत है, कितनी तरक्की हुई है, गरीबो की जिन्दगी कुछ बदली है या नही, अमीरो की जिन्दगी में तबदीली आई है तो क्या आई है ? मैं चाहता था कि कोई मौका मिले कि हिन्दुस्तान आऊ और उन भाइयो को मिलू जिनके साथ तहरीके आजादी (स्वाधीनता-आदोलन) में बरसों काम किया, जिनके साथ जेलो मे रहे और किस्म-किस्म की तकलीफे और मुसीबतें उठाई और जिस आजादी का ख्वाब हमने देखा था उसकी हकीकत देखू ।

जानेवाले है। इसलिए दोस्तो, इससे वेहतर मेरे लिए क्या मौका हो सकता था कि मैं हिन्दुस्तान आऊ और गाधीजी की जन्म-सदी मे हिस्सा लू। गाधीजी के साथ मेरा वहुत करीवी ताल्लुक था। ऐसे मेहरवान दोस्त की जन्म-सदी मनाई जाय और मैं शरीक न होऊ, यह कैसे हो सकता था।

मैं चाहता हू कि आपको वताऊ कि मै गाधीजी से कैसे मुतास्सिर (प्रभावित) हुआ। १६२८ मे कलकत्ता मे आल इडिया काग्रेस कमेटी और खिलाफत कमेटी की मीटिंग हो रही थी। मैं खिलाफत कमेटी मे था और काग्रेस की सवजेक्ट्स कमेटी की मीटिंग देखने के लिए गया था। उस वक्त गाधीजी तकरीर कर रहे थे। और एक नौजवान, जिसका नाम रामा था, दौराने तकरीर वार-वार मुखिल (वाधक) हो रहा था। कहता था, गाधीजी, "यू आर ए कावर्ड" (आप वुजदिल है)। गाधीजी उसे सुनकर हँस देते और अपनी तकरीर जारी रखते थे। मैं इससे वहुत मुतास्सिर हुआ।

आपको मालूम ही होगा कि हिन्दुस्तान की तहरीके आजादी मे हमारा वहुत वडा हिस्सा रहा है। खुद मैं अग्रेजो की जेलो मे पद्रह साल रहा और हमारे साथ हमारे हजारो खुदाई खिदमतगार जेल मे गये और तरह-तरह के जुल्म और मुसीवते वर्दाश्त की और जान और माल की भारी कुर्वानिया दी।

हम क्योकर काग्रेस मे शरीक हुए, इसके वारे मे यहा मैं मुख्तसिर अल्फाज मे कुछ अर्ज करूगा। १६२६ मे अपने मुल्क और कौम की इस्लाह के लिए हमने एक सोशल तहरीक (सामाजिक आदोलन) खुदाई खिदमतगार के नाम से शुरू की, क्योकि हम हर लिहाज से पीछे रह गये थे। यह तहरीक मुल्क व मिल्लत (देश व धर्म) मे हरदिल-अजीज हो गई। हमारी वेगरज और वेलौस खिदमत ने लोगो को हमारी तरफ खीचा। इससे अग्रेज को वहुत वेचैनी हुई। इसने हमपर वहुत जुल्म किये और हमे परेशान किया और अपने जुल्मो से हमारी सोशल तहरीक को सियासी तहरीक (राजनैतिक आदोलन) वना दिया।

हम काग्रेस के साथ कैसे मिले? १६३५ मे अग्रेज ने हमे गिरफ्तार करके गुजरात जेल मे रख दिया और हमारे लोगो पर जुल्म व तशद्दद

किया तो हमारे दो साथी गुजरात जेल मे आकर हमसे मिले। उन्होने हमे बताया कि हुकूमत ने हमारे सूबे का मुहासरा (घेरा) कर लिया है। न किसी को बाहर जाने देते हैं और न किसी को अन्दर आने देते है। उन्होने पूछा कि अब वह क्या करे। हम लोगो ने सलाह दी कि मुस्लिम लीग से जाकर वह मिले। वह लोग गये और अलग-अलग लोगो से मिले। लेकिन मुस्लिम लीग वाले हमारी मदद करने को तैयार नहीं हुए। फिर हमने यह सलाह दी कि वह जाकर काग्रेस से मिले। वह मिलकर आये और उन्होने बताया कि काग्रेस हमारी मदद करने को तैयार है। बशर्ते कि हम उनसे मिल जाय। हम काग्रेस मे मिल गये और हमारी यह सोशल तहरीक सियासी तहरीक बन गई। इस नई सूरते हाल ने अग्रेजो को परेशान किया। उन्होने हमे काग्रेस से जुदा करने की पूरी कोशिश की, लेकिन हमने काग्रेस नही छोडी। हमसे अग्रेज ने कहा कि अगर हम काग्रेस को छोड दे तो वह हर तरह हमारी मदद करेगे। दूसरे सूबो को जितना पोलिटीकल रिफार्म (राजनैतिक सुधार) मिलेगा, उससे ज्यादा हमको देगे। लेकिन हमने काग्रेस छोडने से इन्कार कर दिया। हमने कहा कि हम मुनाफिक (नाचाकी बढाने वाले) नही है, मुनाफिकत नही करेगे। बाद मे जिन्नासाहब ने भी कोशिश की, लेकिन हमने काग्रेस नही छोडी। अगर काग्रेस हमे पहले से आगाह कर देती कि हम तुम्हे छोड रहे है तो हम अग्रेजो और जिन्ना से अच्छा सौदा कर लेते।

गाधीजी ने और मैने मुल्क के बटवारे की आखरी वक्त तक वर्किग कमेटी मे मुखालफत की, लेकिन हमारी किसीने सुनी नही। जब बटवारे का फैसला हो गया तो मैने गाधीजी से कहा कि आपने हमे भेडियों के हवाले कर दिया। उस वक्त गाधीजी ने हमसे कहा था कि अगर तुम्हारे साथ ना-इन्साफी या ज्यादती हुई तो हिन्दुस्तान तुम्हारे हकूक (अधिकारो) के लिए लडेगा। इसके बाद के वाकआत मे यहा मैं नही जाऊगा। हम भी उन्हे जानते हैं और आपको भी वह अच्छी तरह मालूम है। लेकिन क्या यह आपका इखलाकी (नैतिक) फर्ज नही था कि हमारी मदद करते।

अब जबकि मैं यहा आनेवाला था, उस वक्त हमसे अपने कारकुनो (कार्यकर्त्ताओ) ने कहा कि देखो, गुजरात मे क्या हो रहा है और तुम हिन्दुस्तान जा रहे हो। हमने उनसे कहा कि मैं हिन्दुस्तान मे जाकर आवाज उठाऊगा। वहा जाकर लोगो से पूछूगा कि तुमने गाधीजी और उनके सवक को इतनी जल्दी भुला दिया। पिछले छ हफ्ते से मुल्क के अन्दर यही वात मै कह रहा हू।

अहमदावाद का फिसाद तो इस मुल्क मे फिसादो की जजीर की आखरी कडी है। इससे कवल (पूर्व) भी इस मुल्क मे मुत्अदद (अनेक) फिसादात हो चुके है—मजहव के नाम पर, हिन्दू-मुसलमान के नाम पर जवलपुर, राची, राउरकेला, जमशेदपुर, इन्दौर, मालेगाव, पूना वगैरा-वगैरा, चन्द मिसाले है। इन फिसादात का सवसे ज्यादा अफसोसनाक पहलू यह है कि इनमे वहुत वडे पैमाने पर तशद्दद (हिंसा) से काम लिया गया, जो गाधीजी की तालीमात के सरासर खिलाफ है। इसमे हजारो लोग मारे गये, हजारो मकान जलाये गए और हजारो दूकाने लूटी गई, यहा तक कि अवादतगाह भी वर्वाद की गई, लेकिन किसीको सजा नही मिली। तो ऐसे हालात मे फिरकेवाराना झगडे कैसे खत्म होगे। कहा जाता है कि मुलजिम कानून की गिरफ्त मे नही आता। ऐसे कानून से क्या फायदा! कानून तो मुल्क के अमन और इसाफ के लिए होता है, न कि दिखावे के लिए। मुझे तशद्दद देखकर दुख होता है और फिर जव यह तशद्दद महजव के नाम पर हो तो और भी अफसोसनाक वन जाता है, क्योकि मजहव तो दुनिया मे इन्सानियत, अमन, मोहब्बत, प्रेम, सच्चाई और खुदा की मखलूक की खिदमत (ईश्वर के वन्दो की सेवा) के लिए आता है। तशद्दुद मे क्या है—नफरत। और एक मजहवी और धार्मिक शख्स तो नफरत कर ही नही सकता। दोनो का मजहव के साथ कुछ ताल्लुक नही। खुदगरज लोग दौलत और इक्तदार (सत्ता) के लालच से लोगो को गलत रास्ते पर डाल देते है।

फिसादात के सिलसिले मे एक वात और भी है। जो लोग फिसादात मे हिस्सा लेते है, उनको सख्त-से-सख्त सजा मिलनी चाहिए, वरना शरारती लोग हर वक्त मुल्क के अमन को खतरे मे डाल सकते है। मैने

सुना है कि आपके एक साबिक (भूतपूर्व) चीफ जस्टिस ने एक रिपोर्ट मे लिखा है कि गुजिश्ता (बीते हुए) सालो के फिसादात मे कत्ल व गारतगरी के जुर्म मे किसी एक को भी फासी की सजा नही हुई। अगर यह दुरुस्त है तो आप इन फिसादो से कैसे निजात पायगे।

फिसादो का एक अफसोसनाक पहलू यह भी है कि खुदगरज लोग वक्ती फायदा हासिल करने की गर्ज से तशद्दुद, नफरत और झगडे-फिसाद को हवा देते है। और फिर गुनाहगारो के जरायम (अपराधो) को छुपाने की तरह-तरह से कोशिश करते है। इससे किसी जमात को वक्ती तौर पर शायद कुछ फायदा हो जाय, लेकिन इससे न कौम का नाम ऊंचा होता है न मुल्क मे सियासी इस्तेहकाम (राजनैतिक स्थिरता) पैदा होता है। न इक्तसादी तरक्की (आर्थिक प्रगति) मुल्क व कौम की होती है। अफसोस की बात है कि रोग हमारे पूरे मुल्क को लग गया है। आपकी तवज्जुह इन खराबियो की तरफ जानी चाहिए। मुझे काका-साहब ने बताया कि मैं अभी जापान से लौटा हू। जापानी कहते थे कि पहले हमारे दिलो मे हिन्दुस्तान की बहुत इज्जत थी और मोहब्बत भी। अब मोहब्बत तो है, इज्जत नही। फिरकेवाराना फिसादात और तश-द्दुद के इस्तेमाल की वजह से सारी दुनिया मे हमारी इज्जत न रही और रुसवा (अपमानित) हुए।

इस जहनियत को खत्म करने की कोशिश करोगे या ऐसे काम करोगे, जिससे दो कौमी नजरिये को ताकत मिले।

मुझसे वहुत काविल गैरमुल्की लोग कहते थे कि बुद्ध हिन्दुस्तान मे पैदा हुए, लेकिन बुद्धिज्म हिन्दुस्तान से निकाला गया, वाहर मुल्को मे वह फैला, लेकिन हिन्दुस्तान से खत्म हो गया। ऐसा ही गाधी के साथ हुआ। गाधी के नजरिये से अकीदत्त (आस्था) रखनेवाले हिन्दुस्तान से बाहर पैदा हो रहे है। खुद हिन्दुस्तान मे गाधी खत्म हो गया। मैं उनको जवाव दिया करता था कि बुद्ध का जमाना और था और गाधी का जमाना और है। गाधीइज्म हिन्दुस्तान से खत्म नही हो सकता। जो लोग इसको खत्म करने की कोशिश करेगे, वे अपना नुकसान करेगे, मुल्क का नुकसान करेगे और खुद खत्म हो जायगे।

एक मुल्क की ताकत हुब-अल्वतनी (देशभक्ति) और वाहमी इत्त-फाक (पारस्परिक एकता) पर मवनी (आधारित) होती है। इत्तफाक की बुनियाद इन्साफ और मसावात (समानता) होती है। हर शख्स को लगना चाहिए कि मुल्क के फायदे मे उसका फायदा और मुल्क के नुक-सान मे उसका अपना नुकसान है। यह उस वक्त होगा जव हर शख्स को महसूस होगा कि उसके मसावी हकूक (समानाधिकार) है और उसके साथ इन्साफ होगा। अगर अक्सरियत (वहुमत) अकलियत (अल्पसख्या) को शक की नजर से देखती है और इसे कमजोर रखने के लिए उसे इसके हकूक से महरूम रखती है तो मुमकिन है इससे अक्स-रियत अपने इक्तदार (सत्ता) को वढाले, मगर मुल्क इससे कमजोर होगा। अगर कोई शख्स या गिरोह वफादार नही है तो वेशक उसको ढूढ निकालो और कुसूर सावित होने पर उसे मुनासिव सजा दो, मगर वे-एतमादी (अविश्वास) करके उसको जायज हकूक से महरूम रखना नाइन्साफी होगी।

आप लोगो ने सोशलिज्म को अपना नस्व-उल-ऐन (लक्ष्य) वनाया है। सोशलिज्म कोई तर्जे-निजाम (राज्य-विधान) नही, तरीके जिन्दगी (जीवन-चर्या) है। अगर सोशलिज्म हाकिमो की जिदगी और हुकूमत के तर्जे-अमल मे नही आता तो वह एक खयाली चीज वन जाता है।

मुल्क मे जाहोजलाल (वैभव) या ऐश-व-इशरत (ऐश्वर्य) के सामान बढाने से सोशलिज्म नही हो जाता, बल्कि आम रिआया की बुनियादी जरूरियात की कमी दूर करने, रोजगार के वसायल (साधन) मुहेया करने, गरीब की मुहताजी दूर करने का नाम सोशलिज्म है। जबतक गरीबो की तकलीफे दूर नही होती तबतक उनकी तकलीफ मे शरीक होकर उसमे हिस्सा बाटने का नाम सोशलिज्म है। बेशक राजधानी मे ऊचे-ऊचे महल खडे हो रहे है, मगर हिन्दुस्तान के देहातो मे गरीब की झोपडी मे चिराग जलते है या नही—क्या इसे भी आपने देखा है ?/

गाधीजी को तवक्को (आशा) थी कि आजादी आने पर हिन्दुस्तान का इफलास (दारिद्रय) दूर हो जायगा। सरकारी फिजूलखर्ची बन्द होगी। शराबखोरी, अफीम, चरस वगैरा नशा-आवर (नशीली) चीजो की बुराई से रिआया को निजात मिलेगी। शराब के मामले पर हम पख्तूनो ने कितनी मुसीबते उठाई। लेकिन २३ साल की काग्रेस की हुकूमत मे इसकी बदिश नही हुई। अग्रेजी हुकूमत की तरह आबकारी की आमदनी से सरकारी खजाना भरने की कोशिश नही की जायगी। आजादी, जमहूरियत (लोकतत्र) और सोशलिज्म—लोगो को नेकी, रास्ती (सत्य) खादारी, (सहिष्णुता) परहेजगारी और दियानतदारी के साथ जिदगी बसर करने के लवाजमात मुहैया करने का जरिया है, जिसे हर शख्स अपनी मेहनत के नतीजे के तौर पर हासिल कर सके और जो आजादी से महरूम न रखा जाय। अगर ये सब चीजे आप नही कर पाते तो मैं कहूगा कि आपकी आजादी, जमहूरियत (लोकतत्र) और सोशलिज्म असलियत से खाली, महज एक बेमानी नारा है।

हजरत अबूबकर, जो इस्लाम के पहले खलीफा थे, जब खलीफा मुतखिब (निर्वाचित) हुए तो उन्होने मिम्बर (मच) पर खडे होकर कहा कि मैं आप ही जैसा इन्सान हू। लेकिन मैं आपसे कहता हू कि जबतक मैं सीधे रास्ते पर चलू, आप मेरा साथ दे। अगर मैं सीधे रास्ते से भटक जाऊ तो आप मुझे रोककर सीधे रास्ते पर ले आय। वह जब खलीफा मुकर्रर हुए तो उन्होने सबकी तनख्वाहे एकसा मुकर्रर कर दी। बडे-बडे सहाबा (वृद्धजन) आये। उन्होने कहा कि खुदा ने दुनिया को

फर्क से पैदा किया। हजरत ने कहा, फर्क नेकी और परहेजगारी मे है, पेट मे नही। पेट की ख्वाहिश (इच्छा) और जरूरत सबकी यकसा (समान) है। ऐसी मिशाले हिन्दुस्तान मे भी मौजूद है। एक मर्तबा आपकी अहलिया (धर्मपत्नी) ने फरमाया कि मेरी ख्वाहिश शीरीनी (मिठाई) खाने की होती है। आपने जवाब दिया—हमारे हिस्से के वजीफे मे इसकी गुजायश नही। कुछ अर्से के बाद आपकी अहलिया ने आपको कुछ रकम दी और कहा कि इस पैसे की शीरीनी मगा दो। खलीफा अबूबकर ने दरयाफ्त किया कि ये पैसे कहा से आये ? अहलिया ने जवाब दिया, रोजमर्रा के खर्च से बचाये है। इसपर खलीफा अबूबकर सिद्दीक ने अल्लाह से मुआफी मागी कि इस वजीफे से कम रकम मे हम गुजारा कर सकते थे। लेकिन हमने बैत-अल्माल (सरकारी कोष) से ज्यादा लिया। इसलिए ऐ अल्लाह, मुझे माफ कर दे।

हिन्दुस्तानी पार्लमिट के मुअजिज (माननीय) मेम्बरो, दास्ता (कहानी) जरा लम्बी हो गई। लेकिन ये सब बाते मैं इसलिए बताना चाहता हू कि मै हिन्दुस्तान के लिए अजनबी नही हू। यह आजाद हिन्दुस्तान और यह बावकार (गौरवपूर्ण) पार्लमिट हम सबकी मुश्तरिका जद्दोजहद (साझे-सघर्ष) का नतीजा है। इसलिए मुझे इस देश से, यहा की जनता से और आप सबसे गहरा ताल्लुक है। और इसी तअल्लुक की बिना पर आपको अपना समझते हुए अपने खयालात और तास्सुरात (विचारो और मनोभावो) का इजहार किया है। पश्तू जबान का मुहावरा है—दोस्त रुलाता है और दुश्मन हँसाता है। मैंने इस मुल्क मे जो कुछ कहा है और जिस तरह मैंने यहा की हालत पर अपने दुख और बेचैनी का इजहार किया है, यह इसलिए कि इस मुल्क के लोग मेरे अपने लोग है। और उनकी हालत मुझे बेचैन करती है और मेरी आखे नम हो जाती है। मैं एक खुदाई खिदमतगार हू—खुदा की मखलूक (जनता) चाहे वह दुनिया के किसी गोशे मे हो, खिदमत की मुस्तहक है। इसलिए जब कभी भी आपको मेरी खिदमत की जरूरत होगी तो आप मुझे अपने साथ पायगे।

२४ नवम्बर, १९६९

●

७२	१५	अत	अत
७७	१८	न्यूरेम्वर्स	न्यूरेम्वर्ग
८१	७	नही	कहा
८७	१८	उतमनजाई	उतमानज़ई
८७	२०	"	"
९६	४	वेपनाह	वेहद
१०५	२०	अनवर-उल-हक	अनवार-उल-हक
१०६	६	दारुलअमन	दारुलअमान
१०६	११	"	"
१११	७	निरन्तर	निश्तर
११८	८	करने पर	करने की आवश्यकता पर
११८	११	वढाई	वेतहाशा पूरी की
१२०	२१	मक्का	गल्ले
१३७	२	वह तो अपनी अतरात्मा के अनुसार चलते थे	उन्हे उनकी अत-रात्मा काटती थी
१५५	८	पठान	पठान जैसे
१६३	१६	हकमी	हकीमी
१६५	५	"	"
१७३	५	कुदरत	तकदीर
१८५	६	जमहूरिया	जमहूरियत
२१५	१६	योमे-पाकिस्तान	योमे-पख्तूनिस्तान

●

सरहदी गांधी

आजादी के उन योद्धाओ मे से है, जिनके हमारी आजादी की जद्दोजहद मे हिस्सा लेने के कारण हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनो अत्यन्त ऋणी है। लेकिन वह केवल आजादी के सेनानी नही, इससे वढकर महात्मा गाधी के अहिंसा-मत्र के व्याख्याता है। उन्होने उसे जिस तरह विशाल क्षेत्र मे अपनाया और अमली जामा पहनाया है, उसकी वरावरी सारे जगत मे आज शायद कोई नही कर सकता।

वह एक सच्चे मुसलमान है, जिनकी उदारता और सहिष्णुता सर्व-धर्म-समानत्व की उनकी भावना के रूप मे हम देखते है। वह इन पन्नो मे सादगी और शालीनता, आत्मत्याग और चरित्र-शीलता के पुतले के रूप मे हमारे सामने आते है।

—जाकिर हुसेन